THE LIVES OF THE PRESIDENTS

OF THE

INDIAN NATIONAL CONGRESS.

कांग्रेस-चरितावली

अर्थात्

भारतीय-राष्ट्रीय सभा के सभापति

महाशयों के जीवन चरित



ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा

लिखित ।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग।

सन् १९०८ ई०

 [मूल्य १)



दादा भाई नौरोजी

THE INDIAN PRESS, ALLAHABAD

TO

DADABHAI NAOROJI, Esqr.,

THE GRAND OLD MAN OF INDIA,

THE PIONEER OF OUR NATIONAL MOVEMENT,

THE MAN WHO HAS GIVEN US THE IDEAL OF SWARAJYA,

WHOSE OWN LIFE HAS BEEN ONE INCESSANT FIGHT TOWARDS

ATTAINING THAT IDEAL,

WHOSE LIFE AND WORK ARE THE

INSPIRATION OF MILLIONS OF OUR COUNTRYMEN

PREPARING THEMSELVES FOR THAT GRAND

CONSUMMATION OF OUR HOPES AND EFFORTS

— SELF-GOVERNMENT OR SWARAJYA —

THIS BOOK IS

AS A TOKEN OF GRATITUDE, REVERENCE AND AFFECTION

HUMBLY DEDICATED.

भारतवर्ष के देशभक्त,

राष्ट्रीय आन्दोलन के जन्म दाता,

हमारे देश के सामने स्वराज्य का आदर्श रखने वाले, अपने जीवन
के निरन्तर संग्राम से उस आदर्श को पाने का यत्न करने
वाले, अपने जीवन और लेखों और वक्तृताओं से
हमारे देश के उन लाखों मनुष्यों को उत्तेजित
करने वाले जिनकी आशाओं और यत्नों
का एक मात्र आदर्श स्वराज्य है;

ऐसे देशभक्त, सदा माननीय दादाभाई नौरोजी

की सेवा में

यह पुस्तक

कृतज्ञता, भक्ति, और प्रेम के चिन्ह की भांति

सादर समर्पित

है।

कांग्रेस की बाबत एक अङ्गरेज़ विद्वान की राय।



मि० स्विनी सन् १९०२ ई० में, जब कांग्रेस की बैठक अहमदाबाद में हुई थी तब उसमें वे उपस्थित थे। कांग्रेस की बाबत आपने अपनी यह राय प्रगट की:—

"कांग्रेस को देख कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। एंग्लो-इण्डियन लोग कहा करते हैं कि कांग्रेस में राजनैतिक विषयों को जानने वाले कोई प्रभावशाली पुरुष नहीं हैं। परन्तु यह उनका मिथ्या आक्षेप है। मैंने कांग्रेस में चारों दिन हाज़िर रहकर उसकी कार्रवाई स्वयं अपनी आखों देखी है। मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूं कि ये लोग अपना काम उत्तम रीति से करते हैं। अंगरेज़ी भाषा में व्याख्यानों को सुन कर मुझे तो यही मालूम होता था कि वे लोग अपनी मातृभाषा में वक्तृता दे रहे हैं। यहां प्रत्येक प्रान्त और प्रत्येक जाति के प्रतिनिधि उपस्थित थे। उत्तर भारत के विद्वान पण्डित, अंगरेज़ी विश्वविद्यालयों के ग्रेजुएटों के साथ साथ बैठे थे; हिन्दू मुसलमानों के साथ साथ बैठे थे; मराठे, बंगाली, पंजाबी, गुजराती और मदरासी लोग एक स्थान में परस्पर भेंट करते हुए दिखलाई पड़ते थे। नेटिवक्रिश्चियन और ज्यू (यहूदी) डाक्टर, पारसी और मुसलमान व्यापारी भी वहां थे। वास्तविक में यह एक ऐसा स्थान है कि जहां भारत के भिन्न भिन्न प्रान्तों के स्वराज्य सम्बधी विषयों पर विचार करने वाले सब लोग एकत्रित हो सकते हैं। इससे इस देश की राज्य सम्बन्धी जन-सम्मति प्रबल होने की सम्भावना है।"

———:o:———

प्रस्तावना ।

संसार में चित्र और चरित्र ये ही दो ऐसे अद्भुत पदार्थ हैं कि जिनके कारण संसार का अस्तित्व है। तत्ववेत्ता लोग इस संसार को माया और जीव से मिल कर बना हुआ बतलाते हैं। वे लोग माया और जीव की परिभाषा नाना प्रकार से वर्णन करते हैं। परन्तु हमारी समझ में, माया और जीव का अर्थ, चित्र और चरित्र इन दोनों में पूरे तौर से घट सकता है। क्योंकि संसार में कोई ऐसी जगह ख़ाली नहीं जहां माया और जीव का संचार न हो। इसी प्रकार संसार में जितने पदार्थ हैं वे सब चित्र और चरित्र से ख़ाली नहीं हैं। चित्र और चरित्र ये दोनों पराक्रम का फल हैं। किसी विलक्षण गुण के योग के बिना चित्र अथवा चरित्र की उत्पत्ति नहीं होती। इसकी उत्पत्ति का क्रम इस प्रकार है कि पहले चरित्र फिर चित्र। क्योंकि संसार में इसी प्रकार का रूप इस का दिखाई पड़ता है। सच्चरित्र होने से ही चित्र की चाहना होती है। संसार में बिना उत्तम चरित हुए चित्र नष्ट हो जाता है। मनुष्य अथवा देवताओं के जो आप चित्र देखते हैं उन सब का क्रम इसी प्रकार का है। चित्र मनुष्य के हाथ की प्रकृति है और चरित्र मन की। चित्र मूर्ति पूजा है और चरित्र मानस पूजा। चित्र सगुण भक्ति का साधन और चरित्र निर्गुण भक्ति का साधन है। यदि संसार से चित्र नष्ट हो जांय तो चरित्र का कहीं पता न चले। और चरित्र के बिना चित्र की उत्पत्ति ही नहीं। संसार में यह कैसा विलक्षण व्यापार है। इसी लिए यह कहना पड़ता है कि संसार में चरित्र प्रधान और चित्र गौण है। पाश्चात्य लोगों की कृपा से आज कल एक नई विद्या का प्रादुर्भाव हुआ है। उसके द्वारा यह सिद्ध किया जाता है कि मनुष्य के अन्तःकरण के गुण और उसके शरीरावयव, इन दोनों में परस्पर बहुत कुछ सम्बन्ध है। अतएव चरित्र के ऊपर से चित्र की कल्पना की जा सकती और उसका कुछ न कुछ प्रतिबिम्ब

उतारा जा सकता है। परन्तु चित्र के ऊपर से चरित्र की कुछ भी कल्पना नहीं हो सकती और न चित्र पर से किसी प्रकार का अनुमान इस विषयका लगाया जा सकता है। गुसाईं तुलसीदास जी ने भी नाम की महिमा रूप अर्थात चित्र से अधिक वर्णन की है। गुसाईं जी ने लिखा है:—

"देखिय रूप नाम आधीना * रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना।
रूप विशेष नाम बिन जाने * करतल गत न परहिं पहिंचाने।
सुमिरिय नाम रूप बिन देखे * आवत हृदय सनेह विशेषे।
नाम रूपगति अकथ कहानी * समुझत सुखद न जात बखानी।
अगुण सगुण बिच नाम सुसाखी * उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी।"

इन सब बातों के लिखने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के चरित्र के पश्चात् उसके चित्र की क़दर होती है। इसी कारण हम ने उन सज्जन पुरुषों के चरित्रों का संग्रह किया जिनके चरित्र अनुकरणीय और चित्र दर्शनीय हैं। भारतवर्ष में आज २३ वर्ष से भारतवासियों के दुःख दूर करने के लिए 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस'—'भारतीय-राष्ट्रीयसभा'-होती है। उस सभा द्वारा भारत के दुःख निवारणार्थ, भारतीय प्रजा के प्रतिनिधि गण सरकार से प्रार्थना करते हैं और प्रजा के दुःखों का समाचार सरकार के कानों तक पहुंचाते हैं। हरसाल एक भारतहितैषी उस सभा के लिए सभापति चुना जाता है। उन्हीं सभापतियों के चरित संक्षेप रूप से इस पुस्तक में दिए गए हैं। क्योंकि जो लोग अंगरेज़ीभाषा नहीं जानते उन्हें इस बात का बिलकुल ज्ञान नहीं कि कांग्रेस क्या चीज़ है, उसके उद्देश क्या हैं और कौन कौन पुरुष उसमें किस प्रकार क्या काम करते हैं? राष्ट्रीय सभा का ज्ञान जब तक देशव्यापी न होगा तब तक उसके उद्देश्यों की सुफलता में सन्देह है। परन्तु अब यहां पर प्रश्न यह हो सकता है कि राष्ट्रीयसभा के उद्देश्य देशव्यापी किस प्रकार हो सकते हैं? उसका उत्तर भी बहुत ही सहल है। अर्थात राष्ट्रीय उद्देश्यों का प्रचार राष्ट्रीय भाषा में करने से बहुत ही शीघ्र सुफलता प्राप्त होगी। संसार में किसी राष्ट्र की ओर नज़र उठाकर देखो तो आपको सहज ही में मालूम हो जायगा कि उन्नति का मूल कारण

विचारों का फैलना अथवा फैलाना है। परन्तु विचार किस तरह फैल सकते हैं अथवा फैलाए जा सकते हैं; केवल मातृ भाषा द्वारा। परन्तु देश के दुर्भाग्य से कहो अथवा किसी अन्य कारण से; यहां हर एक प्रान्त में अलग अलग भाषाएं व्यवहार में लाई जाती हैं। हां, बाबू गुरुदास-बनर्जी, जस्टिस शारदा चरण मित्र, मिस्टर भावे सरीखे विद्वान लोगों ने इस ओर ध्यान दिया है। सम्भव है कि कुछ समय पाकर देश की एक राष्ट्रभाषा हो जाय। परन्तु यदि कोई राष्ट्रभाषा इस देशमें हो सकती है तो वह हिन्दी ही है। हां, यह सम्भव है कि हिन्दी के वर्तमान स्वरूप में किसी प्रकार का भेद भाव पड़ जाय परन्तु राष्ट्र भाषा हिन्दी और राष्ट्र अक्षर देवनागरी ही होंगे। इसी कारण हमने, हर एक प्रान्त के लोगों के चरित, जो हमारी राष्ट्रीय सभा के सभापति हुए हिन्दी में लिखे हैं। इस महा-सभामें हिन्दू मुसलमान और क्रिश्चियन सब जाति के लोग शामिल हैं। और सबों की मनोकामना देश की उन्नति करना ही है। जो लोग हिन्दी जानते हैं वे राष्ट्रीय विचारों को इस पुस्तक द्वारा जान सकेंगे। जो लोग हिन्दी नहीं जानते वे राष्ट्रीय भाषा समझ राष्ट्र के मुकट-मणियों के चरित पढ़कर लाभ उठा सकेंगे। यदि इस पुस्तक से हमारा यह उद्देश्य पूरा होगा तो हम अपने परिश्रम को सुफल हुआ समझेंगे।

इस पुस्तक को लिखने से पहले हमने इसके लिखने के लिए सामिग्री एकत्रित करना आरम्भ किया। क्योंकि बहुत से सभापतियों के नाम तक हम को मालूम न थे। कांग्रेस के कई एक बड़े बड़े भक्तों को हमने पत्र लिखे। कई एक सभापतियों को भी हमने अपने उद्देश्य की सूचना देकर उनसे सहायता करने की विनय की। परन्तु सहायता देना तो दूर रहा लोगों ने जवाब तक नहीं दिए। इस देश में साहित्य का काम करने वालों को कितना उत्साह और सहायता मिलती है यह बात इस से अच्छी तरह प्रगट है। अगर हमारी बात सच न मानी जाय, तो हम इस बात को साबित करने के लिए एक छोटी सी मिसाल देकर पाठकों

को इस की सत्यता का परिचय कराना चाहते हैं। सितम्बर १९०५ की सरस्वती में, सरस्वती सम्पादक, पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने, एक नोट दिया है कि हिन्दी बंगवासी के मालिक बाबू योगेन्द्र-चन्द्र वसु का शरीर पात हो गया। उन्होंने हिन्दी की अच्छी सेवा की थी। अतएव कृतज्ञता प्रगट करने के लिए उनका चित्र सरस्वती में प्रकाशित किया जाय इस हेतु से, उनके चित्र के लिए बंगवासी प्रेस को दो पत्र लिखे गए परन्तु चित्र तो भेजना दूर किनार, पत्रों का उत्तर तक नहीं मिला। जब चित्र मिलने में इतनी कठिनाई तब चरित्र का मिलना तो बहुत ही कठिन है !! यही आपत्ति हमें भी भोगना पड़ी। जब कहीं से किसी प्रकार की हमें आशा न दिखाई पड़ी तब हमने पुस्तकों का संग्रह करना आरम्भ किया। इस प्रकार हमें बहुत कुछ सफलता प्राप्त हुई। २३ साल में कुल १९ सभापति हुए। अर्थात् दादाभाई नौरोजी तीन बार, बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी, और बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी—दो दो बार सभापति हुए। इन १९ में से १६ चरित बड़ी कठिनाई से हमें प्राप्त हुए। बाकी ३—आर्जयूल, वेडरबरन, और एलफ़र्ड वेब के चरित किसी प्रकार से नहीं प्राप्त हो सके। अतएव इतने ही पर हमें सन्तोष करना पड़ा। इन लोगों के अलावा दो और कांग्रेस हितैषियों के चरित इसमें जोड़ दिए गए हैं। वे दोनों सज्जन कांग्रेस के कभी सभापति नहीं हुए परन्तु कांग्रेस की बुनियाद डालने वाले वे ही हैं। अर्थात मिस्टर ए० ओ० ह्यूम और पण्डित अयोध्यानाथ। मिस्टर ह्यूम कांग्रेस के जन्मदाता हैं और पण्डित अयोध्यानाथ उसके पोषक थे। इन दोनों ने कांग्रेस की जितनी सेवा की वह किसी पर छिपी नहीं है। वे कांग्रेस के सभापति नहीं हुए परन्तु वे कांग्रेस की जान थे। यही सोच कर हमने परिशिष्ट में इनके चरित दे दिए हैं।

इस पुस्तक को लिखने में हमें श्रीयुत पण्डित माधवराव सप्रे बी० ए० ने बहुत कुछ उत्तेजना और उत्साह दिलाया। आपने सर हेनरी काटन का चरित भी लिख कर भेजा। अतएव हम आपके बहुत

ही अधिक कृतज्ञ हैं। इसी प्रकार पण्डित गणपत जानकीराम दुवे बी० ए० ने भी मिस्टर शंकरन् नैय्यर का चरित हमें दिया। हम आपको इस सहायता के लिए भी कृतज्ञ हैं। इस पुस्तक को लिखते समय हम ने नीचे लिखी हुई पुस्तकों, मासिक पत्रों और समाचार पत्रों की सहायता ली है:—

Representative Indians, by G. P. Pillai B. A. भारतवर्षीय नररत्नमाला-मराठी, बालबोध-मराठी मासिक पुस्तक की पुरानी जिल्दें, भारत मित्र, Indian People, मराठी केसरी, गुजराती, और छत्तीसगढ़ मित्र। अतएव हम इन पुस्तक कर्ताओं और पत्र सम्पादकों के भी कृतज्ञ हैं। यदि उपरोक्त पुस्तकों और पत्रों द्वारा हमें सामिग्री प्राप्त न होती तो हम इस पुस्तक को पूरा करने में कभी, किसी प्रकार समर्थ नहीं हो सकते थे।

यह पुस्तक सन् १९०६ में लिखी गई थी। परन्तु प्रकाशक के अभाव से अब तक अप्रकाशित पड़ी रही। परन्तु 'अभ्युदय प्रेस' के स्वामी ने इस पुस्तक को छपाने का सारा भार अपने ऊपर लिया। अतएव यह पुस्तक आज छप कर प्रकाशित हो सकी। हिन्दी भाषा में यह पुस्तक अपने ढंग की पहली है। इस कारण इसमें अनेक प्रकार की त्रुटियां रह जाना सम्भव हैं। अतएव इस पहले संस्करण में जो त्रुटियां रह गई हों उनको पाठक गण क्षमा करें और मुझे सूचना दें कि मैं दूसरे संस्करण में उन सब को दूर कर सकूं।

आरंभ में यह भी विचार था कि सब सभापति लोगों के हाफ़टोन चित्र भी दिए जांय। परन्तु उत्तम चित्र न प्राप्त हो सकने के कारण हमको अपना यह विचार त्याग देना पड़ा। केवल दादा भाई नौरोजी का एक हाफ़टोन चित्र आरम्भ में दिया गया है। यदि यह पुस्तक पाठकों के पसन्द आई तो हम दूसरे संस्करण में सबों के चित्र भी दे सकेंगे।

अहियापुर,
प्रयाग। सूर्य्यकुमार वर्मा।
२५-४-०८

भारतीय-राष्ट्रीय-सभा के सभापतियों के नाम की सूची।

नं०	नाम		साल	स्थान	कैफ़ियत
१	बाबू उमेश चन्द्र बनर्जी	...	१८८५	बम्बई	
२	दादा भाई नौरोजी	...	१८८६	कलकत्ता	
३	बदरुद्दीन तय्यबजी	...	१८८७	मदरास	
४	मिस्टर जार्ज यूल	...	१८८८	इलाहाबाद	
५	मिस्टर वेडरबर्न	...	१८८९	बम्बई	
६	फ़ीरोज़ शाह मेहता	...	१८९०	कलकत्ता	
७	पंडित आनन्द चारलू	...	१८९१	नागपूर	
८	बाबू उमेश चन्द्र बनर्जी	...	१८९२	इलाहाबाद	दुबारा
९	दादा भाई नौरोजी	...	१८९३	लाहौर	दुबारा
१०	मिस्टर ए० वेब	...	१८९४	मदरास	
११	बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	...	१८९५	पूना	
१२	रहमतुल्ला मुहम्मद सयानी		१८९६	कलकत्ता	
१३	मिस्टर शंकरन् नय्यर	...	१८९७	अमरावती	
१४	बाबू आनन्द मोहन बोस	...	१८९८	मदरास	
१५	बाबू रमेशचन्द्र दत्त	...	१८९९	लखनऊ	
१६	नारायण गणेश चंद्रावरकर	...	१९००	लाहौर	
१७	मिस्टर दीनशा एडलजी वाचा		१९०१	कलकत्ता	
१८	बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	...	१९०२	अहमदाबाद	दुबारा
१९	बाबू लाल मोहन घोष	...	१९०३	मदरास	
२०	सर हेनरी काटन	...	१९०४	बम्बई	
२१	गोपाल कृष्ण गोखले	...	१९०५	काशी	
२२	दादा भाई नौरोजी	...	१९०६	कलकत्ता	तीसरी बार
२३	डाक्टर रास बिहारी घोष	...	१९०७	सूरत	
२४	मिस्टर ए० ओ० ह्यूम	...	जनरल सेक्रेटरी		
२५	पंडित अयोध्यानाथ	...	असिस्टेंट जनरल सेक्रेटरी		

बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी।





बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी को सब लोग जिस नाम से पहचानते और सम्बोधन करते हैं वह डब्लू० सी० बनर्जी है। उनका चरित लिखने के पहले हम ने उनके नाम का ठीक ठीक परिचय इस कारण करा दिया कि पाठकों को किसी दूसरे पुरुष का धोखा न हो जाय। डब्लू० सी० बनर्जी के बचपन का हाल जान कर लोग यह अवश्य कहने लगेंगे कि "होनहार बिरवान के होत चीकने पात" यह कहावत सर्वथा सत्य ही है। इन्होंने अपनी बाल्यावस्था में लिखने पढ़ने और विद्याभ्यास की ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया। हमेशा खेल कूद में ही वे अपना अधिक समय व्यतीत करते थे। उन्हें नाटक का बहुत बड़ा शौक़ था। वे नाटकों के खेल स्वयं देखते और लोगों को करके दिखाते भी थे। कलकत्ते में महाराजा ज्योतीन्द्र-मोहन टागोर नामके एक प्रतिष्ठित पुरुष हैं, उन का बनवाया हुआ वहां एक टागोर नाटक गृह है। उमेश बाबू बहुधा उसमें जाकर कभी स्त्री और कभी पुरुष का स्वांग लेते थे। इसी कारण महाराजा साहब उन पर प्रसन्न रहते थे। परन्तु थोड़े दिनों में ही उमेश चन्द्र ने अपने अन्य प्रकार के कार्यों से सब लोगों को चकित करके यह सिद्ध कर दिखाया कि मनुष्य जब से अच्छा काम करने लगता है तभी से वह बड़ा होजाता है।

उमेश चन्द्र का जन्म, कलकत्ते के पास खिदर पुर नाम के एक स्थान में, २९ दिसम्बर सन् १८४४ को हुआ। उनके पिता बाबू गिरीश चन्द्र एक प्रतिष्ठित और कुलीन ब्राह्मण थे। वे उस समय कलकत्ते में, अटर्नी का काम करते थे। उमेश चन्द्र की माता भी एक प्रतिष्ठित घराने की थीं।

पहले ही पहल उमेश चन्द्र कलकत्ते के एक मदरसे में पढ़ने को बैठाले गए। परन्तु उन्हों ने वहां पढ़ने लिखने में जी बिलकुल नहीं लगाया।

इस के बाद, ओरिएंटल और हिन्दू स्कूल में भी इन्हों ने शिक्षा पाई और वहां जैसे तैसे करके आपने इन्ट्रेंस की परीक्षा दी।

जुलाई सन् १८६१ में, वे घर से रानीगंज की ओर भाग गए। उस समय इनकी उमर करीब १७ वर्ष के थी। उन की तलाश करके उन्हें घर घर वापस लाने के लिए उनके पिता को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। अन्त में गिरीश बाबू ने यह निश्चय किया कि अब यह लड़का अधिक विद्योपार्जन नहीं कर सकता, अतएव इसे किसी न किसी काम में लगा देना चाहिए। इसी विचार से उन्होंने उमेश चन्द्र को मिस्टर हौलिङ्ग नामक एक अटर्नी के पास बतौर क्लार्क के नौकर करा दिया। नौकर होजाने के कुछ दिन बाद, उमेश चन्द्र को होश आया; और अपने पिछले कर्मों के लिये वे पश्चात्ताप करने लगे। परन्तु अब पश्चात्ताप और अफ़सोस करने से क्या हो सकता है; समय निकल जाने पर पछताने से कुछ नहीं होता। यह समझ कर उमेश चन्द्र ने यह निश्चय किया कि, अब आगे क्या करना चाहिये जिससे हमारी उन्नति हो। उन्होंने बहुत कुछ सोच विचार के बाद, क़ानून का पढ़ना निश्चय किया। उनकी बुद्धि स्वभावतः अच्छी थी। यद्यपि वे पढ़ने लिखने में जी नहीं लगाते थे तथापि जब से उन्हें होश आया तब से उन्होंने खूब जी लगा कर अभ्यास किया। जब उन्हें कुछ पढ़ने की रुचि हुई तब साथ ही साथ लिखने की ओर भी उन्होंने अच्छा ध्यान दिया। जिसका फल यह हुआ कि सन् १८६२ ईस्वी में "बङ्गाली" पत्रका उनके द्वारा जन्म हुआ।

मनुष्य के भाग्योदय का जब समय आता है तब चारों ओर से उसे सहायता मिलने लगती है। जो काम वह करता वह सफल होता है। उसके काम की लोग क़दर करने लगते हैं। यही हाल उमेश चन्द्र का हुआ। जब से उन्हों ने लिखने और पढ़ने में जी लगाया तभीसे उनके साथ लोग सहानुभूति दिखाने लगे। सन् १८६४ में बम्बई के प्रसिद्ध पारसी व्यापारी मिस्टर रुस्तमजीजमसेदजीजीजीभाई ने सरकार को तीन लाख रुपये इस लिए दिए कि जो विद्यार्थी विलायत में जाकर क़ानून की परीक्षा पास करे उसे इस धन से सहायता दी जावे। इस

मूल धन से जो ब्याज आता था उस से विद्यार्थियों की सहायता की जाती थी। हर साल भारत के पांच विद्यार्थियों को विलायत में जाकर क़ानून पढ़ने के लिए वज़ीफ़ा दिया जाता था। उमेश बाबू ने भी इस वज़ीफ़ा पाने के लिए सरकार से प्रार्थना की। सरकार ने इनका उत्साह और साहस देख कर इन की परीक्षा लेने को एक सभा नियत की। सभा ने उन की परीक्षा लेकर उन्हे विलायत जाने और पढ़ने के योग्य बताया। तब सरकार ने भी इनको वज़ीफ़ा दिए जाने की मंजूरी दे दी। वज़ीफ़ा पाकर उमेश बाबू अक्तूबर सन् १८६४ में, विलायत गए। और वहां "मिडिल टेम्पल" नामक क़ानूनी मदरसे में जाकर भरती होगए। क़ानून को उन्हों ने खूब जी लगा कर पढ़ा। विलायत के मुख्य मुख्य कानूनी विद्वानों से मिलकर और उनके पास काम करके उमेश बाबू ने वहां क़ानून की अच्छी योग्यता प्राप्त की।

उन्हों ने विलायत जाकर केवल क़ानून ही नहीं पढ़ा परन्तु देश हित के लिए भी वे वहां बहुत कुछ उद्योग करते रहे। उस समय दादा भाई नौराज़ी भी विलायत में ही थे। उन की सलाह से इन्हों ने सन् १८६५ में "लंदन इण्डियन सोसाइटी" नाम की एक सभा स्थापित की। वे इस सभा के मंत्री नियत हुए। थोड़े दिनों के बाद यह सभा "ईस्ट इण्डियन असोसिएशन" में शामिल हो गई। इस सभा में उमेश बाबू ने २५ जोलाई सन् १८६५ में "भारतवर्ष की राज पद्धति कैसी होनी चाहिए" इस विषय पर एक बहुत ही उत्तम व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान में उन्होंने इस बात पर अधिक ज़ोर दिया कि अंगरेज़ों को भारत का राज्य भारतवासियों की सम्मति से करना चाहिए। ऐसा करने से भारतवासियों को सुख मिलेगा और अंगरेज़ी राज्य भी चिरस्थायी हो जायगा"।

सन् १८६८ ईस्वी में ये बारिस्टरी की परीक्षा पास कर के भारतवर्ष में लौट आए। उसी साल इनके पिता गिरीशचन्द्र का देहान्त हुआ। भारतवर्ष में लौट आने पर ये कलकत्ता हाईकोर्ट में वकालत करने लगे। सब से पहले जो मुक़द्दमा उन्हों ने अपने हाथ में लिया वह एक ग़रीब

स्त्री का था । इस स्त्री के ऊपर एक सरकारी अधिकारी ने झूंठी गवाही देने का अपराध लगाया था । धन पास न होने के कारण कोई वकील उसकी ओर से अदालत में नहीं जाता । यह देख कर, उमेश बाबू ने उसकी ओर से अदालत में जा कर, वकालत करना स्वीकार किया । इस स्त्री पर, किसी तरह का अपराध सिद्ध न हो सकने के कारण, सेशन जज ने उसे छोड़ दिया; और साथ ही बाबू उमेशचन्द्र के विद्वत्ता की बहुत कुछ तारीफ़ की ।

इसी मुक़द्दमें से इनका नाम चारों ओर लोगों में प्रसिद्ध हो गया और उनको लाख, सवा लाख रुपया सालाना की आमदनी होने लगी । कलकत्ते में वुडरफ़ आदि अच्छे २ अंगरेज़ बेरिस्टर थे उनसे भी अधिक लोग इनका आदर और सन्मान करने लगे । फ़ौजदारी की अपेक्षा दीवानी के काम में इनकी अधिक तारीफ़ हुई । सन् १८८३ में बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के ऊपर जो मुक़द्दमा चला था उसमें, और सन् १८८७ में स्टेट्समैन और फ्रेंड आफ़ इण्डिया पत्र के प्रसिद्ध लेखक मिस्टर राबर्ट नाईट के ऊपर जो इज्ज़त हतक की नालिश हुई थी उसमें, उमेश बाबू ने बड़ी योग्यता से काम किया । इन दोनों मुक़द्दमों से इनका नाम और भी ज़्यादा प्रसिद्ध हुआ । इनके क़ानून के ज्ञान और वाक्पटुता की सब लोगों ने खूबही तारीफ़ की । सब से अधिक प्रशंसा योग्य बात यह हुई कि, उमेश बाबू ने इन दोनों मुक़द्दमों में ख़र्च का एक पैसा भी न लिया, सब काम योंही मुफ़्त में कर दिया ।

सन् १८८१ से १८८८ तक क़रीब ६-७ वर्ष तक इन्होंने सरकारी स्टैंडिंग कौंसल में काम किया । यह स्टैंडिङ्ग कौंसिल भारत सरकार को क़ानून के विषय में सलाह देती है । जब क़ानून बनाये जाते हैं तब वह नये और पुराने क़ानून की विवेचना करती और सरकार को उनके बुरे भले की राय देती है । इस कौंसिल में उमेश बाबू के नियत होने से यह बात भी सिद्ध हो गई कि, सरकार उनकी क़दर करती है और उनसे सलाह लेना आवश्यक समझती है ।

भारत सरकार ने इनकी योग्यता को जान कर, सन् १८८४ ईस्वी में इन्हें कलकत्ता हाई कोर्ट का जज नियत करना चाहा, परन्तु इन्होंने जज होने से इनकार कर दिया। क्योंकि इस जगह को स्वीकार करने से उन्हें कुछ विशेष धन का लाभ न था। अतएव उन्होंने स्वतंत्र रहना ही अच्छा समझा।

सन् १८८५ ईस्वी में ह्यूम साहब की कृपा से नेशनल कांग्रेस की उत्पत्ति का समय आगया। कांग्रेस के मुखियाओं ने पहली बार बम्बई में कांग्रेस करने का विचार किया। परन्तु इस सभा का सभापति कौन हो, इस विषय की लोगों को बहुत कुछ चिन्ता करनी पड़ी। अन्त में उमेश बाबू की योग्यता, उनकी देश-भक्ति और राष्ट्रीय प्रेम को देख कर, सबों ने इन्हें सभापति बनाना निश्चय किया। सभा में जो इन्होंने उस साल व्याख्यान दिया वह बहुत ही उत्तम और मनन करने योग्य है। वे राष्ट्रीय उन्नति और समाज सुधार के हर काम में तन, मन, धन, से सहायता पहुंचाने को तयार रहते हैं।

सन् १८९२ में आठवीं नेशनल कांग्रेस प्रयाग में हुई, उसके भी आप सभापति हुए थे। दो बार आपको कांग्रेस का सभापति बनाकर भारत-वासियों ने इनके गुणों का अच्छा आदर किया। गुणी के गुणों का आदर करना देश और समाज दोनों के लिए हित कर है। गुणियों का आदर करने से अन्य लोगों का भी उत्साह बढ़ता है। देशहित का काम करने की ओर लोगों की रुचि बढ़ती है।

उमेश बाबू का विवाह लड़कपन में हुआ। जब इनकी उमर १५ वर्ष की थी तभी इनके माता पिता ने इनका विवाह कर दिया। इस कारण बाल विवाह से क्या क्या हानियां होती हैं इसे ये पूरी तौर से जानते हैं। स्त्री शिक्षा के भी आप बड़े पक्ष पाती हैं। स्वयं अपनी कन्याओं को आप ने उच्च शिक्षा दिलाई है। अपनी पत्नी को स्वयं अच्छी तरह शिक्षा दे कर योग्य बनाया है। आप का कथन है कि संसार में जो हमारे साथ सदैव रहने वाली है उस साथी को अयोग्य रखना अथवा उसका मूर्ख होना बहुत हानि कारक है। हिन्दू धर्म में स्त्री को अर्द्धांगी

कहते हैं। आधे अङ्ग का निकम्मा रहना कितना बुरा है। यदि मनुष्य का एक हाथ बेकार हो जाय तो उसे कितना कष्ट भोगना पड़ता है? फिर भला जब आधा अङ्ग ही निरुपयोगी हो जाय तो कितना दुःख उठाना पड़ेगा, इस की कल्पना सहजही में हो सकती है।

एक बेर आप का ध्यान ईसाई धर्म की ओर झुका। आप ईसाई हो जाने को राज़ी हुए। परन्तु हिन्दू धर्म की उत्तम उत्तम पुस्तकों का अवलोकन और वेदान्त का अध्ययन करने से आप की राय पलट गई। तब से आप हर एक धर्म को अच्छा समझते हैं। आप किसी धर्म की निन्दा नहीं करते। धर्म परिवर्तन को आप बहुत ही बुरा समझते हैं। धर्म की पुस्तकों को, विशेषतः वेदान्त विषयकी पुस्तकों को, आप खूब जी लगा कर पढ़ते हैं। परोपकार के बराबर दूसरा कोई धर्म नहीं, ऐसा आप मानते और उस पर अमल करते हैं। आप यथा साध्य दान भी करते हैं, परन्तु वह दान केवल देश हित और परोपकार के कार्यों के लिये किया जाता है।

एक कुटुम्ब के सारे लोगों का एकत्रित रहना ये देश के लिए हानिकारक समझते हैं। इसका ये बहुतही विरोध करते हैं। इस विषय में आप का मत ऐसा मालूम होता है कि एक कुटुम्ब के लोगों के एक साथ रहने से ऐक्यता और प्रीति में अन्तर पड़ जाता है। परन्तु हमारी समझ में यह बात ठीक ठीक नहीं आती। स्त्रियों की शिक्षा पूरी हुए बिना उनका विवाह नहीं होना चाहिये, यह भी आपकी राय है।

उमेश बाबू बड़े सरल स्वभाव के पुरुष हैं। आपको पुस्तकावलोकन का बड़ा शौक़ है। अंगरेज़ी भाषा में आप पण्डित हैं। परन्तु बंग भाषा की पुस्तकों को आप रुचि पूर्वक पढ़ते हैं। अंगरेज़ी भाषा का कोई ही ऐसा गद्य और पद्य का ग्रंथ होगा जिसे आप ने न पढ़ा हो। अंगरेज़ी भाषा के अच्छे अच्छे सब ग्रंथों को आपने ख़ूबही ध्यान पूर्वक पढ़ा है और अब भी बराबर पढ़ते हैं। चार्लस लैंब और बंकिम बाबू के पुस्तकों को आप बड़ी रुचि के साथ पढ़ते हैं।

इस समय आपकी उमर क़रीब साठ वर्ष की है तौभी आप देश हित का काम उत्साह पूर्वक करते हैं। विलायत में रह कर भी आप स्वदेश प्रेम के कभी नहीं भुलाते। आप चिरायु हों और देश का अधिक कल्याण कर सकें यही हमारी परमात्मा से प्रार्थना है।*



* जिस समय उनकी यह जीवनी लिखी गई उस समय आप जीवित थे परन्तु दुःख की बात है कि गत वर्ष आप का देहान्त हो गया।

दादा भाई नौरोज़ी।



शैले शैले न माणिक्यं, मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र, चन्दनं न वने वने ॥*



इतिहास के पढ़ने वाले जानते हैं कि, अमेरिका देश को स्वतंत्र करने वाला एकही जार्ज वाशिंगटन हुआ, राजपूतों का नाम अजरामर करने वाला एक ही प्रताप सिंह हुआ और इसी प्रकार महाराष्ट्र देश को स्वाधीनता का सुख देने वाला अकेला शिवा जी हुआ। ऐसे पुरुष-रत्न पृथ्वी पर कभी कभी जन्म लेते हैं। इसी तरह आजकल हमारे देश में दादा भाई नौरोज़ी एक अपूर्व पुरुष-रत्न हैं। आज साठ वर्ष से अधिक हो गये कि आप तन, मन, धन, से देश की भलाई के लिए, प्रयत्न कर रहे हैं। उनका चरित्र अत्यन्त मनोरंजन तथा शिक्षा दायक है।

दादा भाई का जन्म, बम्बई में, ४ सितम्बर सन् १८२५ ईस्वी को हुआ। इनके पैदा होने के चार वर्ष बाद इनके पिता का देहान्त हो गया। तब इनकी शिक्षा का भार इनकी माता के ऊपर आन पड़ा। इनकी माता लिखी पढ़ी विद्वान नहीं थीं; परन्तु वह बुद्धिमती अवश्य थीं। उनकी यह प्रबल इच्छा थी कि, मेरा पुत्र विद्वान होकर संसार में नाम पैदा करे। उन्होंने दादा भाई को शिक्षा दिलाने में किसी प्रकार की कोताही नहीं की। पहले ये ५ वर्ष की अवस्था में, एक गुजराती पाठशाला में पढ़ने को भेजे गये। जब वहां का पढ़ना लिखना ख़तम होगया तब इन्हें अङ्गरेजी पढ़ाने के लिए इनकी माता ने 'एल्फिन्स्टन इंस्टिट्यूट' में भर्ती करा दिया। वहां इनकी बुद्धि का धीरे धीरे प्रकाश होने लगा। थोड़ेही समय में इन्हों ने अपने सब अध्यापकों को अपने गुणों से

---

* हर एक पहाड़ में माणिक नहीं पैदा होते, न हर एक हाथी में मोती निकलते हैं, साधु जन सब ठौर नहीं मिलते और न हर एक वन में चन्दन पैदा होता है।

प्रसन्न कर लिया। हर एक इम्तिहान में इनको कुछ न कुछ इनाम ज़रूर मिलता। अङ्गरेज़ी की प्राथमिक शिक्षा ख़तम करके ये उच्च शिक्षा का अभ्यास करने लगे। मिसेस पोस्टन नाम की एक लेखिका ने अपनी पुस्तक "पश्चिम हिन्दोस्तान" में दादा भाई के विषय में लिखा है कि "इस समय विद्यार्थियों में एक छोटा, परन्तु बड़ा तेज़, लड़का था। उसका तेज-पुंज और विशाल भाल तथा सतेज नेत्र देख कर, देखने वाले का मन उसकी ओर अपने आप खिंच जाता था। जब लड़कों से सवाल किया जाता था तब यह बाल-विद्यार्थी सब से पहले अपना हाथ बढ़ाता और उत्सुकता दिखाता कि कब उसकी पारी आवे और वह सवाल का जवाब दे! गणित और सिद्धान्त प्रश्नों के उत्तर तो, उसी दम वह बतला देता था। सवाल करने की रीति भी उसकी बड़ी आश्चर्य जनक थी। उसे अपने साथियों में अग्रसर होने की बड़ी प्रबल इच्छा थी। उसकी बुद्धि की चपलता देख कर, ऐसा मालूम होता है कि वह आगे कोई बड़ा प्रसिद्ध पुरुष होगा"।

उच्च-शिक्षा सम्पादित करते समय जब उनके ज्ञान का विकास दिनों दिन होने लगा तब उनके मुख्य अध्यापक प्रोफ़ेसर अर्लिबर अक्सर कहा करते थे कि दादा भाई नौरोज़ी भारत की भावी आशा (India's future Hope) हैं। दादा भाई ने अपने गुरू की इस भविष्य वाणी को सच्चा कर के दिखला दिया!

सन् १८४५ में बम्बई प्रान्त की शिक्षा विभाग के सभापति सर आर्स्किनेपरी साहब ने यह प्रस्ताव किया कि दादा भाई को क़ानून पढ़ने के लिए विलायत भेजना चाहिए। दादाभाई के पढ़ने का कुल ख़र्च साहब बहादुर ने देना स्वीकार किया; परन्तु उस समय तक जितने पारसी विलायत हो आए थे उन सबों के आचरण नष्ट भ्रष्ट हो गये थे। इसी कारण दादा भाई के घर के लोगों ने उन्हें विलायत जाने न दिया।

दादा भाई की विद्वता को जान कर प्रिन्सिपाल हार्कनेस साहब ने उन्हें एक सोने का पदक दिया। कुछ दिनों के बाद वे एल्फ़िन्स्टन [illegible]

हुए । वे पूर्ण विद्वान तो थे ही, परन्तु इनके पढ़ाने की शैली भी अच्छी थी । इसी कारण सब विद्यार्थी उनसे प्रसन्न रहते थे । कुछ दिनों के बाद जब कालिज के मुख्य अध्यापक प्रोफ़ेसर जोज़ फ़ पेटन विलायत चले गए तब यह जगह दादा भाई नौरोजी को मिली । इससे पहले इतना बड़ा पद और ज़िम्मेदारी का काम किसी भारतवासी को नहीं प्राप्त हुआ था । जिस विद्यालय में उन्होंने शिक्षा पाई उसी विद्यालय में वे मुख्या-ध्यापक बन कर शिक्षा प्रदान करने लगे, यह कुछ साधारण बात नहीं है । "बोर्ड आफ़ एज्यूकेशन" ने अपनी सन् १८५४-५६ की वार्षिक रपोर्ट में दादा भाई के इस श्रेष्ठ पद पाने के बदले में, बहुत ही प्रशंसा की है। बोर्ड के मन्त्री डाक्टर एमरस्टायेल साहब ने लिखा है कि "यदि तुम अपना कार्य-क्रम सरलता और शान्ति के साथ एक चित्त होकर चलाते रहोगे तो निःसन्देह तुम एक दिन अपने देश के भूषण बन जाओगे ।"

दादा भाई के काम करने से उनकी कीर्ति दिनों दिन बढ़ने लगी। परन्तु वे अपने कीर्ति-चन्द्र की कुछ कर किरणों के शीतल प्रकाश से ही सन्तुष्ट होकर शान्ति पूर्वक चुप चाप बैठे न रहे । उनको स्वभावतः कुछ न कुछ उद्योग करने की इच्छा बनी रहती थी । इसी कारण वे शास्त्रा-ध्ययन में लीन होने पर भी अपने कर्तव्य कर्म को भूल नहीं गए । लग भग दस वर्ष तक उन्होंने अध्यापक का काम किया, और उसी के साथ साथ उन्हों ने अपने देश और समाज को लाभ पहुंचाने वाले अनेक काम किए । सन् १८४५ से १८५५ तक जिन लाभकारी सभाओं और समाजों के साथ इनका सम्बन्ध था उनमें से मुख्य मुख्य के नाम नीचे लिखे हैं:—

स्टूडेंटस लिटरेरी साईन्टिफ़िक सोसाइटी, गुजराती ज्ञान-प्रकाशक सभा, बाम्बे असोसिएशन, पारसी धर्म सुधारक मण्डली, फ्रामजी कावसजी इंस्टिट्यूट, पारसी व्यायाम गृह, हिन्दू पुनर्विवाहोत्तेजक मंडली, विक्टो-रिया एण्ड अलबर्ट पदार्थ संग्रहालय-और पुत्री पाठशाला ।

उन्होंने स्त्री शिक्षा के प्रचार करने में बहुत ही श्रम किया। बम्बई प्रान्त के सामाजिक सुधार के इतिहास में आप "पुत्री पाठशालाओं के जन्मदाता" लिखे जाने योग्य हैं ।

दादा भाई का अन्तःकारण स्वदेशी तथा पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से प्रकाशित हो गया था; इस कारण उनकी यह इच्छा रहती थी कि, अपने ज्ञान का लाभ अपने देशवासियों को मिले; इसी कारण वे उपरोक्त सभाओं का काम अपने कई एक मित्रों की, सहायता से चलाते रहे। उनके मित्रों में से स्वर्गवासी राव साहब विश्वनाथ नारायण मांडलिक मुख्य थे।

दादाभाई ने अपने मित्रों की सहायता से "रास्त गुफ़्तार" नाम का एक समाचार पत्र सन् १८५१ में निकाला। इसमें वे बहुत से उत्तम उत्तम लेख लिखते रहे। वे समाज-सुधार की कोई बात इस पत्र में ऐसी नहीं लिखते थे जो लोगों को ज़्यादा बुरी लगे या उसका परिणाम उलटा निकले। उस समय के उनके लेखों को पढ़ने से उनकी अद्भुत शक्ति का परिचय पढ़ने वालों को तुरन्त मिल जाता था। देशी भाषा में स्वतंत्र लेख लिखना और दूसरों के आचार विचार का उचित आदर करना इस पत्र का मुख्य उद्देश्य था। सब लोगों के हित साधनार्थ ऐक्यता प्रवर्तक लेख ही बहुधा इसमें प्रकाशित होते थे। इस प्रकार के प्रगल्भ-विचार होने के कारण, इस पत्र ने उस समय अच्छा नाम पाया। परन्तु अब थोड़े दिनों से इस पत्र की दशा बदल गई है। अब वैसे अच्छे लेख और विचार इस पत्र में नहीं दिखाई देते। प्रचलित राजकीय विषय का विवेचन जैसा दादाभाई के समय में होता था वैसा अब इस पत्र में नहीं होता। यह खेद की बात है।

जो मनुष्य अपना एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोता वही इस संसार में बड़े २ काम कर सकता है। दादाभाई के बहुत से काम एक साथ कैसे चलते थे इसका कारण यही है कि वे अपने समय का ठीक ठीक उपयोग करते थे। कालिज में विद्यार्थियों के पढ़ाने का काम और "स्टुडेन्टस लिटरेरी ऐन्ड सायंटिफ़िक सोसाइटी" में व्याख्यान देने का काम तो वे रोज़ करतेही थे परन्तु कभी कभी ज्ञान-प्रसारक सभा में भी वे व्याख्यान देते थे। ज्ञान-प्रसारक-सभा में आप ने पदार्थ विज्ञान और ज्योतिष शास्त्र पर १८ सारगर्भित व्याख्यान दिए। आप के ये कुल

व्याख्यान उसी समय "ज्ञान-प्रसारक" मासिक पुस्तक में छप चुके हैं। इसके अतिरिक्त आप ने पारसियों के इतिहास और धर्म पर भी बहुत से उत्तम २ लेख लिख कर प्रकाशित किए हैं। किसी साधारण मनुष्य को जब एक साथ ही कई एक काम करने पड़ते हैं तब वह घबड़ा जाता है और यही कहने लगता है कि "समय नहीं है"। परन्तु इतना ज़्यादा काम कर के भी दादाभाई का मन संतुष्ट न था। इन्हीं दिनों में आप ने अपना ज्ञान भाण्डार परिपूर्ण करने के लिए लेटिन, फ्रेंच, फ़ारसी, मराठी और हिन्दोस्थानी भाषाओं को बड़े परिश्रम के साथ सीखा। गुजराती आप की मातृ-भाषा थी। इस कारण अपने स्वदेश बांधवों को ज्ञान देने के लिए आप उत्तम उत्तम लेख, गुजराती भाषा के पत्रों में लिखा करते थे।

सन् १८५५ से दादाभाई ने व्यापार की ओर ध्यान दिया। उन्होंने सोचा कि, बिना व्यापार की उन्नति किए, देश की उन्नति किसी तरह नहीं हो सकती। उस समय इंग्लेण्ड में, 'कामा कम्पनी' स्थापित हुई थी। इसके पहले विलायत में व्यापार करने के लिए, कोई हिन्दोस्थानी कम्पनी वहां नहीं थी। कई एक पारसी सज्जनों की कृपा से, विलायत में कम्पनी तो स्थापित हो गई, परन्तु सर्व साधारण इस कम्पनी में शामिल होने से डरते थे। सब से पहले दादाभाई नौरोजी ने, उस कम्पनी के उद्देशों को समझ कर उसका एक हिस्सा लिया। इससे पहिले उनको व्यापार में कुछ भी अनुभव न था। तथापि बड़े धीरज और साहस से, आप ने वणिक वृत्ति को स्वीकार किया और विलायत यात्रा का निश्चय किया। इससे यद्यपि उनके सुहृज्जनों को दुःख हुआ तथापि दादाभाई के प्रशंसनीय उद्देश्यों को जान कर उन लोगों ने कुछ संतोष माना।

दादाभाई इस कम्पनी में काम करने के लिए १८५५ में विलायत गए। भारतवर्ष में, थोड़े ही दिन काम करके, आप ने बहुत कुछ कीर्ति प्राप्ति की; और उस समय आप अपने जाति भाइयों के ही नहीं किन्तु सारे बम्बई प्रान्त के लोगों के प्रिय हो गए थे। आप की विलक्षण बुद्धि, विवादपटुता, ज्ञान पूर्ण भाषण और उत्तम व्यवहार के कारण सब लोग आप का आदर और सत्कार करते थे और इसी के अनुसार

आप का इङ्गलैण्ड में रह कर, व्यापार करना देश के लिए, हितकारी हुआ। यह बात सच है कि, आप को व्यापार में यश प्राप्त हुआ; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, व्यापार की अपेक्षा स्वदेश की सेवा करने में, उन्हों ने अधिक परिश्रम किया। स्वतंत्रता प्रिय अंगरेज़ों के बीच में, रह कर दादाभाई ने भारत के राजकीय विषयों में, सुधार होने के लिए, बहुत कुछ उद्योग किए। भारत का दुःख विलायती सरकार को सुनाने का बीजारोपण सब से पहले दादाभाई नौरोज़ी ने ही किया। सिविल सर्विस परीक्षा में, अंगरेज़ों के साथ मुक़ाबला करने का, जो सौभाग्य इस देश के युवकों को प्राप्त हुआ; उसका मुख्य कारण आप ही हैं। भारत और इङ्गलैंड वासियों में हेल मेल बढ़ाना, भारतीय प्रजा के दुःखों को विलायत के न्याय प्रिय लोगों के सामने निवेदन करना और भारत के विद्यार्थियों की पढ़ने के लिए विलायत में व्यवस्था होना, यही आपके उद्देश हैं।

जब दादाभाई नौरोज़ी विलायत में जाकर व्यापार करने लगे तब वहां धीरे धीरे उनका कई एक बड़े आदमियों से परिचय हुआ और थोड़े समय में ही आप के ज्ञान और विद्या की प्रशंसा अंगरेज़ लोगों में होने लगी। आप को कई एक अच्छी अच्छी सभाओं में मान भी मिला। "लिवरपूल लिटरेरी सोसाइटी," "फिलेन्थ्रापिक सोसाइटी," "कौंसिल आफ़ लिवरपूल एथेनियम," "काटन सप्लाय असोसिएशन आफ़ मंचि-स्टर," "रायल इन्स्टिट्यूशन आफ़ लंदन," रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ़ ग्रेट ब्रिटन एण्ड आयर्लैंड" आदि सभाओं ने आप को अपना सभा-सद बनाया। आप ने भी वहां जान डिकन्सन और कई एक भारतहितैषी अंगरेज़ सज्जनों की सहायता से "लन्दन इण्डियन सोसाइटी" और "ईस्ट इण्डियन आसोसिएशन" नाम की दो सभाएं स्थापित कीं। कुछ दिनों बाद आप लन्दन यूनिवर्सिटी कालेज में गुजराती भाषा पढ़ाने के लिए प्रोफ़ेसर नियत हुए और वहां की सिनेट ने आपको अपना सभासद भी बनाया।

जब दादा भाई नौरोज़ी ने, अपनी अलौकिक बुद्धि और दीर्घ उद्योग से अंगरेज़ों के मन अपनी ओर आकर्षित कर लिए तब उन्हों ने अपने

मुख्य उद्देश्य की सुफलता के लिए प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया। पहले पहल आपने "ईस्टइण्डियन असोसिएशन" में और अन्य स्थानों में भारत की स्थिति पर अनेक व्याख्यान दिए। जिस से कि सुहृदय अंगरेज़ लोगों को भारत की सच्ची शोचनीय स्थिति मालूम पड़गई। दादा भाई ने उन की आखों के सामने भारत की वर्तमान दुर्दशा की प्रत्यक्ष मूर्ति खड़ी करदी। फिर उनके उदार और न्यायी अंतःकरण को दयार्द्र करने के लिए आपने कई एक लेख और छोटी छोटी पुस्तकें लिख कर प्रकाशित कीं। इस काम में आपने अपना निज का बहुत सा धन भी ख़र्च किया। सन् १८५९ में आपने भारत के कर्ताधर्ता सेक्रेटरी आफ़ स्टेट लार्ड स्टैनले साहब के साथ सिविल सर्विस के नियमों में कुछ फेर फार करने के लिए लिखा पढ़ी की; परन्तु उस पत्र व्यवहार से उन्हें यह ज्ञात हुआ कि सिविल सर्विस के नियमों में एका एकी कुछ भी परिवर्तन नहीं हो सकता। यह जान कर, उन्हों ने भारत वर्ष के कई एक विद्यार्थियों को विलायत में आकर सिविल सर्विस परीक्षा देने की उत्तेजना दी। आप उनसे कहकर ही नहीं रहगए वरन धन की भी सहायता की। जो विद्यार्थी उस समय विलायत में परीक्षा देने जाते उनकी हर तरह की व्यवस्था करने का भार आप अपने ऊपर लेते। कोई भी हिन्दुस्थानी विलायत जाता तो दादा भाई सदैव उस की सहायता करने को तय्यार रहते थे। इस लिए विलायत जाने वाले सब भारतवासियों के लिए दादा भाई मानो एक आश्रय-धाम ही बनगए थे।

विलायत में व्यापार करते करते आपको दो तीन बार टोटा भी सहना पड़ा परन्तु आप बराबर उस काम को करतेही रहे। सन् १८६० में, आप ने मैंचेस्टर में "कपास का संचय" इस विषय पर एक व्याख्यान दिया। उस वक्त आप के अनुभव की लोगों ने बहुत कुछ तारीफ़ की। सन् १८६१ में, आपने "पारसी लोगों का धर्म और उनकी रीति रिवाज" पर कई एक लेख पढ़े और सन् १८६५ में, 'लन्दन इण्डियन सोसाइटी' में सिविल सर्विस के नियमों पर कई एक व्याख्यान दिए। और इसी सोसाइटी के द्वारा स्टेट सेक्रटरी के साथ पत्र व्यवहार किया। इस लिखा पढ़ी का

परिणाम यह हुआ कि उस परीक्षा में संस्कृत और अरबी भाषा के लिए जो नम्बर कम करदिए गए थे वे फिर वैसे ही पूर्ववत् कर दिए गए। सन् १८६६ में, आपने "एथनालाजिकल सोसाइटी" में "युरोप और एशिया के लोग" इस विषय पर कई एक निबंध पढ़ कर सुनाए। अंगरेज़ लोगों के मन में भारत वासियों के संबन्ध में कुछ असत्य और बुरे विचार पैदा होगए थे.वह बहुत कुछ इन निबंधों से लोप होगए। सन् १८६७ और ६८ में, आप ने जो भलाई के काम किए उनमें से मुख्य ये हैं "भारत सम्बधी इङ्गलैंड का कर्तव्य; "मैसूर" "इण्डियन सिविल सर्विस परीक्षा में भारत वासियों को लेने के लिए प्रार्थना;" और "अबिसीनिया के युद्ध का ख़र्च"। इन विषयों पर निबंध लिख कर प्रकाशित किए। "फ़ीमेल नार्मल स्कूल" कायम करने के लिए आप ने सर स्टेफर्ड नार्थ कोट के साथ पत्र व्यवहार किया। और "इण्डियन असोसिएशन के कर्तव्य" तथा "भारत में बांध और नहरों के काम" इन विषयों पर भी लेख लिख कर प्रकाशित किए। इस प्रकार भारत के हितार्थ विलायत में १२-१३ वर्ष कठिन परिश्रम करके सन् १८६९ में, आप भारतवर्ष में लौट आए।

जब आप विलायत से वापस आए तब बम्बई के महाजनों ने आप को एक मान पत्र, कुछ धन और एक पुतला अर्पण किया। मान पत्र में, कृतज्ञता सूचक आप की प्रशंसा और देश सेवा का वर्णन था जो धन आप को दिया गया था वह सब आप ने देश कार्य में लगादिया। यह स्वार्थ त्याग का कितना अच्छा नमूना है!!

बम्बई आने पर भी स्वदेश हित का काम आप बराबर ज्यों का त्यों करते रहे। सन १८६९ में गोंडल के महाराजा के कहने पर आपने भारत की स्थिति पर एक बहुत अच्छी वक्तृता दी। उस में आपने भारत की स्थिति का यथोचित चित्र खींच कर दिखा दिया। इसी वर्ष में आप ने "सन् १८६९ ई० का बम्बई के कपास का क़ानून" इस विषय पर एक बहुत ही अच्छा गम्भीर और प्रभाव शाली लेख लिखा। उस में आप ने यह बात अनेक प्रमाणों से सिद्ध की कि, इस एक्ट के प्रचार होने से इस देश को बहुत हानि उठाना पड़ेगी और प्रजा को

बड़ा दुःख होगा। आप के लेख का परिणाम बहुत ही अच्छा निकला। भारत के स्टेट सेक्रेटरी ने यह एक्ट नामंज़ूर कर दिया। सन् १८७० में आप ने "भारत की आवश्यकताएं" सन् १८७१ में "भारत का व्यापार" और "भारत में वसूली की व्यवस्था" इन विषयों पर लेख लिख कर प्रकाशित किए। इन लेखों के पढ़ने से, अंगरेज़ों को, भारत की राजनैतिक दशा का, बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ। सन् १८७३ में पार्लियामेंट की "सिलेक्ट कमेटी" के सामने, भारत सम्बन्धी कई एक बातों की गवाही देने के लिए आप को विलायत जाना पड़ा। परन्तु एक साल के बाद ही आप फिर भारत में लौट आए। उस समय बड़ोदा राज्य में राज-प्रबंध की बड़ी अव्यवस्था थी। स्वयं महाराज मल्हार राव गायकवाड़ राज्य का काम काज चलाते थे। महाराज ने दादाभाई की बड़ी तारीफ़ सुनी। अतएव जब वे विलायत से सन् १८७४ में वापस आए तब महाराज ने आप को, बुला कर अपना दीवान बनाया। इस से पहले वहां किसी पारसी को, यह स्थान नहीं मिला था। इससे कई एक स्वार्थ-साधन-पटु और कुटिल राज सेवकों को दादाभाई से डाह की जलन उत्पन्न हुई। जब दादाभाई के सत्य, और न्याय के प्रभाव से लोभी और ख़ुशामदी लोगों की दाल न गली तब उन दुष्ट लोगों ने आप के विरुद्ध एक गुप्त व्यूह रचा। उन अधमाधम लोभी राज सेवकों के सामने दादाभाई की सत्यप्रियता, निस्पृहता, स्पष्ट वक्तता, स्वदेश निष्ठा और आन्तरिक शुद्धता कुछ काम न आई! आठ महीने के बाद ही आप ने बड़ोदा राज्य के दीवानी के पद का त्याग कर दिया। आप बड़ोदे में बहुत दिनों तक न रहने पाए, तौभी आप ने वहां प्रजा हित के कई एक काम किए। सुनते हैं कि कर्नल फ़ेयर (जो उस समय बड़ोदा के रेज़िडेंट थे और जिन्हों ने महाराज और उनके दरबार की बहुत कुछ निन्दा पार्लियामेंट की "ब्लूबुक" में प्रकाशित की थी) के साथ दादाभाई का जो वादानुवाद हुआ था उस का यह परिणाम हुआ कि साहब बहादुर रेज़िडेंसी से निकाल दिए गए! यदि आप वहां कुछ समय तक और बने रहते तो बड़ोदा की प्रजा के भाग्य खुल जाते। परन्तु वहां की प्रजा के भाग्य में सुख पाना बदा ही न था। बड़ोदा से दीवान गिरी का पद त्याग कर आप बम्बई आए। वहां सन् १८७५ में,

"बम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन" और "टाउन कौंसल" ने आप को अपना सभासद् बनाया । इसी साल आपने "भारत की दरिद्रता" पर बहुत ही अच्छे दो लेख प्रकाशित किए । ये दोनों लेख भारतवासियों के मनन करने योग्य हैं ।

दादा भाई में अनेक उत्तम गुण हैं । गुणियों का आदर बिना हुए नहीं रहता । अतएव बिना मांगे ही आप को अनेक बड़े बड़े सन्मान सूचक पद घर बैठे ही मिल गए । सन् १८५५ में आप को ग्रेण्ड जूरी का सभासद बनाया गया, सन् १८६४ में बम्बई यूनिवर्सिटी ने भी आपको अपना सभासद बनाया । सन् १८८३ में सरकार ने आपको "जस्टिस आफ़ दी पीस" का ख़िताब दिया । और सन् १८८५ में आपको बम्बई के गवर्नर लार्ड रे ने अपनी कौंसिल का सभासद नियत किया । जिस समय सरकार ने आपको कौंसिल का मेम्बर बनाया उस समय देश के प्रजाहितवादी सारे समाचार पत्रों ने बड़ा आनन्द प्रगट किया था। एक गुजराती पत्र ने इस प्रकार लिखा था कि "पूर्व कालीन शिक्षक मिस्टर दादा भाई एलट्टेंशियों के सिर मौर हैं । यदि वे अपनी सम्मति-स्वतंत्रता को त्याग देते तो आज कल आप किसी सरकारी बड़े ओहदे पर विराजमान होते अथवा पेनूशन पाकर आनन्द से घर बैठते । परन्तु उन्हें स्वहित साधन की अपेक्षा स्वदेश हित करना ही उचित जान पड़ा । उन्होंने स्वहित का त्याग करके अपना ध्यान देश सेवा की ओर रक्खा । पर न तो नसीब ने ही इन के ऊपर कुछ कृपा की और न सरकार ने ही इन के गुणों का आदर करना स्वीकार किया। सच है, सरकारी अधिकारियों को दादाभाई सरीखे अमूल्य-रत्नों की क़ीमत ही क्या मालूम । परन्तु जो सच मुच अपने देश हित की इच्छा रखता है उसे सरकारी मान की परवाह भी नहीं होती । यह बड़ी खुशी की बात है कि इस समय लार्ड रे साहब ने दादा भाई, तेलंग, बदरुद्दीन और रानडे इत्यादि कई एक देशी योग्य पुरुषों को एकत्रित किया है" । भारत के कल्याण के हित, सन् १८८५ में, नेशनल कांग्रेस की स्थापना बम्बई में करने के लिए सब से अधिक उद्योग आप ने ही किया । कांग्रेस का बीजारोपण करने में अग्रेसर आप ही थे ।

सन् १८८६ में आप फिर विलायत गए और वहां पार्लियामेंट में प्रवेश करने का उद्योग करने लगे। पार्लियामेंट में मेम्बर होना और ख़ास कर एक भारत-वासी के लिए बड़ा कठिन काम था। परन्तु आपने "उद्यमेन हि सिध्यंति कार्याणि" इस वचन पर विश्वास करके तन, मन, धन से काम करना आरम्भ किया। इंग्लैण्ड में राजा का अधिकार नियमित है। वहां राज्य का प्रबंध प्रजा के प्रतिनिधि लोगों की मार्फ़त होता है। इन प्रतिनिधियों की जो एक बड़ी सभा है उसे पार्लियामेंट कहते हैं। यही पार्लियामेंट अंगरेज़ी साम्राज्य की कार्य भूमि है। हमारे देश के राजकीय दुःखों का निवारण करना इसी सभा के सभासदों पर अवलम्बित है। भारत की सारी प्रजा का दुःख सुख सब इन्हीं के हाथ में है। अतएव भारत-वासियों के दुःख की राम कहानी जब तक इन को न सुनाई जायगी तब तक राजकीय सुधार की कुछ आशा नहीं। यही सब बातें सोच समझ कर दादा भाई ने अपने मन में ठान लिया कि पार्लियामेंट में प्रवेश करके, वहीं भारत-वासियों की दुर्दशा का चित्र सारे सभासदों के सामने खींच कर बताना चाहिए। तब शायद भारत का कुछ भला हो और लोगों के दुःख दूर हों। बृटिश-राज्य पद्धति बहुत ही शुद्ध और सरल तत्वों पर बनी है। इसी लिए किसी जाति अथवा धर्म का मनुष्य पार्लियामेंट का मेम्बर हो सकता है। परन्तु शर्त यह है कि उस पुरुष का निर्वाचन बृटिश प्रजा द्वारा हो, जिसे निर्वाचन करने का अधिकार प्राप्त हो और वह पुरुष राजभक्त हो।

जब दादाभाई सन् १८८६ में, विलायत गए तब उसी साल वहां पार्लियामेंट के सभासदों का चुनाव हुआ। उस चुनाव में ये भी हालबोर्नवालों की ओर से एक उम्मेदवार (Candidate) बन कर खड़े हो गए और निर्वाचक लोगों को अपने पक्ष में लाने का उद्योग करने लगे। आप ने हालबोर्न निवासी निर्वाचक लोगों के सूचनार्थ एक प्रार्थना-पत्र प्रकाशित किया। जिसमें उनकी उदारता और न्याय प्रियता की यथार्थ स्तुति करके यह सूचित किया गया कि "यदि आप लोग मुझे अपनी ओर से प्रतिनिधि बनाईं तो मुझ पर और मेरे देश पर आप का

बड़ा उपकार होगा" इस के अलावा उन्होंने हालबोर्न टाउन हाल, स्टोअरस्ट्रीटहाल, ओल्डफ़ॅन्डस सेंटमार्टिनलेन, फिनिक्स हाल, इत्यादि स्थानों में बड़ी चित्ताकर्षक और सम्मति देने वालों के मन को लुभाने वाली वक्तृताएं दीं; जिसका परिणाम यह हुआ कि हालबोर्न के कई एक निर्वाचकों ने आप के अनुकूल राय दी। १९ जून को "हालबोर्न लिबरल असोसिएशन" ने ऐसा प्रस्ताव पास किया कि दादा भाई एक योग्य पुरुष हैं, उन्हें अपनी ओर से पार्लियामेंट में भेजना चाहिए। इसके बाद 'वीकली टाइम्स एण्डईको' 'राकडेल आबज़रवर' 'यार्क हेरल्ड' 'पाल माल गज़ट' और 'टाइम्स' इत्यादि बड़े बड़े समाचार पत्रों में आप के सम्बंध में अच्छे अच्छे लेख प्रकाशित होने लगे। इन सब बातों पर से ऐसा मालूम होने लगा कि अब दादा भाई का चुनाव हालबोर्न की तरफ़ से ज़रूर होगा। परन्तु इतना परिश्रम करने पर भी आप को केवल १९०५ निर्वाचकों की सम्मतियां प्राप्त हुईं। आप के प्रतिपक्षी कर्नल एफ़, डङ्कं के पक्ष में ३६५१ सम्मतियां एकत्रित हुईं। इस कारण पार्लिमामेंट में, इस बार आपका प्रवेश न हो सका। परन्तु आपने अपने साहस और धीरज को परित्याग नहीं किया। आप इस कथन के अनुसार कि "प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति" अर्थात् उत्तम पुरुष किसी कार्य का आरम्भ करके उसे बीच में ही नहीं छोड़ देते; फिर भी वे उद्योग करते रहे।

सन् १८८६ के अन्त में, आप फिर भारत में लौट आए। उसी साल कलकत्ते में कांग्रेस की दूसरी बैठक हुई। तारीख़ २७ दिसम्बर को टाउन हाल में यह सभा बड़े समारोह के साथ हुई। स्वागत कमेटी के सभापति स्वर्ग-वासी डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र ने प्रस्ताव किया कि इस साल दादा भाई नौरोज़ी कांग्रेस के सभापति बनाए जांय। सब की सम्मति से दादा भाई कांग्रेस के सभापति नियत हुए। उस समय आप ने बहुत उत्तम और सारगर्भित एक वक्तृता दी; जिससे बहुत कुछ उपदेश देशहित का काम करने वालों को मिल सकता है।

इस प्रकार अपने देश वासियों से सन्मान पाकर, दादा भाई फिर विलायत चले गए और वहां लेख लिख कर और व्याख्यान देकर अपना कर्तव्य पालन करने लगे। आप के उद्योग को देख कर, कई एक उदार अङ्गरेज़ों के मन में, भारत-वासियों की दशा पर कुछ दया उत्पन्न हुई और तभी से ब्रेडला, डिग्बी, केन, एलिस, कालिन, इत्यादि परोपकारी सज्जनों ने इस अभागे देश की दशा सुधारने का बीड़ा उठाया। डिग्बी साहब ने 'लन्दन पोलिटिकल एजेन्सी' नाम की एक सभा स्थापित की। जिसके द्वारा वे लोग भारत की शोचनीय दशा का विचार करने लगे। कांग्रेस में जो प्रति वर्ष प्रस्ताव किए जाते थे वे सब इसी सभा द्वारा अंगरेज़ों को बताए जाते थे। सन् १८८७ में, बाबू सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, मिस्टर नारायण रावचन्दावर कर और मिस्टर रंगराव मुधोलकर भारत से विलायत गए और वहां इन्होंने दादा भाई की सहायता से कांग्रेस के उद्देश्य और उसके विषय में कई एक और बातें अंगरेज़ों को समझाईं। भारत की भलाई का इतना उद्योग हो रहा था परन्तु दादा भाई इस से सन्तुष्ट न थे। आप का विचार था कि जब तक भारत की दुर्दशा किसी भारतवासी द्वारा पार्लियामेंट में न सुनाई जायगी तब तक किसी प्रकार की सफलता नहीं हो सकती। आप सदैव यही कहते हैं कि, हमें जो युद्ध करना है उसके लिए पार्लियामेंट ही रणभूमि है।

सन् १८८९ में पार्लियामेंट की मेम्बरी का फिर चुनाव हुआ। इस बार आपने अपना नाम सेंट्रल फिसबरी की ओर से उम्मेदवारों में दाख़िल कराया। निर्वाचकों को अपने पक्ष में लाने के लिए आपने वहां बहुत से व्याख्यान दिये।

भारत के भूतपूर्व लार्ट रिपन और बम्बई के भूतपूर्व गवर्नर लार्ट रे ने इस बार आपकी बहुत सहायता की। स्वर्गवासी ब्रेडला साहब की कन्या मिसेस ब्रेडलाबानर और विदुषी फ्लारेन्स नाइटिङ्गल ने आप के लिए बहुत परिश्रम उठाया। जोलाई सन् १८९२ में आप पार्लियामेंट के सभासद नियुक्त हुए।

दादा भाई के मेम्बर होने से भारतवासियों को बड़ा आनन्द हुआ। भारत के समाचार पत्रों ने बड़ी ख़ुशी के साथ इस सुसमाचार को देश भर में बिजली की तरह शीघ्रता के साथ फैला दिया। ग्लेडस्टन, रिपन, रे, इत्यादि बड़े बड़े अंगरेज़ों को भी बड़ा हर्ष हुआ।

दादा भाई ने पारसी कुल में जन्म लेकर भारत की कितनी भलाई की, यह बात सब पर प्रगट है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" कहावत आप ने सच्ची करके दिखा दी। अभी आपने हाल ही में एक छोटी सी अपनी जीवनी लिख कर प्रकाशित की है। उस में आप ने लिखा है कि, मुझे जो कुछ विद्या, मान और बड़ाई प्राप्त हुई वह सब मेरी माता की चेष्टा का फल है। आप लिखते हैं कि "सच तो यह है कि अब मैं जो कुछ हूं अपनी माता की बुद्धि और चेष्टा का फल हूं"। आप अपनी माता के कितने कृतज्ञ हैं यह बात आप के वाक्यों से उत्तम प्रकार से प्रगट होती है। यथार्थ में माताओं की शिक्षा बिना सन्तान का उच्च हृदय होना बड़ी कठिन बात है।

सन् १८९३ में, कांग्रेस की ९ वीं बैठक लाहौर में हुई उसमें आप सब लोगों की सम्मति से फिर कांग्रेस के सभापति नियत हुए। देशवासियों ने दुबारा आप को कांग्रेस का सभापति बना कर इस तरह पर अपनी कृतज्ञता प्रगट की। यही नहीं, वरन् कई वर्षों से आप के जन्म दिन की ख़ुशी भी मनाई जाती है, इस साल ४ सितम्बर सोमवार के दिन आप ८० वर्ष के पूरे होगये और आपने ८१ वें वर्ष में पैर रक्खा। इसी का आनन्द मनाने के लिए बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, प्रयाग, लखनऊ, बनारस, बेलारी इत्यादि स्थानो में सभाएं हुई और विलायत में आप के पास बधाई के तार भेजे गए और आप के दीर्घ जीवन के लिये ईश्वर से प्रार्थना की गई। बम्बई की सभा में मिस्टर गोखले ने कहा कि "जो लोग अपनी मातृभूमि की भलाई करना चाहते हैं उनको चाहिए कि दादा भाई नौरोज़ी के पथ का अवलम्बन करें।" मिस्टर गोखले के ये शब्द कितने मनोहर और स्मरण रखने योग्य हैं। एक अख़बार ने आप के बाबत कैसा अच्छा लिखा है, वह लिखता है कि "दादा भाई, ८० साल

कि बूढ़े होगए। इस समय पर भारतवासियों के लिए इतनी उमर बड़ी से बड़ी है। इतनी उमर के बूढ़े इस देश में दर्शन के योग्य रह जाते हैं। उनसे कोई काम नहीं लेना चाहता। परन्तु हम भारतवासियों की इतनी हीन दशा है कि हम अब भी दादाभाई से काम लेना चाहते हैं। और काम भी कैसा? राजनीति का; जो सब कामों से बड़ा कठिन और सिरतोड़ काम है। अभी तक भारत में ऐसे लोग तय्यार नहीं हुए जो दादा भाई का काम करें और उन्हें आराम दें।"

यथार्थ में इतने वृद्ध होजाने पर भी, आप देशहित के लिए जवानों से बढ़ कर काम करते हैं किसी कवि ने ठीक कहा है :—

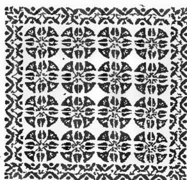
ऐसो परमार्थी पुरुष, और न देख्यो कोय ।
जिन निज तन मन धन सबै, अर्प्यो लोगन होय ॥
आर्यावर्त समग्र हम, आलोक्यो धरिचित्त ।
दादा सो दादाहि इक, और न पुरुष उचित्त ॥

एक कवि ने आप को इस प्रकार आशीर्वाद दिया है :—

चिरजीवी रहि वर्ष शत, करो सुयश कृति आप;
जामें भारत वर्ष के, बाढ़हि पूर्ण प्रताप ।

हम भी तथास्तु कह कर इस लेख को समाप्त करते हैं ।

—:०:—



जस्टिस बदरुद्दीन तय्यब जी

न रत्नमाप्नोति हि निर्मलत्वं,
शाणोपलारोपणमन्तरेण* ।


स प्रकार रत्नों को परखने के लिए, उसे सान पर खराद कर खोटे खरे का निश्चय करते हैं इसी प्रकार मनुष्यों के गुणों की परख के लिए, दुःख अथवा समय कसौटी है। जब मनुष्य के ऊपर कोई दुःख आकर पड़ता है तब उसके धीरज, साहस, विद्या और बल सब की परख स्वयं हो जाती है। समय पड़ने पर जिसका धीरज और साहस नहीं छूटता जो अपने कर्तव्य कर्म में एकसां लगा रहता है वही आदर्श पुरुष कहलाता है और उसी के गुणों का विकास होता है। मिस्टर बदरुद्दीन तय्यब जी जब विलायत से बैरिस्टरी की परीक्षा पास करके आए उस समय बैरिस्टरी के व्यवसाय में जैसा चाहिए वैसा आपको लाभ नहीं हुआ परन्तु तो भी आप बराबर धीरज और साहस के साथ काम करते रहे और उसका परिणाम बहुत ही अच्छा निकला; जिसका उल्लेख हम आगे करेंगे।

आप का जन्म ८ अक्तूबर सन् १८४० ईस्वी को खम्भात में हुआ। आप के पूर्वज अरब के रहने वाले थे। आप के पिता तय्यबजी भाई मियन बम्बई में व्यापार करते थे। बम्बई के प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यापारियों में आपके पिता का भी नाम था। आज आप जिस उच्च आसन पर विराजमान हैं वह सब आप के पिता की शिक्षा का फल है। उन्होंने अपने सब लड़कों को देश काल के अनुसार शिक्षा दिलाने में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं रक्खी। उन्होंने अपने सब लड़कों को, विलायत भेज कर योग्य शिक्षा दिलाई। उनमें से मिस्टर कमरुद्दीन तय्यबजी सालिसीटर और बदरुद्दीन तय्यब जी बैरिस्टरी की परीक्षा विलायत से पास कर आए। यह बात मुसलमान समाज के शिक्षा संबन्ध में विचार करने से तय्यब जी भाई मियन का कार्य अधिक गौरव और प्रशंसा के योग्य है।

---

* बिना सान पर खरादे रत्न में उज्ज्वलता नहीं आती।

बदरुद्दीन तय्यब जी ने कुशाग्र-बुद्धि होने के कारण, उर्दू और फ़ारसी भाषा बहुत ही जल्द बम्बई के दादा मखर के मदरसे में सीख ली। उर्दू और फ़ारसी पढ़ चुकने के बाद, आप अंगरेज़ी भाषा सीखने के लिए "एलफिन्स्टन इन्स्टिट्यूट" में भेजे गए। अंगरेज़ी भाषा के अच्छे ज्ञाता हो जाने के पश्चात् आप के पिताने आपको केवल १६ वर्ष की उमर में विलायत पढ़ने के लिए भेज दिया। इस उचित और उपयोगी काम करने के बदले में तय्यब जी भाई मियन की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है! अपने बालकों के भावी कल्याण के निमित्त, स्नेह और मोह को तिलांजली देकर केवल १६ वर्ष की उमर में इतनी दूर विलायत पढ़ने के लिये भेज देना कितने साहस का काम है! भारतवासी अपनी सन्तान को अपनी आंखों के सामने से दूर करना नहीं चाहते, स्वदेश में ही दूर पढ़ने के लिए नहीं भेजते, फिर विलायत गमन उनके लिए एक बड़ा काम है। इस देश में बहुत से ऐसे धनाढ्य हैं जो अपने लड़कों को विलायत भेज कर, उचित शिक्षा दिलवा सकते हैं; जिस से उनका और उनके देश दोनों का कल्याण है। परन्तु ऐसे उत्तम और ज़रूरी काम करने का उन्हें साहस नहीं पड़ता! वे झूठे स्नेह में इतने बद्ध हो रहे हैं कि उन्हें उस स्नेह के सामने अपने सन्तान का भावी सुख और देश का हित कुछ भी नहीं सूझ पड़ता। भारत के ग़रीब लोगों की सन्तान धनाभाव के कारण अन्यदेशों में जाकर उच्च शिक्षा नहीं प्राप्त कर सकते, परन्तु जिनके पास धन है उनकी सन्तान मोह के वश होकर कुछ भी नहीं लिख पढ़ सकती। माता पिता का अनुचित स्नेह ही सन्तान की भावी उन्नति और उच्च आशा का नाश करता है। यही स्नेह भारत की तरक़्क़ी होने में बाधक हो रहा है। जापान की तरह अगर इस देश के लोग भी अपनी अपनी सन्तान को विदेश भेज कर हर एक प्रकार की उच्च शिक्षा दिलावें तो उनकी सन्तान को ज़रा ज़रा सी बात के लिए विदेशियों का मुह न ताकना पड़े। इस समय तो जापान की मिसाल हमारे सामने है। परन्तु उस समय जबकि भारत में बिलकुल अंधेरा छाया हुआ था तय्यब जी ने अपने लड़कों को विलायत पढ़ने

के लिये भेज दिया था। क्या उन्हें अपनी सन्तान के साथ बिलकुल स्नेह नहीं था। परन्तु यह बात नहीं, उन्हें अपने लड़कों के भावी कल्याण और सुख की ओर अधिक ध्यान था। इसी लिए उन्होंने इतनी कम उमर और इतनी दूर विलायत में अपने लड़कों को भेज दिया। ऐसे पुरुषों को धन्य है और वहां जाकर रहने वाले को भी। बदरुद्दीन तय्यब जी ने विलायत में जाकर "न्यूवरी हाईपार्क कालिज" में प्रवेश किया वहां आपने लन्दन यूनिवर्सिटी की प्रवेशक परीक्षा पास की। इस परीक्षा में पास हो जाने के बाद आप उच्च शिक्षा पाने के लिए कालिज में भरती हुए। परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि वहां आप के ऊपर एक संकट उपस्थित हुआ। सन् १८६४ ईस्वी में आप बीमार हो गए अतएव आप को स्वदेश वापस आना पड़ा। एक वर्ष में आप को आराम होने के बाद ही आप फिर शीघ्र ही विद्याभ्यास के लिए विलायत चले गए। परन्तु डाक्टरों ने कहा कि कालिज में पढ़ने से फिर आप का स्वास्थ्य जल्द खराब हो जायगा। और ख़ास कर आप की आंखों पर ज्यादा पढ़ने का बहुत ही बुरा परिणाम होगा डाक्टरों की ऐसी राय होने पर बदरुद्दीन तय्यब जी ने उच्च शिक्षा प्राप्त करने का विचार छोड़ दिया। और क़ानून पढ़ने के लिए आप "मिडिल टेम्पल" नामक क़ानूनी मदरसे में भरती होगये। यहां आप ने दो वर्ष शिक्षा पाई और बैरिस्टरी की परीक्षा पास की।

नवम्बर सन् १८६७ में आप बैरिस्टरी की परीक्षा पास करके बम्बई वापस आए। उस समय लोगों का विचार था कि बैरिस्टरी करना गोरों का ही काम है। नेटिव बैरिस्टर की ओर लोग बहुत ही कम ध्यान देते थे। अब भी कहीं कहीं पर लोगों का ऐसा ही विचार बना है। गोरे बैरिस्टर को ही लोग ज्यादातर मुकदमों में बुलाते हैं। अब भी लोगों का ऐसा ही विचार है तो उस समय इस बात का बहुत ही ख़याल किया जाता होगा। उस समय बदरुद्दीन तय्यब जी पहले नेटिव बैरिस्टर। तरुण और मुसलमान जाति के। फिर क्या कहना? लोग हर एक बात में आप को दिक़ करते। परन्तु

जिस प्रकार रत्न की परीक्षा खराद पर चढ़ने से होती है उसी प्रकार अपने अपने शुद्धाचरण और बुद्धिमानी से सर्वसाधारण को प्रसन्न कर लिया। नेटिव बैरिस्टर होने के कारण आप की बाबत जो ख़राब राय लोगों ने क़ायम की थी उसे धीरे धीरे उन्होंने दूर कर दिया। बदरुद्दीन तय्यब जी ने अपने कर्तव्य कर्म द्वारा लोगों पर यह प्रगट करके दिखला दिया कि, भारतवासी भी बैरिस्टरी का काम उतनी ही उत्तमता और योग्यता के साथ कर सकते हैं जितनी उत्तमता के साथ यूरोपियन लोग कर सकते हैं। सच बात तो यह है कि बदरुद्दीन तय्यब जी ने बैरिस्टरी करने का मार्ग भारतवासियों के लिए साफ़ कर दिया। दस वर्ष तक आप बराबर बैरिस्टरी का काम करते रहे। एक समय आप एक फ़ौजदारी मुक़द्दमा में मुद्दई की ओर से वक़ालत करने को बम्बई हाईकोर्ट में गए। उस मुक़द्दमे की बाबत आपने बहुत ही अच्छा कथन किया। जज मिस्टरवेस्ट्राप और जूरी आप के भाषण से बहुत ही प्रसन्न हुए। जिस का आप ने पक्ष ग्रहण किया था उसे जज साहब ने निरपराधी समझ कर छोड़ दिया। इस पर बम्बई गजट के सम्पादक ने कुछ आप की बुराई पत्र में छाप दी। परन्तु कई एक दिन बाद जब जस्टिस वेस्ट्राप की हाईकोर्ट में बैठने की पारी आई तब जज साहब ने बदरुद्दीन तय्यब जी को बुला कर कहा कि आप को आज यहां देखने से मुझे बड़ा आनन्द हुआ। अनायास बम्बई गज़ट का रिपोर्टर भी वहां मौजूद था। उसी के सामने जज साहब ने कहा कि उस रोज़ के मुक़द्दमें में जो आप ने भाषण किया था उस कथन को बम्बई गज़ट के सम्पादक ने ख़राब बतलाया परन्तु यह उसका लिखना ग़लत है। उस के लिखने से शायद आप के काम काज में कुछ बाधा पड़े अथवा आप को कुछ नुक्सान पहुंचे परन्तु इसका मैं कोई कारण नहीं देखता। उस बाबत में आप से कहता हूं कि आप ने वह मुक़द्दमा बड़ी उत्तमता के साथ चलाया। इतना ही नहीं वरन जूरी के सामने जो आपने उत्तम भाषण किया उसी से अपराधी बिना क़सूर साबित हुआ और वह छोड़ दिया गया। जज साहब के शब्दों को सुन कर गज़ट के रिपो-

टर का चेहरा उतर गया और वह अपना सा मुंह लेकर वहां से खिसिया कर चला गया।

बदरुद्दीन तय्यब जी ने दस वर्ष तक सिवाय वैरिस्टरी के काम के और कुछ रोजगार नहीं किया। हम ऐसा ऊपर लिख चुके हैं। इतने दिनों तक आप ने बराबर अपने रोज़गार की ओर ही ध्यान रक्खा। सर्व साधारण के हानि अथवा लाभ की ओर आप ने बिलकुल ध्यान नहीं दिया। परन्तु सन् १८७९ में सरकार ने मंचिस्टर के माल पर कर माफ़ कर देने का विचार किया। ऐसा करने से बम्बई के व्यापारियों को बड़ा नुक्सान था। अतएव सबों ने मिल कर एक सभा की। उस सभा में बदरुद्दीन तय्यब जी ने जो व्याख्यान दिया वह बहुत ही प्रभाव शाली हुआ। इस से आप की चारों ओर तारीफ़ होने लगी। परन्तु सरकार के ऊपर इन के व्याख्यान का कुछ भी असर न हुआ। सरकार को जो कुछ करना था वह उसने किया। परन्तु बदरुद्दीन तय्यब जी ने जो अपना कर्तव्य पालन किया वह विस्मरण करने योग्य नहीं है प्रजा का कहना न्याय दृष्टि से कहां तक ठीक है इस बात का विचार करना राजकर्ताओं का कर्तव्य है परन्तु विजातीय राजकर्ताओं के होने से वे अपने जातिबांधवों का नुक्सान करना किसी तरह से स्वीकार नहीं करना चाहते। फ़िर उनके सामने न्याय और युक्ति किस काम की? फिर भला बदरुद्दीन तय्यब जी का व्याख्यान और वह भी भारत-वासियों की भलाई के सम्बध में? फिर वह कितना ही उत्तम, न्याय दृष्टि से परिपूरित और भारत की भलाई का हो उस की ओर कौन देखे? और उसका परिणाम ही क्या? इस बाबत अधिक कहने की क्या ज़रूरत।

ऊपर कही हुई स्थिति में प्रजा का पक्ष लेकर कोई काम करना कितना कठिन है? इस बात को वे ही लोग खूब जानते हैं जिनको प्रजा की भलाई का कुछ काम करना पड़ता है। प्रजा की बात को हम मानते हैं, प्रजा के सुख से हम सुखी हैं, इस प्रकार का विधान हम सरकारी राज दंडधारी पुरुष से लेकर छोटे से छोटे दरजे के सरकारी नौकर

द्वारा-सुनते और देखते हैं। परन्तु उनके कर्म इस से विपरीत देखे जाते हैं। ऐसी स्थिति में प्रजा के दुःख को सरकार के सन्मुख, बड़ी बुद्धिमानी और साहस के साथ ईश्वर पर भरोसा करके प्रकट करने का व्रत बदरुद्दीन तय्यब जी ने स्वीकार किया है। आप प्रजा का दुःख दूर करने के लिए व्रती हुए हैं अतएव आपका व्रत सुफल हो और आप के द्वारा प्रजा का दुःख दूर हो यह हमारी कामना है।

सन् १८८२ में सरजेम्स फर्ग्युसन साहब बम्बई के गवर्नर ने बदरुद्दीन तय्यब जी को अपनी कौंसिल का सभासद बनाया। वह समय बड़ा नाज़ुक था। आत्म-शासनप्रणाली का अधिकार प्रजा को देने के लिए लार्डरिपन ने एक नया प्रस्ताव पास किया। इसके लिए क़ानून बनने का मसौदा बम्बई सरकार की कौंसिल में आया। लार्ड रिपन ने भारत की प्रजा को अधिकार दिए ज़रूर! परन्तु क़ानून का मसौदा तय्यार करते समय सरकारी अधिकारियों ने बड़ा गोलमाल, कर दिया। उस समय कौंसिल में प्रजा की ओर से मान्यवर मेहता तैलंग और बदरुद्दीन तय्यब जी सरीखे प्रजाहितैषी लोग मेम्बर थे। इस कारण सरकारी मेम्बरों ने जैसा चाहा वैसा नहीं होसका। परन्तु हां, उन लोगों ने अपनी शक्ति के अनुसार बहुत कुछ मनमाना कर लिया। इस मौक़े पर बम्बई के गवर्नर सरजेम्स फर्ग्युसन साहब ने बदरुद्दीन तय्यब जी की बड़ी तारीफ़ की। इसी दिन से लोगों को यह भली प्रकार ज्ञात हो गया कि बदरुद्दीन तय्यब जी बहुत ही उत्तम वक्ता हैं। सन् १८८३ व ८४ में जितनी सभायें बम्बई में हुईं उन हर एक में बदरुद्दीन तय्यब जी ने व्याख्यान दिए। और हर समय श्रोताओं ने आप की वाह वाह की। फ़ाम जी कावस जी हाल में सिविल सर्विस परीक्षा की बाबत, इलबर्ट बिल की बाबत और रिपन साहब के सम्मानार्थ जो सभा बम्बई में हुई उस की बाबत आपने बहुत ही अच्छे २ व्याख्यान दिए। इस से उनकी अलौकिक बुद्धिमानी की तारीफ़ सब लोग करने लगे।

अब धीरे धीरे आप ने अपने कामों से भारतवासी प्रजा का मन मोह लिया और देश के बड़े २ विद्वान् आप का आदर सत्कार

करने लगे तब आप को भारतीय प्रजा की ओर से सम्मान देने की बारी आई। कांग्रेस के काम के साथ आप को पूरी २ सहानुभूति थी। कांग्रेस के हर एक काम और प्रस्ताव को आप बड़ी आदर की दृष्टि से देखते थे। कांग्रेस के मतों का प्रचार करने में आप दत्त-चित्त से लगे रहते थे। अतएव ऐसे देश हितैषी, विद्वान और कांग्रेस भक्त को सभापति बनाने का लोगों ने प्रस्ताव किया। बड़ी खुशी के साथ सब लोगों ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। और सन् १८८९ में जो कांग्रेस की बैठक मद्रास में हुई लोगों ने आप को उसका सभापति बनाया। वहां पर सभापति के नाते से आपने जो व्याख्यान दिया वह बहुत ही मनोहर था। सब लोगों ने उसे बहुत ही पसन्द किया।

बदरुद्दीन तय्यब जी का काम अपनी जाति वालों की ओर भी खूब रहता था आपका विचार है कि हमारे धर्मबंधु मुसलमान लोग हर एक बात में सब से पीछे हैं। उनको हर प्रकार की सहायता मिलनी चाहिए। उनको योग्य शिक्षा मिलना चाहिए। इस बात की चिन्ता रात दिन आप को बनी रहती थी। इस के लिए वे सदैव प्रयत्न भी किया करते थे। आप के प्रयत्न और परिश्रम का फल भी कुछ न कुछ निकला है। "अंजुमन–इसलाम" के द्वारा बहुत से मुसलमान भाई विद्या पाकर विद्वान् हुए हैं। इसी की सहायता से वकील, बैरिस्टर, और एम०, ए०, बी० ए० बहुत से मुसलमान भाई दिखाई पड़ने लगे हैं। यह सब केवल बदरुद्दीन तय्यब जी की ही कृपा और परिश्रम का फल है। विद्या–दान की ओर आप का कितना ध्यान था यह बात विचार करने योग्य है।

जिस प्रकार प्रजा ने आप को कांग्रेस का सभापति बनाकर आप का आदर किया उसी तरह सरकार ने भी आप के गुणों की क़दर की। कुछ दिनों तक सरकार ने आप को बम्बई हाईकोर्ट का जज नियत किया। इस-काम को भी आप ने बड़ी योग्यता के साथ चलाया। आप के काम से सरकार और प्रजा दोनों सन्तुष्ट रहे। भारतवासी न्यायाधीश का काम किस प्रकार उत्तम रीति से करते हैं यह बात आपने करके दिखला दी।

सर फ़ीरोज़ शाह एम मेहता के० सी० आई० ई० ।



दानाय लक्ष्मी सुकृताय विद्या चिन्ता परब्रह्म विचिन्तनाय ।
परोपकाराय वचांसि यस्य धन्यस्त्रिलोकी-तिलकः स एकः ॥ *



भारतभूमि का उद्धार करने के लिए, अनेक सत्पुरुषों ने, अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया । महाराज शिवा जी, महाराणा प्रताप सिंह, महाराणा सांगा, पंजाब केसरी रंजीत सिंह, महाजी सेंधिया इत्यादि वीरों ने देश के लिए क्या क्या काम किए यह बात इतिहासज्ञ पाठक भली भांति जानते होंगे । परन्तु देश के दुर्भाग्य से उनके वंशजों ने उनके व्रत का प्रति-पालन ठीक ठीक नहीं किया और इसी कारण इस देश की दशा दिनों दिन बिगड़ती गई। परन्तु, गतं न शोच्यम् । आज कल हमारा देश परतंत्र ज़रूर है परन्तु मुसलमानी राज्य की तरह ज़ुलुम अथवा अन्याय नहीं होता । यह सन्तोष की बात है । हमें अपने सुख अथवा दुःख सरकार से निवेदन करने का अधिकार हरवक्त दिया गया है । हमारी राष्ट्रीय सभा के नेतागण सरकार को हमारा दुःख सदैव बताते रहते हैं । हमारे दुःखों को सरकार नहीं सुनती ऐसा भी नहीं है । नमक के महसूल और इनकम टेक्स का कम होना हमारी राष्ट्रीय सभा के निवेदन का ही फल है । आज कल के जातीय नेताओं में फ़ीरोज़ शाह मेहता का भी नाम स्मरण रखने योग्य है । आप भी भारत की भलाई का निरन्तर उद्योग किया करते हैं ।

---

* धन देने के लिए, विद्या अच्छा काम करने के लिए, ध्यान ब्रह्म के विचार के लिए और वचन पराए उपकार के लिए, जिस का है, वह धन्य है ।

आप का जन्म ५ अगस्त सन् १८४५ को बम्बई में हुआ। आप के पिता बम्बई की प्रसिद्ध व्यापारी कम्पनी "कामा एण्ड को" के हिस्सेदार थे। इस कम्पनी द्वारा आप को बहुत अच्छा लाभ होता था। उनको व्यापार करने के सब दांव पेंच मालूम थे। व्यापार शिक्षा का महत्व उन्हें पूर्ण रूप से ज्ञात था। इसी कारण उन्हें विद्या की ओर भी अधिक रुचि थी। उन्होंने व्यापार दृष्टि से इतिहास, भूगोल पर बहुत ही उत्तम कई पुस्तकें लिखीं। उनके समय के युवक पारसी लोग उनकी लिखी पुस्तकों को उत्साह पूर्वक पढ़ते थे। आप की बुद्धि बड़ी तीव्र है अतएव आरम्भिक शिक्षा आपने बहुत ही जल्द प्राप्त करली। अठारह वर्ष की उमर में आपने सन् १८६१ में बम्बई विश्वविद्यालय की प्रवेशिक और सन् १८६४ में एलफिन्स्टन कालिज से बी० ए०, परीक्षा पास की। बी० ए०, पास होने के छ महीने बाद ही आपने बड़ा परिश्रम करके एम० ए० पास किया। इसके बाद एल्फिन्स्टन कालिज के आप फैलो नियत हुए। कालेज के मुख्याध्यापक सर अलेक्ज़ैंडर ग्रांट आप से बहुत खुश थे। अतएव रुस्तम जी जमशेद जी जीजी भाई के ट्रैवलिंग 'फ़ेलोशिप' मिलने के लिए उन्होंने सिफ़ारश की। आप पारसी जाति में सब से पहले एम० ए०, हैं; अतएव विलायत जाकर क़ानून का अध्ययन करके बैरिस्टरी पास कर आवें ऐसी उनकी इच्छा थी। परन्तु मेहता के पिता को यह बात पसन्द नहीं आई, स्वाभिमानी होने के कारण उन्होंने दूसरे का सहारा लेकर अपने लड़कों को विलायत भेजना पसन्द नहीं किया। परन्तु ग्रांट साहब के उद्योग से फ़ीरोज़शाह मेहता बैरिस्टरी पास करने के लिए विलायत गए।

विलायत जाकर मेहता महोदय ने वहां तीन वर्ष क़ानून का अध्ययन किया। और सन् १८६८ ई० में लिंकन्स इन से बैरिस्टरी की परीक्षा पास की। महाशय दादा भाई नौरोजी और कलकत्ते के प्रसिद्ध बैरिस्टर बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी की सहायता से मेहता ने 'लन्दन लिटरेरी सोसाइटी' की स्थापना की। इस सोसाइटी में आप ने भारत की शिक्षा पद्धति पर एक निबन्ध पढ़ा। उस समय आप की उमर

बहुत थोड़ी थी। परन्तु जो भाव आपने अपने लिखे हुए निबंध में प्रदर्शित किए उन से आप की मार्मिकता और बुद्धिमता का पूरा पूरा पता लगता है।

जिस दिन से मेहता महोदय विलायत से बैरिस्टरी पास होकर बम्बई वापस आए उसी दिन उनके परम पूज्य अध्यापक-सर ए० ग्रांट को मान पत्र देने के लिए 'फ्राम जी कावस जी इन्स्टिट्यूट, हाल में सभा होने वाली थी। सर ग्रांट, एडन बरो विश्वविद्यालय के मुख्याध्यापक नियत हुए अतएव वह विलायत जाने को तय्यार थे। यह बात मेहता को जहाज़ पर से उतरते ही मालूम हुई। आप तुरन्त ही सभा में जाकर हाज़िर हुए। सर ए० ग्रांट, मेहता महोदय को देख कर बहुत ही प्रसन्न हुए।

फ़ीरोज़शाह मेहता बम्बई आकर अपना बैरिस्टरी का काम करने लगे। बैरिस्टरी के काम में उन्हें जैसे जैसे अनुभव प्राप्त होता गया वैसे वैसे लाभ और यश भी प्राप्त हुआ। आज कल बम्बई के प्रसिद्ध प्रसिद्ध बैरिस्टरों में आप का भी नाम है।

मेहता महोदय अन्य वकीलों की तरह, केवल पेट पालनार्थ ही काम नहीं करते। आप अपनी जन्मभूमि भारत के हित के लिए यथासाध्य उद्योग किया करते हैं। मन, वचन, कर्म द्वारा राष्ट्रीय हित साधन के प्रयत्न में, आप अपना बहुत सा समय लगाते हैं। आप जितने काम करते हैं उन सबों में देश की भलाई का काम सब से श्रेष्ठ समझते हैं। सब से पहिले देशहित का काम आप ने यह किया कि, सन् १८६९ में, आप ने भारत के प्रसिद्ध वृद्धभक्त दादाभाई नौरोज़ी को द्रव्य द्वारा सहायता पहुंचाई। आप स्वतः धन देकर ही सन्तुष्ट न हुए। बम्बई के बड़े बड़े सेठ साहूकारों से भी आप ने दादाभाई को धन की सहायता दिलवाई। इस काम में आप को बहुत ही बड़ा यश प्राप्त हुआ। और आप की कीर्ति का प्रसार आरम्भ हुआ।

सन् १८६८ में, बम्बई के गवरनर सर वाल्टर फ्रियर ने बम्बई नगर के लोगों को आत्म-शासन प्रणाली के अधिकार प्रदान किए। इतके दो

वर्ष बाद, सन् १८७१ में, म्युनिसिपल कमिश्नर मिस्टर आर्थर क्राफ़र्ड के मन में यह तरंग उठी कि, बम्बई नगर पैरिस सरीखा होना चाहिए। बम्बई की सड़कें, घर सब नई बनवाई जावें। कहीं कहीं पर सुन्दर तालाब, नवीन पुल, उत्तम उत्तम बाग बगीचे, विशाल भवन और क्रय विक्रय योग्य अच्छे अच्छे गंज, बाज़ार इत्यादि २ तय्यार हों। परन्तु इस तरंग में उन्हें यह न सूझी कि म्युनिसिपैलटी के पास धन है अथवा नहीं? यदि है तो कितना? और हमारा मनोरथ उतने धन से पूरा हो सकेगा या नहीं? इस बाबत उन्होंने बिलकुल विचार नहीं किया। इस कारण बम्बई म्युनिसिपैलिटी पर बहुत ही अधिक कर्ज़ हो गया। इसका परिणाम यह निकला कि, यह बात भारत सरकार के कान तक पहुंची। कमिश्नर साहब अपने काम से अलग कर दिए गए। यह होने पर "फ्राम जी कावस जी इन्स्टिट्यूट" में "आत्मशासन-प्रणाली के नियमों का सुधार" इस विषय पर मेहता ने एक बहुत ही उत्तम प्रभावशाली निबंध पढ़ा। उस निबंध द्वारा आप ने यह सिद्ध किया कि, ऐसे कामों की देख भाल रखने के लिए एक कमेटी बनाई जावे और एक एक्ज़िक्यूटिव कमिश्नर नियत किया जावे, जो सब काम करे। कई एक आदमियों के हाथ में काम देने से लोगों के विचार और मत भिन्न होने के कारण काम ठीक ठीक व्यवस्थानुसार नहीं होता। इस बात को आप ने बहुत ही उत्तमता के साथ वर्णन किया। परन्तु मेहता महोदय के उद्देश्य को उन लोगों ने जो उस समय सभा में उपस्थित थे बिलकुल नहीं समझा। अतएव उस समय उन्होंने मि० मेहता की खूब हंसी उड़ाई। लोगों ने आप पर यह दोषारोपण किया कि, आप कमिश्नर क्राफर्ड साहब के साथी हैं, उनके अनुयायी और मददगार हैं। परन्तु सरकार ने आप के निबंध का मतलब समझ कर, सन् १८७२ में नवीन म्युनिसिपल ऐक्ट पास किया। जो बात सन् १८७० में, मेहता महोदय ने कही थी और उस पर लोगों ने उनकी दिल्लगी की और हंसी उड़ाई, वही बात अब सर्वमान्य हुई। राजा और प्रजा दोनों ने आप के कथन को स्वीकार किया। जिन लोगों ने उस समय उनकी हंसी की थी वेही

अब लज्जित हैं। ये अब अपनी भूल के लिए पश्चात्ताप करते हैं। फीरोज़शाह मेहता अब तक आत्मशासन-प्रणाली के नियमों पर विचार किया करते हैं और उसके सुधार का उपाय सोचते रहते हैं।

सन् १८७२ व ७३ में, 'टायर ऑफ़ सायलेंस रायट केस' नामक प्रसिद्ध फ़ौजदारी मुक़दमे में आप ने वकालत का काम किया। इस मुक़दमे में आप के क़ानूनी ज्ञान का बहुत ही अच्छा परिचय लोगों को मिला। इस मुक़दमे में आप को यश प्राप्त हुआ। इस मुक़द्दमे की दूसरी ओर प्रसिद्ध बैरिस्टर एन्स्टे साहब थे। उस समय एन्स्टे साहब ने मेहता की बाबत यह भविष्यत वाणी कही थी कि, इन्हें भविष्यत में अच्छा यश और लाभ प्राप्त होगा। एन्स्टी साहब की बात आज अक्षर २ सत्य हुई। इसी प्रकार मेहता ने 'सूरत रायट केस' का भी काम किया। इस केस के द्वारा आप का नाम बम्बई प्रान्त भर में प्रसिद्ध हो गया। इसी कारण आप को बैरिस्टरी का काम बहुत ही अधिक मिलने लगा। यहां तक कि आप को अपने काम से बहुत कम फ़ुरसत मिलती है। बहुत से मुक़दमे आप को मजबूर होकर वापस कर देना पड़ते हैं। काम की कसरत होने के कारण बहुत से लोग आप के पास से निराश वापस जाते हैं। जब कभी आप को किसी का मुक़दमा कसरत काम की वजह से वापस करना पड़ता है तब आप को बड़ा दुःख होता है परन्तु करें क्या, लाचार होकर ही आप ऐसा करते हैं। बैरिस्टरी काम के अलावा और बहुत से सरकारी और इतर काम आप के पास आते हैं। सरकारी क़ानून बनाने वाली सभा के आप सभासद हैं अतएव कोई महीना ऐसा ख़ाली नहीं जाता कि, आप के पास कोई सरकारी क़ानूनी मसविदा देखने और उस पर राय देने के लिए न आता हो।

सन् १८७२, ७३ से, आप की बैरिस्टरी ख़ूब अच्छी चलने लगी है। बैरिस्टरी के काम से आप को फ़ुरसत बहुत कम मिलती है परन्तु देश-हित के काम की ओर आप का ध्यान बराबर बना रहता है। आप देशहित के लिए कभी कभी अपना निज का लाभ भी परित्याग कर देते हैं। राव साहब विश्वनाथ नारायण मंडलीक और नौरोजी फरदोन

जी सरीखे सज्जन पुरुषों के साथ बम्बई म्युनिसिपैलिटी में रह कर आप ने मुम्बापुरी की उत्तम सेवा की । म्युनिसिपैलिटी द्वारा प्राप्त अनुभव से आप अब तक काम करते हैं। सन् १८८४ में आप बम्बई कारपोरेशन के सभापति नियत हुए । उस समय जो आप ने काम किया उसकी बाबत बम्बई के प्रसिद्ध पत्र 'टाइम्स आफ़ इण्डिया' ने लिखा था कि, "यूरोपियन और नेटिव दोनों के विचार से मेहता महोदय ने कारपोरेशन के सभापति का ऐसा उत्तम काम किया जैसा कि अन्य किसी सभापति ने नहीं किया ।"

मिस्टर मेहता बम्बई वासियों की ही सेवा नहीं करते और न केवल बम्बई प्रान्त की, किन्तु भारत की सेवा के लिए भी आप रात दिन उद्योग करते हैं। 'बम्बई प्रेसीडेन्सी ऐसोसिएशन' नाम की एक सभा काशीनाथ त्र्यम्बक तैलंग, तय्यब जी और आप ने मिल कर स्थापित की । इस सभा ने 'इलबर्ट बिल' के समय बहुत ही अच्छा काम किया । और अब भी यह सभा बड़ी उत्तमता के साथ चलती है और इसके द्वारा मेहता महोदय अब भी देश-सेवा करते हैं।

सन् १८८६ में बम्बई प्रान्त के लार्ड रे महोदय गवर्नर थे। उन्होंने फ़ीरोज़ शाह मेहता को बम्बई सरकार की क़ानून बनाने वाली सभा का सभासद बनाया । उस समय भी आप ने सरकारी सभासदों की परवाह न करके प्रजा के पक्ष का समर्थन किया। सन् १८८८ में म्युनिसिपैलिटी ऐक्टबिल सभा के सामने पेश हुआ; उस समय मिस्टर तैलंग भी सभासद थे । इन दोनों सज्जनों ने अपने बहुत दिनों के परिश्रम द्वारा प्राप्त किए हुए अनुभव से आत्म-शासनप्रणाली के नियमों का पालन किया । जिस के कारण सरकार को उस बिल में बहुत कुछ फेरफार करना पड़ा । पहले पहल जो मसविदा कौंसिल के सामने पेश किया गया उससे प्रजा को अधिक कुछ लाभ न था । परन्तु सिलेक्ट कमेटी में मिस्टर मेहता और तैलंग दोनों ही नियत हुए । अतएव इन दोनों सज्जनों ने रात दिन बहुत ही अधिक परिश्रम करके यह बिल जैसा प्रजा को चाहिए था उसके अनुकूल बनाया । परन्तु वह ज्यों का त्यों

पास न हुआ तो भी लोगों के लिए बहुत कुछ अनुकूल और उपकारी बन गया। इस का यश इन दोनों सज्जनों को ही देना चाहिए।

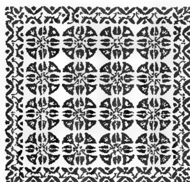
आप को अपने देश की राष्ट्रीय सभासे भी बहुत ही प्रेम है। सन् १८९० में जब छठवीं कांग्रेस की बैठक कलकत्ते में हुई तब आप उसके सभापति बनाए गए। उस समय आप ने सभापति के आसन को ग्रहण करके जो व्याख्यान दिया वो वह बहुत ही उत्तम था। उससे आप की विद्या,वक्तृत्वशक्ति, नीति निपुणता और दूरदर्शिता का बहुत कुछ पता लगता है। उसके पढ़ने से यह साफ़ मालूम हो सकता है कि मिस्टर मेहता अव्वल दरजे के नीतज्ञ हैं। आप के भाषण का असर मिस्टर ब्रायन और केन इन दो प्रसिद्ध अंगरेज़ों पर खूब ही पड़ा। आपके भाषण द्वारा इन दोनों सज्जनों को कांग्रेस का उद्देश्य और देश की दशा अच्छी तरह मालूम होगई। हमारे विचार से जिस किसी विदेशी विद्वान् ने द्वेषरहित होकर भारतराष्ट्रीय सभा के उद्देश्यों को सुना, पढ़ा, अथवा समझा, उसने सभा के कार्य और कार्यकर्ताओं की प्रशंसा की।

सन् १८९२ में कांग्रेस का यह उद्योग सफल हुआ कि सरकारी क़ानूनी कौंसिल में प्रजा द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि भी हों। सरकार ने इस बात को स्वीकार करके इस का क़ानून पास कर दिया कि प्रजा द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि सरकारी क़ानून कौंसिल में रहा करें। इस क़ानून के पास हो जाने बाद मिस्टर मेहता बम्बई कारपोरेशन की ओर से बम्बई प्रान्त की कौंसिल के सभासद हुए। कौंसलर होने के दिनसे अबतक आप बराबर प्रजा के दुःख को सरकार से निवेदन किया करते हैं। जब कभी कोई क़ानून प्रजा के अहित का सभा में पेश होता है तब आप उसका निःशंक हो कर खंडन करते हैं। इस मामले में आप सरकारी कर्मचारियों की अकृपा अथवा नाराज़ी की कुछ भी परवाह नहीं करते। बारह तेरह वर्ष से बराबर आप बम्बई प्रान्त की सभा में सभासद हैं। दो बार आप बम्बई प्रान्त की ओर से भारत सरकार की क़ानून बनाने वाली सभा के सभासद भी रह चुके हैं। आप बहुत बड़े स्वार्थत्यागी भी हैं। जब आप ने यह देखा कि हमारे प्रान्त के नवयुवक गोपाल कृष्ण गोखले

राष्ट्रीय हित साधन के निमित्त बहुत कुछ उद्योग कर रहे हैं तो उनको आगे बढ़ाने और देश सेवा का काम करने के लिए अधिक मौक़ा मिले इस कारण भारत सरकार की कौंसिल से झट इस्तीफ़ा दे दिया। और गोखले महोदय बम्बई प्रान्त की ओर से सभासद चुने जाकर भारत सरकार की क़ानून बनाने वाली सभा के सभासद हुए। यह मिस्टर मेहता के स्वार्थ त्याग की बहुत अच्छी मिसाल है। भारत सरकार की कौंसिल में जो आप ने काम किया उस की सब लोग एक स्वर से प्रशंसा कर रहे हैं। पुलिस ऐक्ट के सुधार करने के लिए जब कौंसिल में मसविदा पेश हुआ तब आप ने उस पर जो अपने विचार प्रगट किए वे बहुत ही उत्तम और उपयोगी थे।

आप ने देश सेवा के साथ२ जो सरकार की सेवा की उस से सरकार भी आप से अधिक प्रसन्न है। सरकार ने आप को के,सी० आई० ई० की उपाधि प्रदान की। सरकार ने आप को सर की पदवी देकर उस से भी आप को भूषित किया। राजा और प्रजा दोनों की भलाई करना ही आप का मुख्य उद्देश्य है। सरकार के उचित विचारों को प्रजा पर प्रगट करके उसे सन्तुष्ट करना और प्रजा के दुःख सरकार को बतला कर प्रजा के सुख की कामना करना बस इसी प्रकार पुण्य कार्य करके अक्षय यश प्राप्त कर रहे हैं।

—+o+—



राव बहादुर पी॰ आनन्द चारलू।



गुणाः कुर्वन्ति दूतत्वं दूरेऽपि वसतां सताम्।
केतकीगंधमाघ्राय स्वयमायान्ति षट्पदाः॥ *

भारतवर्ष देश में विद्वान्, देशहितैषी और साहसी लोग अब पैदा नहीं होते यह बात नहीं है। परन्तु यह देश बहुत बड़ा होने और बड़े २ प्रांतों में विभक्त होने और उन प्रांतों में अलग अलग भाषायें बोली जाने के कारण एक प्रांत वासी दूसरे प्रांत वालों से बिलकुल अनभिज्ञ रहते हैं। इसी कारण देश के बड़े बड़े पुरुषों का पता एकत्रित रूप से नहीं लगता। मदरास प्रांत हमसे बहुत दूर है; वहां की भाषा भी हमारी भाषा से निराली है। अतएव उस प्रान्त के महात्माओं, देशहितैषियों और शुभकार्यकर्ताओं के चरित बहुत ही कम हम लोगों को सुनाई पड़ते हैं। परन्तु कांगरेस के होने से और उसमें सब प्रांत वासियों के एकत्रित होने के कारण एक प्रांत वासियों का, बहुत कुछ परिचय दूसरे प्रान्त वालों के साथ हुआ है। हमारी जातीय सभा की उन्नति चाहने वाले और उस में काम करने वाले मदरास प्रान्तवासी महाशय आनन्द चारलू भी हैं। अतएव उनकी संक्षिप्त जीवनी हम नीचे देते हैं।

आप का जन्म मदरास प्रान्त के वे चित्तूर नामक गांव में हुआ। पर यह गांव उत्तरी अराकाट ज़िले में मदरास से १०० मील दूरी पर है। जाति के आप द्राविड़ ब्राह्मण हैं। आप के पिता चित्तूर के एक दफ़्तर में नौकर थे। धीरे धीरे वे उसी ज़िले में शरिस्तेदार तक हो गए। जिस समय

* दूर रहते हुए भी सज्जनों के गुण क़दर करने वालों को खींच लाने के लिए दूत का काम देते हैं। केतकी की महक भवरों को आपही बुला लेती है।

उनकी मृत्यु हुई उस समय आनन्द चारलू केवल १२ वर्ष के थे। पिता के मरने पश्चात् आप के पालन पोषण और शिक्षा आदि का भार आपकी माता पर पड़ा। अपने लड़के को उत्तम और उच्च शिक्षा प्राप्त होने के उद्देश्य से वे अपना घर छोड़ कर मद्रास में जाकर रहने लगीं। मद्रास में 'पेचापा' नामक एक सज्जन की कृपा से एक स्कूल खुला था उसी स्कूल में आनन्द चारलू महाशय ने "मेट्रिक्यूलेशन" तक शिक्षा पाई। जिस समय आप स्कूल में पढ़ते थे उन्हीं दिनों में आप अपने पिता के मित्र रंगनादम शास्त्री से बराबर जाकर मिलते थे। ये उस समय मद्रास में स्माल काज़ कोर्ट के जज थे। दक्षिण प्रान्त में जो भाषाएं बोली जाती हैं उनका उन्हें अच्छा ज्ञान था। इस कारण वे मद्रास प्रान्त में अधिक प्रसिद्ध थे। विद्या व्यसन और स्वतंत्र विचारों की अपूर्व सम्पत्ति आनन्द चारलू ने उन्हीं से प्राप्त की। आनन्द चारलू की बुद्धि बड़ी तीव्र है अतएव स्कूल के सारे शिक्षक आप से बहुत ही अधिक प्रसन्न रहते हैं। अंगरेज़ी साहित्य में आपने बहुत ही निपुणता प्राप्त की। उस स्कूल के मुख्याध्यापक ने एक बार यह कहा था कि "हमारी गैर-हाज़िरी में यह लड़का अपने दर्जे के लड़कों को बहुत अच्छी तरह पढ़ा सकता है" मेट्रिक्यूलेशन पास होने के बाद आप प्रेसीडेंसी कालिज में गए। वहां मद्रास विश्वविद्यालय की पहली परीक्षा पास की। बाद को कुछ दिनों तक बी० ए० में पढ़ कर कालिज छोड़ दिया। और घर पर अभ्यास करके बी० ए० पास किया। जिस स्कूल में आप ने पहिले पहिले शिक्षा पाई उसी स्कूल में एक शिक्षक की जगह ख़ाली हुई। आप ने उस जगह को पाने के लिए उद्योग किया और आप वहां नौकर होगए। आप ने ख़ूब दिल लगाकर वहां लड़कों को पढ़ाया। जिस के कारण लड़के और मुख्याध्यापक सब आप से ख़ुश रहे। शिक्षक का काम करते रहने पर भी आप ने बी० यल परीक्षा पास की। वकालत की परीक्षा पास हो जाने के बाद आप मद्रास हाईकोर्ट में वकालत करने लगे। वकालत के काम में आपने अच्छा नाम पाया। वकालत का काम करने से आप को इस बात का ज्ञान प्राप्त हुआ कि हमारे देशभाइयों

सकता है। आप के घर पर जो कोई मिलने आवे उसके लिए किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं है। जो कोई आप से भेंट करने जाता है उससे आप प्रीति-पूर्वक, अभिमान रहित होकर वार्तालाप करते हैं। कई वर्ष हुए जब भारत सरकार ने एक 'पबलिक सर्विस कमीशन' नियत किया था उस कमीशन के सम्मुख मदरास की ओर से जो साक्षी दी गई उसमें आनन्द चारलू की साक्ष्य सर्वोत्तम और उपयोगी थी। आज कल मदरास प्रान्त में जो कुछ प्रजाहित अथवा देश के लाभ का काम होता है उसमें आप ज़रूर शरीक़ होते हैं। कांग्रेस के द्वारा आप सारे भारत-वर्ष की भलाई का काम भी करते हैं। सन् १८८५ में, सब से पहली बैठक कांग्रेस की बम्बई में हुई थी। उस समय आप ने 'इण्डिया कौंसिल इन इंग्लैंड' इस पर एक बहुत ही उत्तम और सारगर्भित व्याख्यान दिया था। आप की देशसेवा, कार्यकुशलता और देशहित के लिए उत्साह देख कर लोगों ने आप को कांग्रेस का सभापति चुना। इस चुनाव में पण्डित अयोध्यानाथ ने सब से पहले अपनी सम्मति प्रगट की। क्योंकि पण्डित अयोध्यानाथ ने जो कांग्रेस की सेवा की थी उससे लोगों की राय पण्डित जी को सभापति चुनने की थी। परन्तु उस समय पण्डित अयोध्यानाथ ने उदारता का बहुत ही अच्छा परिचय दिया। आप ने कहा कि मदरास प्रान्तवासी हमारे भाइयों में से अब तक कोई सभापति नहीं हुआ। अतएव जातीयता के नाते को अधिक दृढ़ करने के लिए उन्होंने आप का नाम लिया। इस बात को स्वयं आनन्द चारलू ने अपने नागपुर वाले व्याख्यान में स्वीकार किया था। आप ने कहा था कि, कांग्रेस के सभापति होने का जो सौभाग्य आज हमें प्राप्त हुआ है उसके कारण पण्डित अयोध्यानाथ ही हैं। अतएव यह मान उन्हीं का समझना चाहिए। आप की भी उदारता पण्डित जी के प्रति सराहनीय है। सभापति होकर जो आपने नागपुर में व्याख्यान दिया वह बहुत ही अच्छा था। आज कल आप व्याख्यान देकर और निबंध लिख कर देश की सेवा करते हैं। निबंध लिखने में आप बहुत ही कुशल हैं।

बाबू सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ।

युक्तानां महतां परोपकारे ।
कल्याणी भवति रुजत्स्वपि मह ाः ।*

बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी का जन्म-सन् १८४८ में हुआ। आप के पिता बाबू दुर्गाचरण बनर्जी कलकत्ते में वैद्यक का काम करते थे। बाबू दुर्गाचरण ने डाक्टरी परीक्षा पास नहीं की थी परन्तु अपनी बुद्धिमानी द्वारा उन्होंने वैद्यक विद्या में बहुत कुछ कीर्ति प्राप्त की। उस समय कलकत्ते में जो अच्छे अच्छे नामी डाक्टर थे उन सबों से आप का अधिक मान था और चिकित्सा-शास्त्र में आप को अच्छा अनुभव और ज्ञान था। कार्य-क्षमता और कर्तव्य-प्रीति ये दोनों गुण उनमें उत्तम प्रकार से बास करते थे। बाबू सुरेन्द्रनाथ जी ने इन दोनों गुणों को अपने पिता से ग्रहण किया। बाबू दुर्गाचरण के पांच पुत्र थे। उन में से बाबू सुरेन्द्रनाथ दूसरे हैं। बाबू सुरेन्द्रनाथ की शिक्षा उनके आयु के सातवें वर्ष में आरम्भ हुई। सब से पहले आप डेविटन कालिज में भरती हुए। उस समय डेविटन कालिज में यूरोपियन और यूरेशियन लोगों के ही लड़के अधिक पढ़ते थे। इस कारण सुरेन्द्रनाथ को अंगरेज़ी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने में व्याकरण और कोष की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ी। केवल सुनकर ही आप ने बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लिया। हर समय कालिज में अंगरेज़ी भाषा बोलने की ज़रूरत पड़ती थी क्योंकि जिन लोगों की मातृभाषा अंगरेज़ी है उन्हीं के लड़के अधिकतर वहां पढ़ते थे। सन् १८६३ में आप ने अपनी उमर के १५ वे साल में इन्ट्रेंस परीक्षा पास की। इस परीक्षा में आप अव्वल नम्बर पास हुए। इन्ट्रेंस में आप की दूसरी भाषा लेटिन थी। इसके दो वर्ष बाद आपने

---

* महात्मा जो परोपकार में लगे हुए हैं वे पीड़ित दशा में भी आशाय तौ भी दूसरों के कल्याण में प्रवृत्त रहते हैं।

दूसरी परीक्षा पास की। इस में भी आप अव्वल नम्बर रहे। सन् १८६६ में आप दूसरे दर्जे में बी० ए० पास हुए। उस समय आप की उमर केवल १९ वर्ष की थी। डेविटन कालिज के प्रिंसिपेल मिस्टर साइम सुरेन्द्रनाथ पर अधिक प्रीति करते थे। उन्होंने सुरेन्द्र बाबू की चमत्कारिक बुद्धि को देख कर, बाबू दुर्गाचरण से सुरेन्द्रनाथ को विलायत सिविल सर्विस परीक्षा पास करने को भेजने की सिफ़ारश की। बाबू दुर्गाचरण ने मिस्टर साइम की राय को पसन्द किया और मार्च सन् १८६८ में सुरेन्द्रनाथ को सिविल सर्विस परीक्षा पास करने को विलायत भेजा। विलायत जाकर बाबू सुरेन्द्रनाथ यूनीवर्सिटी कालिज में भरती हुए। उस समय इस कालिज में मिस्टर ग्लेडस्टन के जीवन चरित लेखक और वर्तमान समय में भारत के स्टेट सेक्रेटरी मिस्टर जान मार्ले अध्यापक थे। आप ने उन्हीं से शिक्षा पाई। जान मार्ले सरीखे विद्वान से शिक्षा पाने पर सुरेन्द्रनाथ बाबू ने अंगरेज़ी भाषा का बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त किया। आप ने वहां प्रोफ़ेसर गोल्डस्टकर साहब से संस्कृत भाषा का भी अध्ययन किया। सन् १८६८ में सिविल सर्विस की परीक्षा में क़रीब ३०० के उम्मेदवार थे। इन सबों में सुरेन्द्रनाथ का ३८ वां नम्बर आया। परन्तु उमर का झगड़ा पड़ जाने से अधिकारियों ने आप का नाम सिविल सर्विस की फ़ेहरिस्त से काट दिया। परन्तु सुरेन्द्रनाथ ने इस बाबत इंग्लेंड की सब से बड़ी अदालत में इस बाबत सरकार से विनय की। सुरेन्द्र बाबू की विनय सरकार ने स्वीकार की और आप का फिर नाम लिख लिया गया। आप के साथ ही श्रीपाद बाबा जी ठाकुर का नाम काट दिया गया था। उनका भी नाम अदालत की इजाज़त से दाख़िल कर लिया गया। जनवरी सन् १८७१ में बाबू सुरेन्द्रनाथ ने सिविल सर्विस की परीक्षा पास की। परन्तु दुःख की बात है कि उस समय आप के पिता ज़िन्दा न थे। आप के पास होने का शुभसमाचार आने और आप के पिता के मरने में केवल एक दिन का अन्तर पड़ा। अर्थात् बाबू दुर्गाचरण २० फ़र्वरी के दिन इस असार संसार को त्याग परलोक सिधारे और बाबू सुरेन्द्रनाथ के पास होने की ख़बर २१ तारीख़ को प्राप्त हुई।

उमर के झगड़े में बाबू सुरेन्द्रनाथ का एक वर्ष मुफ़्त में गया। इस कारण दो वर्ष की पढ़ाई आप को एक वर्ष में पढ़नी पड़ी। परन्तु आपने बहुत ही अधिक परिश्रम करके पास कर लिया। बाबू सुरेन्द्रनाथ पर कई एक बार अनेक सङ्कट पड़े परन्तु आपने सारे सङ्कटों को हंसी ख़ुशी के साथ काट डाला।

सिविल सर्विस परीक्षा पास हो जाने के बाद आप सिलहट ज़िले में असिस्टेंट मजिस्ट्रेट नियत हुए। दो वर्ष भी आपने इस जगह पर काम न कर पाया कि आप के ऊपर एक सङ्कट और आपड़ा। एक बार आपके सामने एक मुक़दमा पेश हुआ। यह मुक़दमा 'फ़रारी' की फ़ेहरिस्त में बिना लिखे हुए मुलज़िम के नाम आप ने अपने दस्तख़त से वारंट जारी कर दिया। इस प्रकार अव्यवस्था के कारण विचार में आप ने झूंठी प्रतिज्ञा की इस बाबत आप पर मुक़दमा क़ायम हुआ। अगर इसी प्रकार छोटी छोटी बातों पर सरकार ध्यान देगी तो कोई अधिकारी निरपराधी साबित न होगा क्योंकि ऐसा होना असम्भव है। मनुष्य से ग़लती होती है। उस ग़लती पर विचार पूर्वक ध्यान करके तब कुछ करना चाहिए। हां, सरकार अथवा प्रजा के साथ कोई अन्याय अथवा अत्याचार हो तो दूसरी बात है।

बाबू सुरेन्द्रनाथ ने यह बात साफ़ साफ़ कह दी कि हम ने जान बूझकर ऐसा नहीं किया। और काग़ज़ों के साथ यह भी हमारे सामने दस्तख़तों को पेश हुआ और हमने काग़ज़ात की रू से उन पर भी मामूलन् दस्तख़त कर दिए। परन्तु सरकार को आपके इतना कहने पर भी समाधान न हुआ। सरकारी अधिकारियों ने बहुत कुछ खोज करके छोटे बड़े कुल १४ अपराध आपके ऊपर क़ायम किए। बाबू सुरेन्द्रनाथ ने भारत सरकार से दो बार यह विनय की कि हमारे अपराधों की जांच कलकत्ते में होनी चाहिए जिससे कि हमें अपने मित्रवर्गों से सलाह लेने का मौक़ा मिले। परन्तु सरकार ने इस पर कुछ ध्यान न देकर आप के अपराधों की जांच एक कमीशन द्वारा करवाई। उस कमीशन के मुख्याधि-

कारी मिस्टर प्रिन्सेप साहब थे। कमिश्नरों की निगाह में बाबू सुरेन्द्र-नाथ अपराधी साबित हुए। कमीशन की रिपोर्ट बङ्गाल सरकार की मार्फ़त भारत सरकार के पास पहुंची। भारत सरकार ने बाबू सुरेन्द्रनाथ को मार्च सन् १८७४ में सरकारी नौकरी से अलग कर दिया और ५०रुपया मासिक पेन्शन् देना स्वीकार किया। भारत के एक होनहार युवक ने अपनी अलौकिक बुद्धिमत्ता और परिश्रम द्वारा जो फल प्राप्त किया था वह एकाएक नष्ट हो गया। इस शोचनीय समाचार को जान कर बङ्गाल प्रान्त वासियों को अधिक दुःख हुआ। संसार में बाबू सुरेन्द्रनाथ के नाटक का यह पहला दृष्य ख़तम हो कर दूसरा आरम्भ हुआ। नौकरी छूट जाने के बाद आप फिर विलायत गए। वहां पर आपने भारत सर-कार के विरुद्ध अपील की। परन्तु नतीजा कुछ न निकला। अन्त में आप ने बैरिस्टरी पास करने का विचार किया। वह भी पूरा न हुआ। भारत सरकार द्वारा जो अपराध आप पर साबित हुआ इस कारण आप बैरिस्टरी की परीक्षा में शरीक़ न हो सके। अन्त में निराश हो कर आप भारतवर्ष में वापस आए।

आपने जो कुछ उद्योग किया उस सब में आपको निराश होना पड़ा। परन्तु आप तिल मात्र भी नहीं घबड़ाए। महात्मा लोग जो उपकार में लगे हैं वे संकट पड़ने पर कभी नहीं घबड़ाते। जो देश सेवा करने के लिए व्रती हुआ है वह राजा की सहायता देश-सेवा करने के लिए न पाये तो भी वह किसी न किसी प्रकार देश सेवा ज़रूर करता है। देश सेवा के लिए एक मार्ग बन्द हो जाने पर बाबू सुरेन्द्रनाथ ने दूसरा मार्ग सोचा। देशबांधवों को शिक्षा देने और उन्हें शिक्षित करने से अधिक और क्या देश-सेवा हो सकती है। अतएव ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के कहने पर आपने सन् १८७६ में 'मेट्रापालिटन इंन्स्टिट्यूशन' में लड़कों को पढ़ाना स्वीकार किया। वहां आप बालकों को अंगरेज़ी पढ़ाते थे। आप को २००) मासिक वहां मिलने लगा। इसके कुछ थोड़े दिन बाद ही "सिटी स्कूल" खुला। विद्यासागर की अनुमति से आप वहां भी पढ़ाने लगे। सन् १८८१ में विद्यासागर का स्कूल छोड़ कर आप

"फ्रीचर्च कालिज" में लड़कों को पढ़ाने लगे परन्तु सिटी स्कूल से आप ने अपना सम्बन्ध बनाये रक्खा। आप के बोलने की पद्धति, शिष्य लोगों पर प्रीति और पढ़ाने की चतुरता इन सब कारणों से विद्यार्थी लोग आपके ऊपर अधिक प्रीति और भक्ति प्रगट करने लगे। इस प्रकार अनुकूलता प्राप्त होने पर आपने सन् १८८२ में एक नवीन स्कूल निज का खोला। जिस समय आपने स्कूल खोला उस समय उसमें केवल १०० लड़के थे। परन्तु धीरे धीरे यह स्कूल 'रिपन कालिज' के नाम से प्रसिद्ध हुआ और उसमें २००० विद्यार्थी पढ़ने लगे। सन् १८८८ में बङ्गाल के लेफ्टिनेंट-गवर्नर साहब ने रिपन कालिज का निरीक्षण किया उस समय पर आप ने कहा कि "रिपन कालिज सरीखे प्राइवेट कालिज को सरकार से सहायता मिलना ज़रूरी है। उच्च शिक्षा का अधिकार सर्वसाधारण के हाथ में देने से कुछ हानि नहीं है। कालिज की तरक्क़ी के लिए उसके जन्म दाता ने जो उद्योग और परिश्रम किया वह प्रशंसनीय और सराहनीय है। रिपन कालिज की व्यवस्था ठीक ठीक रखना एक आदमी के लिए बड़ी कठिन बात है परन्तु उसके वर्तमान कार्यकर्ता अपना निज का काम करके इस कालिज की दोनों शाखाओं का काम बड़ी उत्तमता के साथ करते हैं। इस से उनकी कार्य-क्षमता और उनका दीर्घोद्योग भली भांति ज़ाहिर होता है"। बाबू सुरेन्द्रनाथ की बाबत बंगाल के मुख्य अधिकारी की कैसी उत्तम राय है। खिदरपुर और हावड़ा इन दो स्थानों पर इस कालिज की शाखाएं स्वयं सुरेन्द्रनाथ बाबू ने स्थापित कीं। इन दोनों शाखाओं पर वे स्वयं देख रेख रखते हैं। इन सब स्कूलों में कुल ३५०० के क़रीब विद्यार्थी पढ़ते हैं। यदि सरकारी नौकरी से आप को छुटकारा न मिल जाता तो आप के द्वारा इतने अधिक बालकों को किस प्रकार लाभ पहुंचता?

सन् १८६१ में बङ्गाली नामक एक अंगरेज़ी साप्ताहिक पत्र कलकत्ते से निकलना आरम्भ हुआ। उस पत्र में बंगाल प्रान्त के अंगरेज़ी भाषा विशारद बहुत से सज्जन लोग लिखते थे। सन् १८७८ में बाबू सुरेन्द्रनाथ की दृष्टि इस पत्र पर पड़ी। उस समय आप की यह इच्छा उत्पन्न हुई

कि यदि इस पत्र का सम्पादन हम करें तो हम इसे बहुत ही उत्तम रीति से चलावें। उस समय सुरेन्द्रनाथ का नाम और उनकी कीर्ति बङ्गाल में चारों ओर फैल चुकी थी अतएव कई एक लोगों ने आप को इस पत्र के सम्पादन करने की सलाह दी। बङ्गाली पत्र के मालिक बाबू बेचाराम से आप ने अपनी और अपने मित्रों की इच्छा प्रगट की। बाबू बेचाराम ने बंगाली पत्र का सब अधिकार ख़ुशी के साथ बाबू सुरेन्द्रनाथ के हाथ बेंच दिया। उस समय पत्र के केवल १०० ग्राहक थे। परन्तु पत्र के उत्तम प्रकार सम्पादन होने पर दो वर्ष में ही १४०० ग्राहक हो गए। कालिज में विद्यार्थियों को पढ़ाना, म्युनिसिपैलिटी के काम को देखना, समाचार पत्र का सम्पादन करना, आनरेरी मजिस्ट्रेटी का काम करना और सभा समाजों में व्याख्यान देना इत्यादि ज़िम्मेदारी के काम करना क्या सहज बात है! व्याख्यान, लेख और बालकों को पढ़ाना; ये तीनों काम बहुत ही कठिन हैं। हर एक काम को एक आदमी पूरी तौर पर नहीं कर सकता उसे एक आदमी करे, यह कितने बड़े आश्चर्य की बात है? फिर भी एक वर्ष नहीं, दो वर्ष नहीं, २५ वर्ष से बराबर आप इन सब कामों को ख़ुशी के साथ करते हैं। भारतवर्ष में राजनीति की चर्चा जिन जिन महात्माओं द्वारा होती है उन सबों में बाबू सुरेन्द्रनाथ अग्रगण्य हैं। जिस प्रकार इङ्गलैंड में दादा भाई नौरोजी भारत के दुःख को दूर करने का उपाय सोचा करते हैं उसी प्रकार भारत में बाबू सुरेन्द्रनाथ प्रयत्न करते हैं। राजकीय सत्व क्या वस्तु है इस का ज्ञान आप ने शिक्षित समाज को पूर्ण-रूप से अपनी वक्तृत्व शक्ति द्वारा करा दिया है। आप के ऊपर कई एक बार संकट पड़े परन्तु आपने अपने कर्तव्य और साहस का परित्याग नहीं किया। सन् १८८३ में आप के ऊपर एक और संकट उपस्थित हुआ। कलकत्ता हाईकोर्ट के एक मुक़दमें में एक बार सालिगराम की मूर्ति बतौर नज़ीर के अदालत में लाई गई थी। यह समाचार "ब्रह्म पबलिक ओपिनियन" नामक पत्र में छपा। उपरोक्त पत्र का सम्पादक उस समय एक हाईकोर्ट का अटर्नी था। अतएव

इस ख़बर को सच समझ कर आपने अपने पत्र बंगाली में इस बात की आलोचना की। २८ अप्रैल सन् १८८३ के 'बंगाली' में आप ने हाईकोर्ट के जज जस्टिस जानफ्लोमेंटस नारिस की बाबत कुछ लिखा। इस बात के चार दिन बाद ही उपरोक्त न्यायाधीश ने सुरेन्द्रनाथ के ऊपर अदालत की मानहानि करने का दावा किया। इस मुक़द्दमे में बाबू सुरेन्द्रनाथ की ओर से मिस्टर डब्लू० सी० बनर्जी इत्यादि देशहितैषियों ने बहुत कुछ उद्योग किया। परन्तु उस उद्योग का कुछ फल न निकला। बाबू सुरेन्द्रनाथ के ऊपर अपराध साबित हुआ और उन्हें दो मास की जेल हुई। जब यह समाचार लोगों को मालूम हुआ तब लोगों ने इस बाबत दुःख प्रकाशित किया। जिस दिन बाबू सुरेन्द्रनाथ को हुक्म सुनाया जाने वाला था उस दिन आप अपनी पुस्तकें और ज़रूरी सामान अदालत में साथ लेते गए। आप ने ऐसे कठिन समय में भी अपना धैर्य परित्याग नहीं किया। जिस समय बाबू सुरेन्द्रनाथ कारागृह भेजे गए उस समय सैकड़ों आदमी रोते रोते, आपके पीछे जेल ख़ाने के दरवाज़े तक गए। दूर देशस्थ लोगों ने आप के पास पत्र और तार भेज कर सहानुभूति प्रगट की। सुरेन्द्र बाबू के साथ अन्याय हुआ, उन्हें कारागृह से मुक्त करना चाहिए; इस प्रकार के सैकड़ों तार लार्ड रिपन के पास पहुंचे। इस पर लार्ड रिपन ने भी अफ़सोस ज़ाहिर किया। ४ जौलाई को बाबू सुरेन्द्रनाथ जेल ख़ाने से छूटे। सरकारी अधिकारियों को यह बात अच्छी तरह मालूम थी कि अगर बाबू सुरेन्द्रनाथ सवेरे जेल से छोड़े जावेंगे तो अवश्य लोग जेल के दरवाज़े पर ही आकर ख़ुशी ख़ुशी उन्हें गाड़ी पर बिठला कर बाजे गाजे के साथ ले जायंगे। अतएव उन लोगों ने ४ बजे तड़के ही बाबू सुरेन्द्रनाथ को किराए की गाड़ी पर बिठला कर उन को घर पर भेज दिया। बाबू सुरेन्द्रनाथ के छूटने पर बंगाल भर में ख़ुशी मनाई गई। कलकत्ता के टाउन हाल में एक ही दिन तीन बड़ी बड़ी सभाएं हुईं। उस समय क़रीब बीस हज़ार आदमी इकट्ठे हुए थे। इस प्रकार बाबू सुरेन्द्रनाथ की कीर्ति पहले की बनिसबत और भी अधिक फैल गई। आप के पत्र 'बंगाली' के बहुत से नए ग्राहक हुए।

समाचार पत्र का सम्पादन करके और कालिज में शिक्षा देकर जो कुछ देशसेवा बाबू सुरेन्द्रनाथ ने की उसका उल्लेख हम पीछे कर चुके हैं। इसके अलावा अन्य मार्गों से जो आपने देशसेवा की उस का उल्लेख हम नीचे करते हैं।

भारतवर्ष में अङ्गरेज़ी शिक्षा की जिस प्रकार तरक़्क़ी होती गई उसी प्रकार लोगों के दिलों में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि भारत के लोगों की ओर से एक प्रतिनिधि विलायती सरकार के यहां रहा करे। इसके लिए आपने सन् १८७६ में "इंडियन ऐसोसिएशन" की स्थापना की। जिस दिन इस सभा की स्थापना हुई उसी दिन बाबू सुरेन्द्रनाथ का इकलौता पुत्र स्वर्गलोक पधार गया! परन्तु इस बात की आपने कुछ भी परवाह न की और सभा में पधारे। वहां सब लोगों के सामने आपने सभा के उद्देश्यों का वर्णन बड़ी उत्तमता के साथ किया! भारत की सब जातियों और धर्म के लोगों को इकट्ठा करके उन में राजनैतिक विचारों को उत्पन्न करने का आप बहुत कुछ प्रयत्न करते हैं।

भारत की सच्ची स्थिति का ज्ञान इंग्लैंड वासियों को नहीं होता और उन्हें भारत का दुःख बताए बिना भारत का कल्याण नहीं। इस विचार से आपने विलायत में जाकर ब्रिटिश कमेटी में भारत की वर्तमान दशा पर बहुत से व्याख्यान दिए आपके व्याख्यान सुनकर अङ्गरेज़ लोग बहुत प्रसन्न हुए। भारतवासी बुद्धि और विद्या में विलायत वालों से किसी तरह कम नहीं है यह बात इङ्गलैंडवासियों ने अच्छी तरह जान ली।

राष्ट्रीय सभा में भी आप बहुत ही उत्साह के साथ काम करते हैं। इस कारण दो बार आप उसके सभापति बनाए गए। सन् १८९५ में जब कांग्रेस की बैठक पूने में हुई तब आप सभापति नियत हुए। और दूसरी बार जब सन् १९०२ में सभा अहमदाबाद में हुई तब भी आप उसके सभापति चुने गए। १८९५ में पूना के, कुछ विद्यार्थियों ने आप को मानपत्र दिया उसके उत्तर में आपने कहा था कि "राजनैतिक काम मेरे हाथों से कितने ही हुए हों परन्तु शिक्षक के नाते से जो काम मैं करता

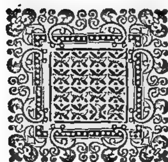
हूं वह चिरकाल तक बना रहेगा। युवा पुरुषों के मन पर शिक्षा का संस्कार डालने का काम मेरे सपुर्द किया गया है इस बाबत मुझे बड़ा आनन्द और अभिमान है"। सामाजिक, और राजनैतिक सुधार की बाबत आपने कहा कि "विद्यार्थियों को राजनैतिक चर्चा में शामिल होना चाहिए यह हमारी राय है। विद्यार्थियों को इतिहास का मनन ज़रूर करना चाहिए। विलायत में विद्यार्थियों को राजनैतिक चर्चा करने का पूरा पूरा अधिकार है। हर एक रोज़गार की शिक्षा पाने के लिए उम्मेदवारी करना पड़ती है। अतएव राजनैतिक चर्चा का अभ्यास विद्यार्थी लोग न करें यह हमारी समझ में ठीक ठीक नहीं आता।" पाश्चात्य-शिक्षा का पूर्ण रूप से आपके ऊपर असर पड़ा है परन्तु आपने धर्म और नीति के व्यवहार को कभी परित्याग नहीं किया। आपने पूने में विद्यार्थियों को उपदेश दिया था कि "किसी कार्य का आरम्भ करो उसकी बुनियाद धर्म और नीति के अनुसार डालनी चाहिए। ऐसा करने से ही उस कार्य में ठीक ठीक सफलता प्राप्त होगी। धन, कीर्ति, अथवा विद्या इन में से कोई भी वस्तु प्राप्त हो अथवा न हो परन्तु धर्म और नीति का परित्याग करना अथवा उससे विमुख होना अच्छा नहीं है।

भारत सरकार की शासनप्रणाली में जो कुछ दोष हैं उन में सुधार करने के लिए भी आप बहुत कुछ प्रयत्न करते हैं। अंगरेज़ी सरकार को आप बहुत ही अच्छा समझते हैं। आप का विश्वास है कि "जैसे जैसे हम लोग अच्छे होते जायंगे सरकार हमको उसी प्रकार अधिकार प्रदान करती जायगी।" "बङ्गाली" पत्र जिस समय आपने अपने हाथ में लिया उस समय उसके केवल १०० ग्राहक थे और पत्र साप्ताहिक था। परन्तु आपके उद्योग और प्रयत्न से अब बंगाली के हज़ारों ग्राहक होगए हैं और पत्र दैनिक प्रकाशित होता है। यही दशा आपके कालिज की हुई। आज कल रिपनकालिज की ख़ूब ही अच्छी उन्नति है; हज़ारों विद्यार्थी उससे शिक्षा लाभ करके देश को लाभ पहुंचा रहे हैं।

कलकत्ते में बंगालियों के बीच 'शिवाजी उत्सव' का प्रचार आपने ही किया। बंगालियों में वीर पूजा का अंकुर आपने ही पैदा किया।

कलकत्ते में प्रतिवर्ष 'शिवाजी उत्सव' बड़ी धूमधाम के साथ होता है। देश में वीर पूजा की महिमा और उसके करने से क्या लाभ होता है इस पर आप व्याख्यान देकर लोगों को बहुत ही अच्छी तरह समझाते हैं। आजकल स्वदेश वस्तु प्रचार के काम में आप लगे हैं स्वदेशी बनी हुई चीज़ों का व्यवहार करने से देश को क्याक्या लाभ हैं इस बात को आप बहुत ही उत्तम प्रकार से लोगों को बतलाते हैं। अभी हाल ही में आपने कलकत्ते के टाउन हाल में १०,१२ हज़ार आदमियों के सामने स्वदेशी वस्तुओं के बरतने और विदेशी वस्तुओं के त्यागने में क्या लाभ हैं इस पर बहुत ही अच्छा व्याख्यान दिया। श्रोताओं पर आप के व्याख्यान का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। इस समय आप की आयु ६० वर्ष के लगभग है परन्तु तौ भी आप युवा पुरुषों की तरह देश सेवा का कार्य्य बड़े उत्साह के साथ करते हैं।

—:+:—



रहमतुल्ला मुहम्मद सयानी।

गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते,

न महतोपि सम्पदः।*

गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुणः॥†

मनुष्य का बड़ा होना उसके मन पर अवलम्बित है और मन का बड़ा होना पुनर्जन्म के संस्कारों अथवा ईश्वर की कृपा का फल है। मनुष्य को उत्तम शिक्षा प्राप्त होने से संस्कारों और ईश्वर की कृपा का जो फल प्राप्त होता है उसकी दिनों दिन वृद्धि होती जाती है। इस प्रकार जिस मनुष्य का मन उन्नति दशा को प्राप्त हुआ और उसके द्वारा कुछ देशहित का काम हो वह धन्य है। उसका चरित अनुकरणीय और चित्र दर्शनीय है ऐसे उन्नतिशाली पुरुषों में रहमतुल्ला मुहम्मद सयानी की भी गणना हो सकती है आप का जन्म सन् १८४६ में हुआ। आप ने बम्बई में शिक्षा प्राप्त की। सन् १८६३ में आप ने मेट्रिक्युलेशन की परीक्षा पास की। सन् १८६६ में, आप बी० ए० पास हुए। जिस समय आप कालिज में पढ़ते थे उस समय आप ने कई एक इनाम पाए। आप ने मन लगाकर विद्याध्ययन किया इस बाबत आप की कई एक शिक्षकों ने प्रशंसा की। जो आप से मिलता आप के स्वभाव और विद्या की प्रशंसा बिना किए नहीं रहता। सन् १८६७ में आपने एम० ए० की परीक्षा पास की और उसके बाद एल० एल० बी०, की भी परीक्षा आप ने पास की। एलफिन्स्टन् कालिज में आप दक्षिणा-फ़ेलो नियत हुए। आप की विद्या और बुद्धि को जान कर सरकार ने आप को बम्बई का जस्टिस आफ़ दी पीस मुक़र्रर किया। बाद को

* गुण सब ठौर आदर पाता है, बड़ी सम्पत्ति नहीं।

† गुणी गुण को जानता है, निर्गुणी नहीं।

आपने सालिसिटर की परीक्षा पास की। सन् १८७७ में, आप बम्बई यूनीवर्सिटी के सभासद हुए। सालिसिटर का काम करने से आप का अच्छा नाम हुआ। बम्बई सरीखे नगर में सालिसिटर का काम करके नाम पैदा करना कुछ सहज काम नहीं है। परन्तु आप ने परिश्रम और बुद्धि द्वारा इस काम में अधिक कीर्तिलाभ की। बम्बई में आप एक उत्तम सालिसिटर करके प्रसिद्ध हैं। सन् १८७५ में, आप बम्बई म्युनिसिपल कार्पोरेशन के सभासद हुए। तब से आप बराबर म्युनिसिपल द्वारा देश की सेवा करते हैं। बम्बई शहर के सुधार में आप बड़े दृढ़चित्त से काम करते हैं। आप के काम करने की पद्धति और आप के द्वारा होने वाले लाभ को जान कर सरकार ने आप को सन् १८८४ में, टौन कौंसल का सभासद बनाया। टौन कौंसल के सभासदों ने आप को सभासद नहीं चुना परन्तु सरकार ने अपनी ओर से आप को सभासद चुन कर आप की इज्ज़त की। सरकार आप का कितना मान करती है यह बात इसी से प्रगट है। खोजा लोगों के विरासत के मुक़द्दमों को निपटाने के लिए सरकार एक क़ानून बनाना चाहती थी। उसको उन लोगों के धर्मशास्त्र के अनुसार तय्यार करने के लिए सरकार ने एक कमीशन मुक़र्रर किया। कमीशन में सरकार ने आप को भी नियत किया। इस काम को आप ने इस योग्यता के साथ किया कि सरकार और आप के जाति बांधव सब प्रसन्न रहे। आप सन् १८८५ में, बम्बई के शेरिफ़ नियत हुए। इस सम्मान के स्मरणार्थ आप की जाति वालों ने बहुत सा धन इकट्ठा करके आपके नाम पर एक स्कालरशिप (वज़ीफ़ा) यूनीवर्सिटी में नियत किया। सन् १८८९ में, आप बम्बई म्युनिसिपल कार्पोरेशन के सभापति बनाए गए। इस काम को आपने बड़ी उत्तमता के साथ चलाया। इसके अलावा आप बम्बई यूनीवर्सिटी की परीक्षा में परीक्षक का भी काम कभी कभी करते हैं। आप अपनी जाति में शिक्षा की तरक़्क़ी के लिए रात दिन परिश्रम करते हैं। आप अपना निज का कुल काम काज करके और बहुत से काम केवल देशहित ही के विचार से करते हैं। अपनी जातिवालों में विद्या का प्रचार करना और देशहित के अन्य काम सब आप अपना कर्तव्य

समझ कर करते हैं। परोपकार के जिस काम की ओर आप का ध्यान जाता है उसे दिल लगा कर परिश्रम के साथ उत्तमता पूर्वक करते हैं। सर्वसाधारण के शिक्षा प्रचार में आप के विचार बहुत ही उच्च हैं। आप का मत है कि जब तक भारत के हर एक बच्चे को शिक्षा नहीं दी जायगी तब तक कभी भारत की उन्नति नहीं हो सकती है। विद्या रूपी नेत्र बिना मनुष्य किसी प्रकार की भलाई समझने योग्य नहीं होता। हमें क्या हक़ प्राप्त हैं और क्या प्राप्त होना चाहिए; हमारा सम्बंध राजा से कैसा और किस प्रकार का है यह बात बिना विद्या प्राप्त किए नहीं ज्ञात हो सकती। जिस तरह मनुष्य को प्रकाश का ज्ञान होने के लिए नेत्रों की आवश्यकता है, बोलने के लिए जिह्वा की ज़रूरत है, सुनने के लिए कान की ज़रूरत है, और सूंघने के लिए नाक की ज़रूरत है, उसी प्रकार अपने हक़ूक़ जानने के लिए हर एक को विद्या की बड़ी ही ज़रूरत है। अतएव हर एक भारतवासी बालक को शिक्षा मिलना ही चाहिए। बग़ैर प्रति बंधक (Compulsary) शिक्षा का प्रबन्ध किए देश का कभी कल्याण नहीं हो सकता। यह आप का कथन बहुत ही ठीक है। हरएक भारतवासी को इस पर विचार करना चाहिए और किस प्रकार लाज़मी शिक्षा दी जा सकती है इस के साधन एकत्रित करके उनसे काम लेना चाहिए। बम्बई सरकार ने आप को लेजिसलेटिव कौंसल का सभासद बनाया। कौंसल में आपने इस उत्तमता के साथ काम किया कि फ़ीरोज़शाह मेहता के बाद बम्बई प्रान्त की ओर से आप वायसराय की कौंसल के मेम्बर मुक़र्रर हुए। वायसराय की कौंसल का मेम्बर होना कुछ सहज बात नहीं है। सरकारी मेम्बर तो सरकार की इच्छा से नियुक्त होते हैं परन्तु प्रजा की ओर से बे-सरकारी मेम्बर होना बड़े गौरव की बात है। प्रजा की ओर से वायसराय की कौंसल में बैठकर प्रजा के हित का क़ानून बनाने में जो सरकार की हां में हां नहीं मिलाते वह धन्य हैं। उनका गौरव दिनों दिन बढ़ता ही जाता है।

सयानी साहब का भारत की सारी सुशिक्षित समाज आदर करती है। इस का कारण यही है कि आप सद्गुणी हैं; गुणियों की क़दर

करते हैं। जातीय द्वेष को आप अपने पास नहीं फटकने देते । हमारे मुसलमान भाइयों में तय्यब जी और सयानी महोदय ये ही दो राष्ट्र-हित के नाते से भूषण हैं। विद्या और देश हित इन दोनों विचारों से आप सारे मुसलमान भाइयों में अग्रगण्य गिने जाने योग्य हैं। आपका राष्ट्र-हित में सहायक होना देश के लिए भूषण है। आप अपने जाति-बांधवों को सदैव यही उपदेश दिया करते हैं कि वर्तमान समय में जो शिक्षण पद्धति जारी है उस के अनुसार उसे प्राप्त करके लाभ उठाना चाहिए। आप के उपदेश से बहुत से लोग लाभ उठा रहे हैं। हमारे देश के सुशिक्षित विद्वान् लोगों का यही कर्तव्य है कि उपदेश द्वारा और अपने बर्ताव, व्यवहार और कर्तव्य कर्म करके स्वयं आदर्श बन कर लोगों को दिखला देना चाहिए कि ऐसा बनो और ऐसा काम इस प्रकार करो । बिना स्वयं नमूना बने कभी किसी की बात का पूरा पूरा असर नहीं पड़ता। जैसा लोगों को उपदेश दिया जावे वैसा ही कर्म करके लोगों को बतलाया जावे तो लोग उसका मान भी करते हैं, और स्वयं उस पर चलते भी हैं। इसी से देश का कल्याण होता है।

सयानी साहब के गुणों पर मोहित होकर सब लोगों ने आप को सन् १८९६ में कांग्रेस का सभापति चुना। उस साल कलकत्ते में कांग्रेस की बारहवीं बैठक हुई थी। लोगों के कहने पर आपने कांग्रेस का सभापति होना स्वीकार किया। उस साल कांग्रेस में जो आपने व्याख्यान दिया था। वह बहुत ही उत्तम था। आपने कांग्रेस के उद्देश्यों को थोड़े से शब्दों में सूत्रों के तौर पर इस प्रकार वर्णन किया।

१-हम सब भारत माता की सन्तान हैं। अतएव सब को आपस में प्रेम-पूर्वक बर्ताव करना चाहिए।

२-भारत की हर एक जातियों में मित्र भाव उत्पन्न हो और वह दिनों दिन बढ़ता जावे। ऐसा प्रयत्न हम सबों को करना चाहिए।

३-ख़ासकर, भारतवर्ष के हित के लिए हर एक जाति के मुखियाओं में जो मत-भेद फैला हुआ है उस के मिटाने का प्रयत्न होना चाहिए।

४–हम सब लोगों को, एक मत होकर, सारे भारतवर्ष की उन्नति के लिए यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिए।

५–किसी विषय पर बिना वादानुवाद हुए और देश भर के विद्वान् लोगों की बिना राय जाने उसे कदापि हाथ में नहीं लेना चाहिए।

६–जिस में सारी राष्ट्र का सम्बन्ध है उसी विषय को हाथ में लेना चाहिए। और यह भी विचारवान् पुरुषों की अधिक सम्मति द्वारा।

७–अपना काम उत्तमता और व्यवस्था पूर्वक करना चाहिए; जिससे कि सहसा उस विषय पर कोई आक्षेप न कर सके और न किसी प्रकार का विरोध उत्पन्न हो।

८–हम को यह बात हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि, अन्त में सत्य और न्याय की जय होती ही है। नीति के ऊपर भरोसा रख कर काम करना, राष्ट्र के पुनरुज्जीवन का यही सब से बड़ा साधन है।

९–भारत-वासी जो कर देते हैं उससे शान्ति, और देश का सुधार ये ही दो बड़े लाभ हैं। यह बात सदैव ध्यान में रखना चाहिए। और सदैव शान्ति, राजनिष्ठा और उन्नति शील इन शब्दों को मुख से उच्चारण करना चाहिए।

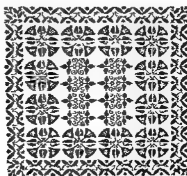
१०–हमको अपना सच्चा सच्चा दुःख राज्याधिकारियों को बताना चाहिए। और उसके निवारण करने के लिए, उनसे विनय करना और अपने राजकीय सम्बन्ध की आशा, यही अपना मुख्य काम है।

सयानी साहब ने उपरोक्त दस सूत्रों में राष्ट्रीय सभा के सब कर्तव्य उत्तम प्रकार से ग्रथित कर दिए हैं।

इसी प्रकार आपने अपने मुसलमान भाइयों को भी उपदेश किया है वह भी बहुत ही अच्छा है। आपने उनको यह उपदेश दिया कि हम लोगों का यह विचार ठीक नहीं है कि "राष्ट्रीय सभा के उद्योग में अन्य जातियां. तो आगे हो जायंगी और हम लोग पीछे हट जायंगे यह विचार भ्रान्तिमूलक है। विद्या उन्नति का एक अच्छा साधन है। तुम लोग विद्या सीखो स्वयं तुम्हारी उन्नति होगी। बिना विद्या के

कभी कोई जाति उन्नति नहीं कर सकती। संसार के इतिहास में इसके लिए कोई मिसाल मौजूद नहीं है। बिना विद्या पढ़े न कभी किसी जाति ने संसार में किसी प्रकार की उन्नति की और न अब कोई जाति कर सकेगी। अतएव विद्या की वृद्धि करना चाहिए, द्वेषभाव त्यागना चाहिए।"

इस प्रकार आपने अपने मुसलमान भाइयों को देश के हर एक जातिवालों से मिल कर रहना, और विद्या पढ़ने का अच्छा उपदेश दिया। सयानी साहब ने राष्ट्रीय सभा के सभापति का काम बहुत ही उत्तम प्रकार से किया। आप के काम को देख कर सब को बड़ा सन्तोष हुआ। सब लोगों ने सयानी साहब के नाम की बहुत ही तारीफ़ की। भारत में ऐक्यता फैलाने की बाबत जितने शब्द आपने कहे वे सब स्वर्ण-अक्षरों में लिखे जाने योग्य हैं। देश की भलाई का मूल मंत्र एकता है। भारतवर्ष इतना विशाल देश है कि, इसमें बहुत सी, अनेक धर्म मानने वाली जातियां, बास करती हैं; अतएव उनमें एकता उत्पन्न करने का उपदेश देना, प्रयत्न करना, बड़ी ही उत्तम बात है। अगर भारत की कभी उन्नति होगी तो इसी प्रकार एकता का बीजारोपण करने से ही। मिस्टर तय्यब जी और सयानी साहब के उद्योग से हमारे मुसलमान भाई भी धीरे धीरे कांग्रेस में योग देने लगे हैं यह बड़े आनन्द की बात है। हम परमात्मा से सविनय प्रार्थना करती हैं कि सयानी साहब का एकता फैलाने का उद्योग निरन्तर जारी रहे और आप को इस कार्य में सफलता प्राप्त हो।



मिस्टर सी० शंकरन् नाय्यर बी० ए० बी० एल०।

—:+:X:*:X:+:—

विवेकः सह सम्पत्या विनयो विद्यया सह।
प्रभुत्वं प्रश्रयोपेतं चिह्नमेतन्महात्मनाम्॥ *

'बड़ों के बड़े ही उपजते हैं' यह कहावत बहुत ठीक है। इसी कारण इस देश में लोग सब से पहले कुल का परिचय प्राप्त करते हैं। मिलने जुलने पर बहुधा लोग यही प्रश्न करते हैं कि आपका जन्म किस कुल में हुआ है? इसका कारण यही विदित होता है कि जिसका जन्म उच्च कुल में हुआ है उससे सिवाय लाभ के कभी किसी की हानि नहीं होगी। अतएव कवि ने इसी अभिप्राय से विवेक, नम्रता और निरभिमानता होना महात्माओं के लक्षण बतलाए हैं। क्योंकि महात्मा लोगों के वंशज ही उच्च कुल के कहलाते हैं। भारत में आजकल जितने लोग उच्च कुल के कहलाते हैं वे किसी न किसी महात्मा के वंशज ही हैं। अतएव अब हम एक मदरास प्रान्तवासी, परोपकारी, देश हितैषी सज्जन का चरित अपने पाठकों को सुनाते हैं।

मिस्टर शंकरन् नाय्यर का जन्म सन् १८५७ में हुआ। आप के पिता मदरास प्रान्त के रायली पानिक्कुर नाम के स्थान में तहसीलदार थे। हम इनका अधिक परिचय पाठकों को दिलाना चाहते हैं। क्योंकि मदरास प्रान्त के निवासी होकर भी उन्हें हिन्दुस्तानी भाषा (हिन्दी) का ऐसा अच्छा ज्ञान था कि वे उसे अच्छी तरह उपयोग में ला सकते थे। इसी कारण वे यूरोपियन अधिकारियों के अधिक काम के थे। उन्हें अंगरेज़ी का ज्ञान बिलकुल नहीं था तौ भी उन्होंने हिन्दी भाषा की

* सम्पत्ति पाकर विवेक, विद्या पाकर नम्रता, प्रभुता पाकर निरभिमान होना ये महात्माओं के लक्षण हैं।

सहायता से अच्छी तरक्की की। वे यहां उस समय एक सुयोग्य, ईमानदार और उपयोगी अफ़सर समझे जाते थे।

शंकरन् महोदय की आरम्भिक शिक्षा यथावत् होने के पश्चात् आप के पिता की बदली कनानोर को होगई। वहां शंकरन् नाय्यर की तीक्ष्ण बुद्धि को विकसित होने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। कनानोर में जाकर नाय्यर ने अपनी बुद्धिमत्ता का अच्छा परिचय दिया। वहां पर एक विशेष बात यह हुई कि मेट्रिक्युलेशन पास होने के दो वर्ष पहले ही से आप को अंगरेज़ शिक्षकों द्वारा शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जिसके कारण आप की मानसिक शक्तियों की अधिक उन्नति हुई। दो तीन वर्ष के बाद आपके पिता का यहां से भी तबादिला हो गया। वे कालिकट भेजे गए। अतएव शंकरन् को भी वह स्थान छोड़ना पड़ा। उस समय गवर्मेंट कालिजों को प्राविंशियल स्कूल कहते थे। कालिकट में जाकर शंकरन् ने पढ़ने में खूबही दिल लगाया और ख़ास कर इतिहास में। परन्तु इतिहास का प्रेम होने पर भी विचित्रता यह हुई कि जब आपने सन् १८७३ में मेट्रिक्युलेशन की परीक्षा दी तब इतिहास में ही फ़ेल हो गए। इस कारण आपके सहपाठियों और अध्यापकों को बड़ा आश्चर्य हुआ। कभी कभी प्रतिभाशाली विद्यार्थियों में भी यह बात देखी जाती है कि उनको अपने प्रिय विषय में इतनी सफलता प्राप्त हो जाती है कि वे केवल नियुक्त पुस्तकों का ही अभ्यास नहीं करते वरन् नियुक्त पुस्तकों को झट पट ख़तम करके उसी विषय की अन्य और उच्च पुस्तकों का अवलोकन अथवा अध्ययन करने लग जाते हैं। परन्तु जब वे परीक्षा देने बैठते हैं तो प्रश्नों का उत्तर लिखने में इतना अधिक लिख जाते हैं, अथवा लिखना चाहते हैं, जितना कि उस कक्षा के विद्यार्थी के लिए आवश्यक नहीं। या ज़रूरत से ज़्यादा लिखे जाने के कारण परीक्षक गण उधर ध्यान ही नहीं देते। अतएव वे अपने प्रिय विषय में फलीभूत नहीं होते। यही हाल शायद शंकरन् नाय्यर का हुआ हो। परन्तु पीछे को यह बात ज्ञात हुई कि इसमें नाय्यर महाशय का कुछ अपराध नहीं था, परीक्षक महाशय की लापरवाही के

कारण ही आपको हानि उठाना पड़ी। परीक्षक की लापरवाही से आप पास नहीं हुए, परन्तु इस बात की आपने कुछ भी परवाह न करके अपना अध्ययन जारी रक्खा और दूसरी साल पास हो गए। इसके बाद आपने एफ़० ए० की परीक्षा दी। इसमें आप अव्वल दर्जे में पास हुए। इस साल आपको एक अच्छी नौकरी मिलती थी। परन्तु आपके पिता ने इनकार कर दिया और इन्हें बी० ए० में पढ़ने की आज्ञा दी। आपने पिता की आज्ञानुसार मदरास के प्रेसिडेंसी कालिज में जाकर पढ़ना आरम्भ किया। इस कालिज में नाय्यर ने अच्छा नाम पाया। जिस समय आप वहां पढ़ते थे उस समय उस कालिज में मिस्टर टामसन प्रिन्सिपल थे। टामसन साहब आप को बहुत ही चाहते थे। सन् १८७९ में आप ने बी० ए० पास किया। इस परीक्षा में आपने अपने सहपाठियों में सब से ऊंचा नम्बर पाया। बी०ए० पास होने के बाद ही आप ने क़ानून पढ़ने का आरम्भ कर दिया। इतिहास में आप की अधिक रुचि थी; अतएव उस का विशेष उपयोग करने का अब आप को मौक़ा आया। क़ानून पढ़ने में इतिहास ने आप को बहुत सहायता पहुंचाई। कुछ दिनों के बाद आपने बी० एल० की परीक्षा पास की। इस परीक्षा में आप सब से अव्वल रहे। इस अद्वितीय विद्या विजय के कारण विदेशी विद्वज्जनों के विचार शील विमल हृदय विलक्षण आनन्द के विकारों से मानों कमल की तरह विकसित हो गए। उन्होंने शंकरन् नाय्यर के पिता से बहुत कुछ अनुरोध किया कि वे नाय्यर महोदय को सरकारी नौकरी करने की आज्ञा दें। परन्तु वे इस विचार से सहमत नहीं हुए। उन्होंने अपने मित्रों की सलाह से शंकरन् को एक बैरिस्टर के पास क़ानून का मनन और उस को उपयोग में लाने की क्रिया सीखने के लिए भेज दिया, जिस से कि वे हाईकोर्ट में वकालत करने के योग्य हो जायं। बैरिस्टर के पास शंकरन् ने कुछ दिनों तक काम सीखा और सन् १८८० में आपने अपना नाम मदरास हाईकोर्ट के वकीलों की फ़ेहरिस्त में लिखवाया। वकालत करने का सौभाग्य आपको कई एक सप्ताह तक ही प्राप्त हुआ। सरकार

ने आपको बहुत जल्द पोलाई का मुंसिफ़ बना दिया। एक मास ही में आप वहां सर्व प्रिय हो गए। यहां तक कि जब आपका वहां से तबादिला हुआ तब वहां के लोगों ने आपको फिर वापस आने के लिए मन्दिरों और देवालयों में ईश्वर से प्रार्थना की।

जब शंकरन् मदरास वापस आए तब फिर अपनी वकालत करने लगे। वकालत से आप को अच्छी आमदनी होने लगी। लोगों ने आपको देवालय कमेटी का सभासद बनाया। इस कमेटी के सभापति मिस्टर सालिवन थे और सर टी० मत्थू स्वामी नाय्यर महाशय भी इसके सभासद थे। मत्थू स्वामी शंकरन् की बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता को भली भांति जानते थे। अतएव आप से उन्होंने बहुत अच्छा काम लिया। इस से यह बात साफ़ ज़ाहिर होती है कि शंकरन् एक प्रतिभाशाली पुरुष हैं। इसका प्रमाण उनके कार्यों से बहुत ही अच्छा मिलता है। यह बात और भी बहुत से उदाहरण देकर साबित की जा सकती है। सर चार्ल्सटर्नर महोदय जो उस समय मदरास हाईकोर्ट के जज थे, इस बात पर आपसे अधिक प्रसन्न थे, कि मिस्टर शंकरन् के विचारों में गड़बड़ कभी नहीं होती। जिस पक्ष की ओर से आप वकालत करने खड़े होते हैं उसके पक्ष का समर्थन ऐसी उत्तम रीति से जज के सामने करते हैं कि, जिस से मुक़द्दमें का स्वरूप बहुत ही सरल और सहज रीति से समझने में आजाता है। इस क्रिया के साधन की युक्ति आप पूर्ण रूप से जानते हैं। इसी कारण वकालत के व्यवसाय में आप को इतनी सफलता हुई। मत्थू स्वामी बहुधा कहा करते थे कि शंकरन् की अपेक्षा कुछ वकीलों को क़ानून का ज्ञान अच्छा है, परन्तु दूरदर्शिता, चतुराई, क़ानून का सुप्रयोग इन बातों में शंकरन् का मुक़ाबिला करने वाला वकील मदरास में नहीं है। न्यायशास्त्र के तत्वों को किस प्रकार और कहां उपयोग में लाना चाहिए इस बात का शंकरन् को इतना अधिक ज्ञान है कि सर चार्ल्स ने आप को 'तत्वज्ञ न्यायवेत्ता' की पदवी दे रक्खी है। सन् १८८४ में एक ज़मीन सम्बन्धी कमीशन बैठा था। उसमें सर टी० माधवराव सभापति थे। उस कमीशन के शंकरन् भी सभासद बनाए गए। शंकरन् महो-

दय ने काश्तकारों का पक्ष लेकर उनकी भलाई के लिए कमीशन में बहुत ही अच्छी राय दी। आपने काश्तकारों के पक्ष का समर्थन ऐसी उत्तम रीति से किया कि यदि आप विलक्षण बुद्धि के पुरुष न होते तो प्रतिपक्षी लोग कभी किसी प्रकार कृषकों की भलाई की ओर बिलकुल ध्यान न देते। इस प्रकार स्वदेश बांधवों के हित का काम करने से आप को अधिक नामवरी मिली। आपने वाचा हीन, दीन, स्वदेशी बांधवों को सुख पहुंचा कर तथा सरकार का भी नुकसान न करके, स्वार्थ परमार्थ दोनों का भली प्रकार निर्वाह किया। बस यही आप की कीर्ति की जड़ है।

सन् १८८५ में आप स्टेच्युटरी सिविल सर्विस में नियुक्त हुए। और सन् १८८९ में आप मद्रास यूनिवर्सिटी के फ़ेलो बनाए गए। सन् १८९० में आप मद्रास की लेजिसलेटिव कौंसल में मेम्बर नियत हुए। इस कौंसल में आप बहुत दिनों तक नहीं रहे परन्तु जितने दिनों तक आप उस में रहे उतने दिनों तक आपने बड़ी योग्यता के साथ काम किया। सत्य का पक्ष कितना बलवान होता है यह बात आपने खूब अच्छी तरह सिद्ध कर दी। हम यहां पर उस समय के क़ानून बनाने की रीति का थोड़ा सा हाल पाठकों के जानने के लिए देते हैं। जब किसी क़ानून के बनाने की इच्छा सरकार को होती थी तब उस का विचार और तत्संबंधी पूर्वापर साहित्य वर्षों तक इकट्ठा किया जाता था। यहां तक कि कभी कभी पन्द्रह बीस वर्ष तक एक बिल को पास करने में लग जाते थे। जिस विषय में क़ानून बनाने को होता था, उस विषय पर ज़िले के अधिकारियों का मत एकत्रित किया जाता था और बहुधा जब तक ज़िले के अधिकारियों में से कोई तरक्क़ी पाकर गवर्नमेंट की ओर से मेम्बर नहीं हो जाता था तब तक वह बिल कौंसल में पेश नहीं होता था। इस से यह होता था कि जो राय उस मेम्बर की होती थी वही राय सरकारी राय समझी जाती थी। इस के अलावा जो और मेम्बर लोग होते थे उन्हें ज़िला के अधिकारियों के मत का ज्ञान नहीं होता था। जो मेम्बर सरकारी अधिकारियों में से होते थे

उन्हें सर्वसाधारण के विचार का ज्ञान न होता था। अतएव सरकारी और बे-सरकारी मेम्बरों के बीच बड़ा कोलाहल होता। एक दूसरे के विचारों का सच्चा ज्ञान न होने से व्यर्थ का विरोध बढ़कर सरकार और प्रजा दोनों को हानि पहुंचती थी। यह त्रुटि सब से पहले शंकरन् के ध्यान में आई। शंकरन् ने सरकार से निवेदन किया कि हर एक क़ानून का मसविदा और उस पर सरकारी और बे-सरकारी मेम्बरों की रायें एकत्रित की जाकर, उस पर सबों को विचार करने का मौक़ा दिया जावे। जिससे सब मेम्बरों को एक दूसरे के मत का ठीक ठीक ज्ञान हो जावे। और बाद को जिस के मत की ओर अधिक राय लोगों की हो, वह पास किया जावे। विरोध का कारण अनभिज्ञता है। जब यह बात सरकार को मालूम हो गई तब उसने शंकरन् के विचारानुसार व्यवस्था करदी। शंकरन् ने अपनी विलक्षण बुद्धि के सहारे सरकार और प्रजा दोनों की भलाई के लिए यह एक नया रास्ता निकाल दिया जो यथार्थ में दोनों को लाभकारी हुआ। शंकरन् ने सरकारी अधिकारियों की कुछ परवाह न करके देशहित की बात सरकार को बतला ही दी और सरकार ने भी उसका उपयोग किया। कौंसल में प्रवेश होने पर शंकरन् ने विलिज सर्विस बिल के क़ानून का विरोध किया। आप की वक्तृता और विचारशीलता का यह फल निकला कि वह बिल पास होते होते रह गया और जिस का परिणाम अन्त में यह निकला कि सरकार को आर्थिक लाभ अधिक हुआ।

शंकरन् महोदय को देश हित की अधिक चिंता रहती है। सन् १८८८ से आप बराबर नेशनल कांग्रेस में पधारते हैं। वक्तृता के विषय में आप की योग्यता कुछ गम्भीरता लिए हुए है। आप के व्याख्यान सुनने लायक होते हैं। परन्तु उनमें वह उत्साह कल्पना वैचित्र अथवा ज़ोर नहीं होता, जिससे सुनने वालों को तुरन्त ही कुछ अधिक उत्साह पैदा हो। हां, आपके भाषण में विशेषता यह होती है कि आप थोड़े शब्दों में, बहुत कुछ भाव और अर्थ पूर्ण, प्रासंगिक महत्व की बातें कह जाते हैं; जिसका प्रभाव मननशील पुरुषों पर बहुत ही अधिक पड़ता है। परन्तु आप

प्रबंध-सम्बन्धी कार्य करने में बहुत ही योग्य हैं। प्रबंध-सम्बन्धी कार्य करने में उनकी योग्यता का ठीक ठीक परिचय मिलता है। शंकरन् महोदय कांग्रेस के बड़े भक्त हैं। हर साल आप कांग्रेस की उन्नति के लिए बहुत सा धन ख़र्च करके कांग्रेस की सहायता करते हैं।

मिस्टर शंकरन् नाय्यर ने कुछ दिनों तक मदरास ला जनरल के सहकारी सम्पादक का भी काम किया है और आप मदरास रिवियू नामक अति उत्तम त्रैमासिक पत्र के सम्पादक का भी काम कर चुके हैं। इस त्रैमासिक पत्र को आपने बड़ी योग्यता के साथ सम्पादन किया। परन्तु बड़े खेद का विषय है कि वकालत का काम अधिक बढ़ जाने से, आप पत्र की ओर अधिक ध्यान नहीं दे सकते।

शंकरन् महोदय की परोपकारिता ने उन्हें सर्व-प्रिय बना दिया है। सन् १८९४ में, शंकरन् ने विलायत की यात्रा की। परन्तु अधिक समय तक आप वहां नहीं रह सके। आप के कार्य करने की प्रणाली इतनी सरल और शुद्ध है कि आप चाहें कांग्रेस के मंडप में हों चाहें कौंसल में, सभा में हों अथवा यूनिवर्सिटी हाल में, आप अपना काम समान रूप से, स्थिरता, गम्भीरता और श्रेष्ठता पूर्वक करते चले जाते हैं। आप को सारा भारतवर्ष आदर की दृष्टि से देखता है। आप की योग्यता को जान कर ही सन् १८९७ में, लोगों ने भारत की सर्वमान्य राष्ट्रीय सभा का सभापति चुना था। राष्ट्रीय सभा में राष्ट्र की ओर से मान पाना कुछ सहज बात नहीं है। प्रजा अपने शुभचिन्तकों को ही इस आसन पर बैठाने की, अपने प्रतिनिधियों को सलाह देती है। बिना प्रजा का हित किए, किसी को भी, इस उच्च आसन पर आरूढ़ होने की कामना न करना चाहिए। शंकरन् महोदय ने प्रजा की आज्ञा को शिरोधार्य करके कांग्रेस का सभापति होना स्वीकार किया। अतएव आप सन् १८९७ में, जब कांग्रेस की तेरहवीं बैठक अमरावती (बरार) में हुई तब उसके आप सभापति हुए। सभापति के नाते से जो आप ने उस साल व्याख्यान दिया था वह मनन करने योग्य है।

—:+:—

बाबू रमेशचन्द्र दत्त ।



सर्वत्र गुणवानेव चकास्ति प्रथितो नरः ।
मणिर्मूर्ध्नि गले बाहौ पादपीठेऽपि शोभते ॥*



बाबू रमेशचन्द्र दत्त का जन्म सन् १८४८ में, कलकत्ते में हुआ। आप के पिता, लार्ड विलियम बेंटिंक के ज़माने में, एक अच्छी जगह पर नौकर थे और इनके दादे कलकत्ता हाईकोर्ट के जज थे। इससे ज्ञात होता है कि रमेश बाबू का जन्म एक कुलीन घराने में हुआ है। यह जाति के कायस्थ हैं। आप के घराने के लोग हमेशा से विद्वान् होते आए हैं और उनको अच्छी अच्छी सरकारी नौकरी मिलती रही हैं। आप की आरम्भिक शिक्षा कलकत्ते के एक हाई स्कूल में हुई। वहां इन्ट्रैन्स पास करके आप प्रेसीडेंसी कालिज में भरती हुए। कालिज के सारे शिक्षक आप की बुद्धि और स्मरण शक्ति की सदैव तारीफ़ करते थे। कुलीन घराने में जन्म, अप्रतिम बुद्धिमत्ता और उच्च शिक्षा की सहायता पाकर आपका मन उच्च कार्य करने की ओर आकर्षित हुआ। कालिज की शिक्षा समाप्त करके आप की इच्छा विलायत जाने की हुई। अतएव आपके पिता ने भी आप को विलायत जाने की आज्ञा दी। सन् १८६८ ईस्वी में आप सिविलसर्विस परीक्षा पास करने के लिए विलायत गए। सन् १८६९ में आप ने वहां सिविलसर्विस की परीक्षा पास की और दो वर्ष और वहां रह कर, सन् १८७१ में वे भारत में लौट आए। यहां आने पर आप ने सरकारी नौकरी स्वीकार कर ली। जिसे आप बराबर सन् १८९७ तक

* गुणवान सब जगह प्रसिद्ध हो, शोभा पाते हैं; मणि को चाहे गले में पहनो, चाहे भुजा में, चाहो बैठने के पीढ़े पर जड़ दो; सब ठौर शोभा देता है।

करते रहे । २६ वर्ष सरकारी नौकरी करके आप ने पेन्शन ली । आप ने अपनी बुद्धिमानी से सरकार और प्रजा दोनों को प्रसन्न रक्खा । अलवर्ट-बिल के समय आप ने सर अंटानी मेकडानेल को बहुत सहायता पहुंचाई थी । आप ने कभी सरकार अथवा भारतीय प्रजा को किसी प्रकार का धोका नहीं दिया । अवसर पड़ने पर जो हित की बात होती थी उसे आप सरकार और प्रजा दोनों को बतला देते थे । सरकारी अनुचित कार्य का आप सदैव खंडन करते थे । सच बात कहने में आप कभी नहीं चूके । आप के गुणों पर सरकार भी मोहित थी । सरकार के कोपभाजन आप कभी नहीं हुए । सदैव सरकार आप से प्रसन्न रही । आपके उत्तम कामों के बदले में सरकार ने आप को सन् १८९३ में सी० आई० ई० का ख़िताब दिया । उसी साल आप उड़ीसा के कमिश्नर बनाए गए । इससे पहले किसी भारतवासी को इस ओहदे पर सरकार ने कभी नियत नहीं किया । इस जगह का काम आप ने बड़ी उत्तमता के साथ किया । कमिश्नरी का काम उत्तम प्रकार से करके आप ने यह साबित कर दिया कि यदि सरकार देशियों को भी अच्छे अच्छे ओहदे दे तो वह किस तरह अंगरेज़ों से कम वेतन लेकर अच्छा काम कर सकते हैं । राज-सेवा, और देशसेवा, दोनों एक आदमी (अगर वह करना चाहे तो) अच्छी तरह कर सकता है; यह बात रमेश बाबू ने करके सरकार को दिखला दी । जो पुरुष राजसेवा और देशसेवा दोनों साथ साथ करता है वही राजा प्रजा दोनों की भलाई कर सकता है । सरकार के सामने रमेश बाबू ने यह एक मिसाल प्रत्यक्ष कर दी । रमेश बाबू के जीवन का बहुत सा समय सरकारी नौकरी करने में गया, अतएव आप के चरित्र के बहुत से भाग में कोई ऐसी विलक्षण बात नहीं जो लिखने के क़ाबिल हो । हां, उनकी अलौकिक बुद्धि और उनकी उच्च शिक्षा द्वारा जो राजा और प्रजा दोनों को सुख और लाभ पहुंचा उसका थोड़ा सा उल्लेख ऊपर किया जा चुका है । सरकारी नौकरी से पेन्शन होने के बाद से आप अब तक दो तीन बातों पर अधिक ध्यान रखते हैं । एक तो राज पद्धति में जो दोष हैं उनके सुधार के लिए समय समय पर,

सरकार को सूचना देते रहते हैं। दूसरे बंग साहित्य की उन्नति की ओर भी आपका अधिक ध्यान है। आप सदैव बंग भाषा में उत्तमोत्तम पुस्तकें लिख कर प्रकाशित करते हैं। तीसरे राष्ट्रीय उन्नति के लिए भी आप बहुत कुछ उद्योग करते हैं। सन् १९०७ ई० में जो राष्ट्रीय सभा की बैठक लखनऊ में हुई थी उसके आप सभापति हुए थे।

आपकी विद्वत्ता एक देशीय नहीं है। अतएव आपका प्रयत्न भी एक देशीय नहीं। राजकीय, ऐतिहासिक, समाजिक, इत्यादि जो ज्ञान अथवा देश-हित की अलग अलग धारायें हैं उन सबों में आपका अच्छा प्रवेश है। अतएव सब प्रकार से आप देशसेवा करने को सदैव तय्यार रहते हैं। राजकीय विषय की पुस्तकें लिख कर राज कर्मचारियों को सचेत करते हैं; व्याख्यान देकर प्रजा को उनके अधिकार बतलाकर सचेत करते हैं।

सन् १८७२ में जब आप विलायत से वापस आए तब आपकी भेंट बंगाली भाषा के प्रसिद्ध उपन्यास लेखक बाबू बंकिमचन्द्र से हुई। उस समय बंकिम बाबू का "बंग दर्शन" नामक मासिक पत्र निकलता था। उसमें बंकिम बाबू के लिखे हुए उपन्यास प्रकाशित होते थे। एक दफ़ा का ज़िक्र है कि रमेश बाबू ने बंकिम बाबू के उपन्यासों की तारीफ़ की। इस पर बंकिम बाबू ने कहा कि "गुण ग्रहण करने की तुम में अलौकिक शक्ति है, तुम स्वयं क्यों नहीं लिखते ?"

रमेश बाबू ने कहा कि "मुझे बंगाली भाषा लिखने की शैली तक मालूम नहीं फिर मैं उस भाषा में ग्रंथ कैसे लिखूं ?" रमेश बाबू का यह उत्तर सुन कर बंकिम बाबू ने कहा कि "आप सरीखे विद्वान् को ऐसा कहना उचित नहीं, जिस रीति से आप लिखें वही भाषा पद्धति, बाक़ी और बातें जो पुस्तक लिखने के लिए ज़रूरी हैं वह आप की विद्वत्ता से सब आपको साध्य है।" बंकिम बाबू के इस उपदेश का रमेश बाबू पर बहुतही अच्छा असर पड़ा। आपने इस वार्ता के दो साल बाद ही सन् १८७४ में 'बंगविजेता' नामक उपन्यास लिख कर प्रकाशित किया। इसके बाद 'माधवी कंकण' जीवन प्रभात, जीवन संध्या, ये तीन और ऐतिहासिक

उपन्यास लिखकर रमेश बाबू ने प्रकाशित किए। इन चारों उपन्यासों की उत्तमता इसी से ज़ाहिर है कि इनका अनुवाद हिन्दी, मराठी इत्यादि कई भाषाओं में हो गया है। आपकी लेखन शैली बड़ी ही उत्तम है। कल्पना ही उपन्यास की जान है। उसी कल्पना को आप मनोहर शब्दों द्वारा इस प्रकार लिख कर प्रगट करते हैं कि कल्पित वस्तु का चित्र मानों आखों के सामने ही मौजूद है। सबसे पहले हमने आपका माधवी-कंकण उपन्यास पढ़ा। उसके बाद वंगविजेता, जीवन प्रभात, और जीवन संध्या, को भी पढ़ा। इनमें से प्रत्येक हमें एक से एक उत्तम प्रतीत हुए। आप को ऐतिहासिक उपन्यास ही लिख कर सन्तोष न हुआ। आपने दो सामाजिक उपन्यास भी लिखे हैं। उनका नाम आपने 'समाज' और 'संसार' रक्खा है। इसमें से 'संसार' का अंगरेज़ी अनुवाद भी आपने ही करके प्रगट किया। ये दोनों उपन्यास भी बहुत ही अच्छे हैं। गत वर्ष हमारी इच्छा इन दोनों का अनुवाद हिन्दी भाषा में करने की हुई। इस पर हमने आपसे अनुवाद करने की आज्ञा मांगी। आप ने मुझे सहर्ष 'संसार' के हिन्दी अनुवाद करने की आज्ञा दी और साथ ही उसका अंगरेज़ी अनुवाद भी मुझे भेज दिया। 'समाज' के विषय में लिखा कि, उसका मैं संशोधन कर रहा हूं। संशोधन हो जाने के बाद इसके अनुवाद के विषय में आपको लिखा जायगा। मैंने 'संसार' का अनुवाद कर लिया है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा। और इसके प्रकाशित हो जाने पर 'समाज' का अनुवाद करने का प्रयत्न करूंगा।

इसके अलावा आपने "भारत की प्राचीन सभ्यता का इतिहास" अंगरेज़ी में लिख कर प्रकाशित किया है। उसका भी हिन्दी अनुवाद काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा छप कर प्रकाशित हो रहा है। इस पुस्तक को आपने अंगरेज़ी इतिहासकारों के आधार पर लिखा है। इस बात को आप ने स्वयं पुस्तक की भूमिका में स्वीकार किया है। इसी कारण उसमें हमारी समझ से, अनेक दोष भी रह गए हैं। हिन्दी पत्रों के कई एक सम्पादकों ने इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद न छपे इस कारण बड़ा कोलाहल मचाया था। परन्तु इसका हिन्दी अनुवाद

छपही गया। यह अनुवाद हिन्दी समाचार पत्रों के सम्पादकों के ही समर्पण भी किया गया है। परन्तु आश्चर्य की बात है कि, अब तक इसकी उचित समालोचना किसी सम्पादक ने नहीं की। हमारी तुच्छ समझ में यह आता है कि यदि हिन्दी पत्र के सम्पादकों को यह बात सच मुच बुरी मालूम हुई है और यह पुस्तक कलंकित है तो उन्हें चाहिए कि सब मिल कर, "भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता का इतिहास" अपने विचार और हिन्दू धर्म के अनुसार लिख कर प्रकाशित करके इस कलंक को दूर करें और पढ़ने वालों को भी विदित हो जावे कि दत्त महाशय का कथन कहां तक सच है।

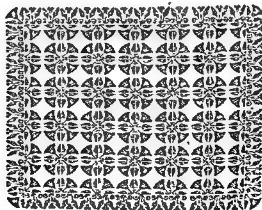
ऋग्वेद का भी आपने बंगाली में अनुवाद किया है। रामायण और महाभारत का भी अंगरेज़ी में पद्यात्मक अनुवाद करके आपने छपाया है। इन पुस्तकों का विलायत में बड़ा आदर हुआ। सुनते हैं कि छपने पर थोड़े ही समय में, इसकी दस दस हज़ार कापी बिक गईं।

इस के सिवाय राज नीति के सम्बन्धी में भी आप बहुत ही अच्छी सलाह गवर्मेंट और प्रजा दोनों को दिया करते हैं। सम्वत १९५ में जब भारत में अकाल पड़ा तब आप ने अकाल का कारण और उसके उपाय लिख कर सरकार को बतलाए। ये लेख "लार्ड कर्जन को खुली चिट्ठियां" इस नाम से अंगरेज़ी में पुस्तकाकार छपे हैं। इसके पढ़ने से आपकी विद्वता और देशवन्धू सम्बन्धी अनुभव का पूर्ण परिचय मिलता है। देश में बार बार क्यों अकाल पड़ते हैं, उनके रोकने का क्या उपाय है? प्रजा किस तरह प्रसन्न रह सकती है? इन सब बातों को इस पुस्तक द्वारा खूब ही अच्छी तरह समझाया है। स्थायी बन्दोबस्त के गुण और उससे होने वाले लाभों की भी विवेचना इस पुस्तक में की गई है। सुनते हैं इस पुस्तक का सरकार की ओर से जवाब भी दिया गया है परन्तु उसे हमने नहीं देखा। सरकार ने दत्त के विचारों और युक्तियों का खंडन करके सर्वसाधारण का समाधान ज़रूर किया होगा परन्तु दत्त के बनाए हुए मार्ग अर्थात् स्थायी बन्दोबस्त से जो प्रजा का कल्याण हो सकता है वह किसी

दत्त महाशय सरकारी बातों का खंडन समय समय पर किया करते हैं। परन्तु भाषण करते समय आप सभ्यता की सीमा के पार कभी नहीं जाते। सरकार द्वारा प्रजा के अहित का जो कार्य आप देखते हैं उसकी आप कड़ी आलोचना जरूर करते हैं। परन्तु कड़ी आलोचना के लिए सरकार ने प्रजा को जो अधिकार दे रक्खे हैं उसकी बाबत आप सरकार की बहुत प्रशंसा करते हैं। सन् १८९९ ईसवी में जब राष्ट्रीय सभा की बैठक लखनऊ में हुई थी उस समय जो आपने सभापति के तौर पर व्याख्यान दिया था वह बहुत ही सारगर्भित था। आपने कहा था कि, सरकारी काम की आलोचना करते समय सौम्यता और सभ्यता का व्यवहार सब को करना चाहिए। आलोचना करते समय अतिशयोक्ति का बिलकुल संचार भी न हो। आप स्वयं भी इसी प्रकार बड़ी सावधानी के साथ सरकारी क़ानून क़ायदे और व्यवहार की आलोचना करते हैं। इसी कारण आप की आलोचना का लोगों पर बहुत कुछ असर पड़ता है। लाट साहब के नाम जिस समय आपने खुली चिट्ठियां लिख कर प्रकाशित की थीं उसी समय लाट साहब ने आपको बुला कर मुलाक़ात की थी। मुलाक़ात के समय बाबू साहब और लाट साहब में क्या बात चीत हुई यद्यपि वे बातें अब तक प्रगट नहीं हुई हैं परन्तु इस से यह बात साफ़ प्रगट होती है कि आपके लेखों का असर लाट साहब पर ज़रूर हुआ। लार्ड कर्ज़न सरीखे नीतिज्ञ पण्डित के ऊपर आपके लेखों का प्रभाव पड़ा और इस कारण दत्त महाशय के लेख पर विचार करने की उनको ज़रूरत पड़ी। इसी से रमेश बाबू की योग्यता और विद्वता की बहुत कुछ कल्पना की जा सकती है। राज काज में भारतवासियों की बात नहीं मानी जाती यह ठीक है; परन्तु रमेशचन्द्र का कहना है कि हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए; समय आने पर सब बातें स्वयं ठीक हो जाती हैं। सीधा रास्ता ग्रहण करने से मंज़िल मक़सूद तक अवश्य मनुष्य पहुंच जाता है। कुटिल नीति का कभी अवलम्बन न करना चाहिए। यह आपका विचार बहुत ही ठीक है। बहुत से काम समयानुसार होते हैं। हर

एक वस्तु का फल समय आने पर ही फलता है। कुसमय पर कुछ भी नहीं होता। देशवासियों का यही कर्तव्य है कि वे स्वार्थ को त्याग कर इस समय अपने अपने कर्तव्य का पालन करें। इसी से उनका कल्याण हो सकता है।

पेन्शन लेकर कई वर्ष तक बाबू रमेशचन्द्र विलायत में रहे। वहां आप एक विद्यालय में भारत का इतिहास अंगरेज़ बालकों को पढ़ाते थे परन्तु स्वदेश प्रेमी रमेश बाबू को विलायत में चैन नहीं पड़ी। आप वहां से स्वदेश चले आए और तब से देशहित का काम करने में अपना बहुत सा समय व्यतीत करते हैं। पुस्तकें लिख कर, व्याख्यान देकर लोगों पर अपने विचार प्रगट करते हैं। गत वर्ष से आप बड़ोदा राज्य की राज सभा के प्रधान सभासद् हैं। जो बातें समय समय पर आप सरकार को बतलाते रहते हैं उन्हीं को कार्य में लाकर आप सरकार को बतला देना चाहते हैं। इसी लिए आजकल आप बड़ोदा राज्य में भूमि सम्बन्धी नए नए सुधार करने में लगे हैं। महाराज बड़ोदा ने बाबू रमेशचन्द्र को अपने यहां बुला कर प्रजा और राजा दोनों के लाभ के लिए जो यह उद्योग किया है वह सब प्रकार से सराहनीय है।



मिस्टर नारायण गणेश चन्दावरकर।



नरपति हित कर्ता द्वेषतां याति लोके,
जनपद हित कर्ता त्यज्यते पार्थिवेन्द्रैः
इति महति विरोधे वर्तमाने समाने,
नृपति जन पदानाम् दुर्लभः कार्य कर्ता। *

अंग्रेज़ी राज्य में, यदि कोई अति कठिन काम भारत-वासियों के लिए है तो वह यही है कि राजा और प्रजा दोनों को प्रसन्न रखना। बहुत से ऐसे भारत में सपूत पैदा हो चुके हैं जिन्होंने राजहित के लिए अपने देशबांधवों को बहुत ही हानि पहुंचाई। इन स्वदेश हानिकारकों को बदले में बड़ी बड़ी उपाधि और पदवियां प्रदान की गईं। उनको नाना प्रकार के पदक भी दिए गए। वे राजकर्ताओं के ऐसे शुभचिन्तक समझे गए कि उनके नाम, स्वर्णाक्षरों में लिखे जाकर, वे अमर बना दिए गए हैं। परन्तु उन लोगों के नाम केवल राजकर्ताओं के ही स्वर्ण ग्रंथों में लिखे जाने के योग्य हैं। परन्तु सच पूछिए तो, जिन लोगों ने स्वदेश सेवा करके, अपने स्वदेश बांधवों के हृदय पट पर, अपने नाम अजरामर कर दिए हैं; वे धन्य हैं। चाहे वे राजकर्ताओं के नौकर ही हों; परन्तु उनकी दोनों पक्ष की सेवा सराहनीय कही जा सकती है। जो सेवा धर्म के बंधनों को काट कर स्वतंत्र रूप से राजा और प्रजा दोनों का हित साधन करने में प्रयत्न करते हैं उन की महिमा क्या कहनी है।

* राजा का हित करने वाले से प्रजा द्वेष रखती है, प्रजा की भलाई चाहने वाले का राजा आदर नहीं करता; राजा और प्रजा दोनों में इस तरह बराबर की कशाकशी में ऐसे मनुष्य दुर्लभ हैं जो अपने काम से, राजा और प्रजा दोनों का प्यारा हो।

यथार्थ में ऐसे नर संसार में दुर्लभ हैं। ईश्वर की कृपा से, अब ऐसे नर रत्न भारत में कहीं कहीं पर चमकने लगे हैं। यह बात राष्ट्र हित के विचार से बड़ी सन्तोष जनक है। अतएव उपरोक्त गुणों से भूषित नारायणगणेश चन्दावरकर का चरित हम पाठकों को जानने के लिए नीचे देते हैं।

चन्दावरकर का जन्म सन् १८५५ में, कानडा ज़िले के अन्तरगत होनावर स्थान में हुआ। बाल्यावस्था में, आपकी आरम्भिक शिक्षा कानडा ज़िले में ही प्राप्त हुई। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के निमित्त आप सन् १८६९ में, बम्बई गए। और वहां एलफिनस्टन् कालिज में भरती हुए। वहां आप ने खूब अच्छी तरह ध्यान लगा कर पढ़ा। धार के महाराज ने एक इनाम नियत किया था कि जो विद्यार्थी सब से अच्छा कालिज में हो उसे वह इनाम दिया जावे। चन्दावरकर ने उस इनाम को प्राप्त किया, एक और भी इनाम एक अंगरेज़ी निबन्ध लिखने के कारण आपको मिला था। सन् १८७७ में, आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। बी० ए० की परीक्षा में आप सब से अव्वल निकले। अतएव जेम्सटेलर का इनाम आपने पाया। इस के बाद शीघ्र ही आप दक्षिणा फ़ेलो नियत हुए। सन् १८७८ में, आपने इन्दुप्रकाश समाचार पत्र के अंगरेज़ी भाग का सम्पादन करना स्वीकार किया। इन्दुप्रकाश एंग्लो मराठी पत्र है अर्थात् आधा अंगरेज़ी और आधा मराठी। गुजराती और मराठी में बहुत से समाचार पत्र हैं जिन में आधा भाग अंगरेज़ी का रहता है। अतएव मातृ-भाषा के विचार से जो पत्र नहीं ख़रीदते वे अंगरेज़ी के कारण उस पत्र को ख़रीद कर अपनी मातृ-भाषा को लाभ पहुंचाते हैं। दोनों भाषाओं में निकलने से, अंगरेज़ी भाषा जानने वालों को अपनी मातृ-भाषा का ज्ञान अनायास ही हो जाता है। परन्तु इस प्रकार संयुक्त प्रान्त में समाचार पत्र निकालने की प्रथा नहीं है। यदि यह प्रथा हमारे प्रान्त में भी जारी हो जाय तो अंगरेज़ी लिखे पढ़े लोगों को, जो अंगरेज़ी समाचार पत्र पढ़ते हैं, हिन्दी पढ़ने का लाभ मुफ़्त में प्राप्त हो। इस प्रकार मातृ-भाषा की उन्नति बहुत जल्द हो सकती है।

चन्दावरकर ने इन्दुप्रकाश के अंगरेज़ी भाग का सम्पादन बड़ी योग्यता के साथ बराबर ग्यारह वर्ष तक किया। इन ग्यारह वर्षों में इन्दु ने अपना राजनैतिक प्रकाश दक्षिण में किस उत्तमता और शान्ति के साथ फैलाया इस बात को वे लोग ख़ूब अच्छी तरह जानते हैं जिन्हों ने उस समय अपने हृदय के अंधकार को इन्दु के प्रकाश से दूर किया था। अथवा जिनके ऊपर उस प्रकाश का प्रतिबिम्ब पड़ा था। राजनैतिक सम्बन्ध में जो जो बातें उस समय उसमें प्रकाशित हुईं वे सब अक्षरशः सत्य निकलीं। एक समय लोगों को यह निश्चय हो गया था कि इन्दुप्रकाश पर भी अन्य समाचार पत्रों की तरह कोई न कोई मुक़द्दमा ज़रूर क़ायम होगा। परन्तु ईश्वर की कृपा से, इन्दुप्रकाश पर कोई कालिमा नहीं लगी। यह सब चन्दावरकर की चतुरता और सावधानी का ही फल था। सर्वसाधारण के विषय में, सत्य और न्याय पूर्वक बिलकुल निर्भय होकर स्पष्ट रूप से लिखना और उसके द्वारा यश प्राप्त करना पत्र सम्पादक का मुख्य कर्तव्य है। इस कर्तव्य को चन्दावरकर ने बहुत ही उत्तम रीति से पालन किया।

सन् १८८१ में आपने एल० एल० बी० की परीक्षा पास की। इस परीक्षा में आपने हिन्दू धर्मशास्त्र के विषय में जो उत्तर दिए वह परीक्षकों को सर्वोत्तम जंचे। और इस योग्यता के बदले में, आपको अर्नोल्ड स्कालर शिप मिला।

सन् १८८५ में, आप विलायत गए। उस साल विलायत में, पार्लियामेंट का नया चुनाव होने वाला था। भारत के राजनैतिक लोगों ने उस समय आपस में मिलकर यह राय क़ायम की कि भारतवर्ष की सच्ची स्थिति विलायत वालों को बताने के लिए कुछ लोग विलायत जावें और वहां वे लोग भारत का दुःख उनके सन्मुख उपस्थित करें। सम्भव है कि उदार बृटिश जाति के लोग, भारत की सच्ची स्थिति जान कर, भारत पर कुछ दया करें; और पार्लियामेंट में जो नए मेम्बर प्रवेश करें वे भारत के दुःख निवारणार्थ पार्लियामेंट में उद्योग करें। इस आशा से कुछ लोग हर एक प्रान्त की ओर से, विलायत में व्याख्यान देने के लिए भेजे

गए । बम्बई प्रान्तवासियों ने अपनी ओर से चन्दावरकर को विलायत भेजा । आपने विलायत में जाकर जो व्याख्यान दिए उनको वहां वालों ने बड़ी सावधानी के साथ ध्यान पूर्वक सुना । उन व्याख्यानों से वहां के लोगों को भारत की स्थिति का बहुत कुछ ज्ञान हुआ । इस से वहां के लोगों में भारत के लिए सहानुभूति उत्पन्न हुई और चन्दावरकर ने भी वहां अच्छा नाम पाया । वहां के लोग इस बात को अच्छी तरह जान गए कि चन्दावरकर महोदय एक बहुत ही अच्छे वक्ता हैं । जब आप विलायत से भारत में लौट आए तब आपने एक किताब अंगरेज़ी भाषा में लिखी । उस पुस्तक में जो आपने वहां काम किया और आपको जो कुछ अनुभव प्राप्त हुआ उसका संक्षेप से सारा विवरण दिया हुआ है । उस पुस्तक की भाषा और विचार बहुत उत्तम हैं । इस बात की बहुत से अंगरेज़ों ने भी तारीफ़ की है ।

चन्दावरकर महोदय का ध्यान जिस प्रकार राजनैतिक विषय पर है उसी प्रकार सामाजिक सुधार पर भी आप अधिक ध्यान देते हैं। परन्तु आपकी राय है कि सब से पहले समाज का सुधार होना चाहिए। राजनैतिक सुधार उसके पीछे स्वयं होते जांयगे। आप का कथन है कि, जिस प्रकार दीपक के आगे प्रकाश होता है उसी प्रकार समाज सुधार के बाद राजकीय सुधार भी ज़रूर होता है। अतएव, आप प्रार्थना-समाज के पक्षपाती हैं। और अव्वल नम्बर के सुधारक हैं। आप अपनी जातिबांधवों के रीति रवाज सुधारने में बराबर कोशिश करते रहते हैं। आप जैसा कहते हैं वैसा ही करते भी हैं। एक मर्तबा आपने क़ानून बनाने वाली सरकारी कौंसल में, एक किताब अंगरेज़ी में लिख कर पेश की। जिसमें आपने इतिहास के प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया कि लोगों की जिस रीति रवाज से, राष्ट्र को हानि पहुंचती हो; उस रीति रवाज में, राज्याधिकारियों को हस्तक्षेप करना न्यायानुकूल है। और ऐसा करना बहुत ज़रूरी है।

सन् १८८६ में 'लेडी डफ़रन फंड' की स्थापना बम्बई में हुई। उस फंड में धन इकट्ठा करने लिए वहां एक सभा की गई। उस सभा में लार्ड रे

सभापति हुए और चन्दावरकर ने फंड के उद्देश्यों पर एक व्याख्यान दिया। उस व्याख्यान की मनोहरता पर लोगों ने आपकी बहुत ही तारीफ़ की। और आप के बहुत ही अच्छे वक्ता होने की कीर्ति चारों ओर फैल गई। उस व्याख्यान को सुनने के लिए बम्बई में लार्ड रिपन भी पधारे थे। उन्होंने व्याख्यान सुन कर अपनी यह राय दी थी कि 'इनके भाषण में ऐसा आवेश है कि श्रोताओं के मन पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। अंगरेज़ी भाषा के प्रवीण वक्ता के गुण आपमें मौजूद हैं'। यह तारीफ़ बहुत बड़ी योग्यता रखने वाले अंगरेज़ के मुंह से निकली हुई है। यह बात कुछ सामान्य नहीं है। ऐसी तारीफ़ भारतवासियों में से बहुत कम लोगों की होती है।

सन् १८९६ में, हिन्दू सामाजिक सुधार की सभा मदरास में हुई। उस सभा के सभापति आप नियत हुए। उस समय महादेव गोविन्द रानडे ने आपको उस सुधारकसभा का सभासद भी बनाया। कुछ दिनों तक आप बम्बई प्रार्थनासमाज के उपसभापति भी रहे। सन् १८९६ में, एक प्रान्तिक सभा करांची में हुई थी उसके भी आप सभापति हुए। सन् १८९७ में, आप बम्बई विश्वविद्यालय की ओर से बम्बई लेजिस-लेटिव कौंसल के मेम्बर मुकर्रर हुए। इस प्रकार का उत्तम निर्वाचन विद्या विभाग की ओर से देख कर लोगों को बड़ा आनन्द हुआ।

चन्दावरकर का ध्यान स्वदेश कल्याण की ओर बहुत ही ज़्यादा है। एक बार आपने व्याख्यान देते समय यह कहा था कि "जो सब से बड़ा गुण जर्मन और अंगरेज़ लोगों में है वह हम लोगों में नहीं है। वह गुण यह है कि, 'जिस काम को एक दफ़ा हाथ में लिया उस को पूरा करने में चाहे जैसे विघ्न उपस्थित हों परन्तु वे लोग उसे बग़ैर पूरा किए हुए नहीं छोड़ते'। इस गुण को हम सब लोगों को ग्रहण करना चाहिए। हम लोगों में दूसरों की ओर मुंह ताकने की जो आदत है उसे त्यागना चाहिए। जो कुछ काम हम करें वह अपने पराक्रम के भरोसे पर। ऐसा करने की हिम्मत हम में आना चाहिए। हमारे प्रिय मित्रो! आप ही इस देश की भावी स्थिति के स्वामी हैं। भविष्यत में इस देश की

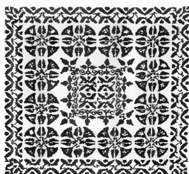
बुराई भलाई सब आपके हाथ में है। अतएव उपरोक्त गुणों को प्राप्त करना चाहिए। और पराधीनता की जड़ काट देना चाहिए। विजय अथवा पराजय से डरकर पैर पीछे मत रक्खो। धैर्य को कभी परित्याग मत करो। जो काम हाथ में लो उसे बहादुरी के साथ पराक्रम पूर्वक पूरा कर डालो। आज तक जिन लोगों ने बड़े बड़े सुधार किए हैं अथवा जिन लोगों ने औरों के सुख के लिए कोई काम हाथ में लिया है उनके आरम्भ में महा संकट भोगने पड़े हैं। परन्तु अन्त में उन्हें अवश्य यश प्राप्त हुआ है। इस का कारण यही है कि उन लोगों को अपने उद्योग और पराक्रम पर पूरा पूरा विश्वास था। उन्होंने कभी किसी से सहायता पाने की इच्छा नहीं की। ....आप लोगों को ख़ास कर तीन गुण प्राप्त करना चाहिए। पहला गुण यह कि, स्वकर्तव्य की परिपक्वता होनी चाहिए, दूसरा यह कि, जिस काम को करना हमें अपना कर्तव्य सा दिखाई पड़े उसको बेधड़क धैर्यता पूर्वक करना चाहिए और तीसरा यह कि, जो काम हम को करना हो उसे अपने आप ही करना चाहिए उस के लिए दूसरे का मुंह ताकना नहीं चाहिए। स्वावलम्बन पर भरोसा रखना चाहिए। प्रिय मित्रो! आप अपने देश पर प्रेम करते हो न? और देश की उन्नति के लिए आप का मन दुःखित होता है न? यदि होता है तो फिर, आप अपनी बुद्धि और नीति से, अपनी योग्यता को बढ़ाओ, ऐसा करने से अपने देश की योग्यता बढ़ाने और उसकी उन्नति करने की सामर्थ आपमें आवेगी"। इसी प्रकार आपने २१ दिसम्बर सन् १९०० ई० को 'विद्यार्थी बांधव सभा' के जलसे पर कहा था कि "हमें शीलता, सभ्यता और योग्य पुरुष को मान, देने की वृत्ति; इन बातों में किसी तरह पीछे न हटने वाले लोग हमको तय्यार करना चाहिए।" इस एक ही वाक्य में आपने सारे कर्तव्य कर्मों का ख़ज़ाना भर दिया है। जितनी बातें ऊपर आपने कही हैं अगर उनको भारतवासी काम में लाने लगें तो बस सब कुछ तरक़्क़ी सहज ही में हो सकती है।

आप के गुणों को जान कर भारतवासियों ने आपको सन् १९०० में कांग्रेस का सभापति चुना। उस साल कांग्रेस की सोलहवीं बैठक लाहौर

में हुई थी। आपने कांग्रेस का सभापति होना स्वीकार किया और सभापति के आसन को सुशोभित करने के लिए आप लाहौर पधारे। सभापति के तौर पर जो आपने व्याख्यान दिया था वह बहुत ही उत्तम था। आप सच बात को कभी छिपाना नहीं चाहते। अतएव आप जिन कारणों से कई वर्ष तक कांग्रेस में शरीक न हो सके उस को आपने साफ़ तौर से कह दिया। आपने अपने व्याख्यान में ज़्यादा-तर देश की दरिद्रता और किसानों की दुर्दशा का उल्लेख किया। महाजन लोग किसानों का धन ले लेते हैं; इस कारण किसानों की कंगाली दूर नहीं होती। ऐसी राय सरकार ने अपनी क़ायम करके, महाजनों से रुपया न लेने के लिए एक क़ानून बना दिया है। इस क़ानून को बने बहुत समय हो चुका; परन्तु किसानों की हालत दिन बदिन ख़राब होती जाती है। इस बात को आपने अपने व्याख्यान में अच्छी तरह साबित करके लोगों को बताया। आपने कहा कि "सरकार ने जो कमीशन किसानों की दशा का सुधार करने के लिए नियत किया था उस कमीशन ने किसानों के मुख्य प्रश्न को एक ओर रख के—सोटेवाले सन्यासी को देख उसे फांसी दी जाये-इस कहावत के अनुसार, महाजनों को अपराधी साबित किया है। और किसानों के लिए क़ानून बना कर न्याय के ऊपर कुठाराघात किया गया है। किसानों की हालत अब तक बदस्तूर क़ायम है"। सर रेमंड वेस्ट के कथनानुसार आपने यह भी कहा कि 'सरकार ने किसानों के समान ही साहूकार और महाजन लोगों को भी दरिद्र कर दिया'। इसी प्रकार आपने डाक्टर पोनल और रानडे महोदय का भी अभिप्राय इस विषय में उपस्थित कर लोगों को कह सुनाया। आपने यह भी कहा कि, 'सरकार की राय है कि किसान लोग क़र्ज़ के बोझ के नीचे न दबें; परन्तु किसानों पर क़र्ज़ न हो इसका कुछ भी उपाय सरकार ने अब तक नहीं बतलाया। आज ३० वर्ष हुए तब से सरकार किसानों की दशा सुधारने के लिए कान्फ़रेंस, कमेटी, रिपोर्ट, प्रस्ताव सब कुछ करती है; परन्तु किसानों की दशा का सुधार कुछ भी नहीं होता। १० वर्ष पहले एक कमेटी ने खेती की शाला

खोलने का समाचार प्रगट किया था और इसी प्रकार बम्बई सरकार ने भी सूचना दी थी; परन्तु अब तक उसका नाम निशान कहीं नहीं है। इसी प्रकार, दरिद्रता भारत में क्यों बढ़ रही है, दिनों दिन भारतवासियों की आमदनी कम क्यों होती जाती है, भारत में बार बार अकाल क्यों पड़ते हैं और सरकार का भारतवासियों के प्रति क्या कर्तव्य है? इन सब बातों की विवेचना आपने बड़ी उत्तम प्रकार से की। सच बात तो यों है कि अगर भारत सरकार साल में एक बार भी प्रजा के प्रतिनिधियों द्वारा प्रजा का दुःख सुन लिया करे और उन्हीं के द्वारा बताये हुए मार्ग का अवलम्बन करे तो देश की दरिद्रता शीघ्र ही दूर हो जावे, और जिसके कारण, राजा और प्रजा दोनों को सुख प्राप्त हो। राजा और प्रजा दोनों का सुखी रहना ही देश के लिए कल्याणकारी है। जब तक राजा और प्रजा दोनों आपस में प्रसन्न नहीं रहते तब तक दोनों को दुःख और भय सदैव बना रहता है। देश की भी दशा दिनों दिन ख़राब होती जाती है।

सन् १९०१ में महादेव गोविन्द रानडे बम्बई हाईकोर्ट के जज का देहान्त हो गया। अतएव सरकार ने उस जगह पर चन्दावरकर की योजना की। योग्य पुरुष को सरकार ने भी योग्य स्थान दिया। प्रजा और राजा दोनों की सुख कामना के लिए आप निरन्तर काम करते हैं। सरकारी काम करने के बाद आप समाज सुधार का काम भी करते हैं। भारतवर्ष की भलाई के लिए आप सदैव प्रार्थना समाज में ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। हमें आशा है कि कभी न कभी आप की प्रार्थना ईश्वर अवश्य स्वीकार करके भारत के दुःख को दूर करेंगे।



दिनशा एडलजी वाचा।

विद्याविवादाय, धनं मदाय,
शक्तिः परेषां परपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीत मेतद्,
ज्ञानाय, दानाय च रक्षणाय॥ *

दिनशा एडलजी वाचाका जन्म दूसरी अगस्त सन् १८४४ को बम्बई नगर में हुआ। आरम्भिक शिक्षा आप को बम्बई के प्रसिद्ध विद्यालय एलफ़िन्स्टन कालिज में मिली। जिस समय आप वहां पढ़ते थे, उस समय उस कालिज में मि० हार्कनेस, सर अलेक्ज़ेंडर ग्रांट, ग्यूलिंग, सिंक्लेर इत्यादि उत्तम उत्तम अध्यापक थे। उन लोगोंका ध्यान विद्यार्थियों के हित की ओर अधिक रहता था। विद्या के संस्कार से विद्यार्थी लोग सच्चे मनुष्य बन जायँ यह उन अध्यापकों की मनोकामना रहती थी। विद्या पढ़ कर भी यदि विद्यार्थी पशुवत बने रहे तो ऐसी शिक्षा से लाभ ही क्या ? वे अध्यापक गण स्वतंत्र और विद्याप्रिय देश के रहने वाले थे, जिस प्रकार उनको उत्तम और स्वतंत्र रूप से विद्या प्राप्त हुई थी उसी तरह की शिक्षा वे अपने पास पढ़ने वाले शिष्यों को देते थे। विद्या की सहायता से कौन कौन गुण मनुष्य में आने चाहिएं यह बात वे अपने छात्रों को खूब अच्छी तरह समझाते थे। परन्तु गुण ग्रहण करने की शक्ति सब में बराबर नहीं होती। कोई कोई विद्यार्थी अपने शिक्षक के सारे गुणों को ग्रहण कर लेते हैं और कोई कोई न्यूनाधिक। बाज़ बाज़ पुरुषों की प्रकृति ऐसी होती है कि वे अच्छे गुण तो नहीं ग्रहण करते बुरे गुणों का

* खल को विद्या विवाद के लिए, धन मद के लिए, बल दूसरों को पीड़ा देने के लिए है। परन्तु साधु को इसके विपरीत विद्या ज्ञान के लिए, धन दान के लिए और बल दूसरों की रक्षा के लिए है।

अवलम्बन करने लगते हैं। गुण ग्रहण करने की शक्ति का आरम्भ माता पिता की शिक्षा पर से आरम्भ होता है। बचपन में माता पिता बालकों की जैसी आदत डाल देते हैं वैसी ही आदत लड़कों की बड़े होने पर हो जाती है। बचपन की पड़ी हुई आदतें दिनबदिन दृढ़ ही होती जाती हैं; उनमें न्यूनता नहीं होती और जब वे आदतें जड़ पकड़ लेती हैं फिर वे किसी तरह नहीं छूटतीं। वाचा महोदय को बचपन से ही ऐसी उत्तम शिक्षा मिली है कि आप दूसरों के उत्तम गुणों का तुरन्त अनुकरण करने लगते हैं। उस समय कालिज में जितने विद्यार्थी पढ़ते थे उन सभों में से वाचा ने ही अपने अध्यापकों के उत्तम उत्तम गुणों को ज्यादातर ग्रहण किया। आपने बड़ी सावधानी के साथ अपने शिक्षकों से विद्या ग्रहण की। अध्यापक ग्रांट और ह्यूलिंग्ज आप से अधिक प्रसन्न रहते थे। इन अध्यापकों का उपकार वाचा को अब तक स्मरण है।

बचपन में आपको जैसी उत्तम शिक्षा मिली थी यदि उसका क्रम ठीक ठीक चला जाता तो आज आप किसी उच्च स्थान पर विराजमान होते। परन्तु आप की शिक्षा का क्रम वैसा नहीं चला, बीच में ही टूट गया। आपकी शिक्षा का क्रम टूट जाने का कारण यह हुआ कि आपके पिता बम्बई में व्यापार करते थे। उन्हें व्यापार के काम में बहुत अधिक अनुभव था। इसी कारण उन्हें यह इच्छा उत्पन्न हुई कि यदि हमारा पुत्र व्यापार का काम करेगा तो बहुत बड़ा व्यापारी हो सकेगा और इसके द्वारा वह सुखी रहेगा। अतएव उन्होंने आपको कालिज से निकाल कर अपने साथ व्यापार में लगाया। इसी लिए आपका मन विद्या से हट कर व्यापार की ओर लग गया। कालिज छोड़ने के बाद से आप व्यापारी हुए। यह बात आपके चरित में ध्यान देने योग्य है। आपके पिता ने आपको कालिज से निकाल कर व्यापार में केवल इन्हीं के सुख के लिए लगाया इसमें कुछ शंका नहीं है। परन्तु यदि आप व्यापार की ओर ध्यान न देते और बराबर विद्याभ्यास करते रहते तो आज तक बड़ी बड़ी डिगरियां प्राप्त कर लेते और कदाचित् किसी सरकारी

बड़े ओहदे पर विराजमान होते। परन्तु यह कुछ न हो कर अब आप व्यापारी हैं। तो भी आपको जो बचपन में उत्तम शिक्षा मिली थी उसका परिणाम स्वदेश कल्याण की इच्छा में कमी नहीं हुई। यह गुण ज्यों का त्यों आप में अब तक क़ायम है। यदि आप व्यापार न करते और उच्च शिक्षा प्राप्त करके सरकारी नौकरी स्वीकार कर लेते तो कदाचित् देश सेवा की इच्छा इतनी बलवती न होती जितनी कि अब है। जिस मनुष्य के हृदय में स्वदेश अथवा स्वजाति हित का अंकुर होता है वह कभी न कभी जरूर पैदा हो कर अच्छे अच्छे फल लाता है। जिस मनुष्य में जो गुण है उसका उपयोग कभी न कभी जरूर होता है। अतएव यहां पर इतना कहना जरूरी है कि सरकारी नौकरी स्वीकार करने से स्वदेश हित साधन की सामर्थ आपमें बहुत ही कम हो जाती। धन के लालच में मनुष्य अंधा हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, और मोह ये ही चार अनर्थ की जड़ हैं। लोभ के मोह में पड़ कर मनुष्य क्या नहीं कर सकता? इसी कारण इंग्लैंड, अमेरिका इत्यादि देशों में अपने विचारों की स्वतंत्रता बनाए रखने के लिए, ज्यादातर लोग व्यापार अथवा कारीगरी के बहुत से काम करके अपना जीवन निर्वाह करते हैं और समय पड़ने पर अपनी स्वतंत्र राय ज़ाहर करके सर्वसाधारण को लाभ पहुंचाते हैं। अन्य देशों की तरह क्या भारत में विद्वान् नहीं हैं अथवा भारतवासी किसी प्रकार विद्या बुद्धि और बल में किसी से कम हैं। परन्तु सच बात तो यह कि विदेशियों में कोई ऐसा विशेष गुण नहीं है जो भारतवासियों में न हो। अगर कमी है तो केवल स्वतंत्रता से रहने की। यहां पर लोग विद्या केवल सरकारी नौकरी के लिए ही पढ़ते हैं। यहां बड़े बड़े विद्वान् भी अपनी नौकरी जाने के भय से सच्ची बात मुंह से नहीं निकालते। वे अपने लोभ के सामने देश हित को कोई चीज़ नहीं समझते। परन्तु वाचा के पिता ने मानों यही सब बातें सोच कर आपको व्यापार में लगाया। दिनशा एडलजी वाचा अपने पिता की सहायता से व्यापार करने लगे। परन्तु आपके विचार साधारण व्यापारियों की तरह हाय नफ़ा, हाय नुकसान की ओर नहीं

रहा। जिस काम को आप करते हैं विचार पूर्वक करते हैं फिर चाहे उस काम में लाभ हो अथवा हानि। रात दिन उसी का चिन्तमन करते रहना और नफ़ा नुक़सान के चिन्ता की चिता में चलते रहना आपको पसन्द नहीं हैं। व्यापार के साथ ही आपका ध्यान देश हित की ओर बराबर लगा रहता है। आपने जितना अनुभव व्यापार में प्राप्त किया है उतना ही अनुभव लोकस्थिति और राज्य पद्धति किस प्रकार चलती है इस बात को जानने में प्राप्त किया है। भारत सरकार की राज्य पद्धति में अगर कुछ दूषण है तो उन दूषणों को दूर करने के लिए क्या क्या उपाय करना चाहिए यह बात आप सदैव सोचा करते हैं "मिल ओनर्स असोसिएशन" सभा के आप परिचालक हैं। "प्रेसीडेंसी असोसिएशन" "प्रान्तिक सभा" और "इण्डियन नेशनल कांग्रेस" में आप ख़ूब जी लगा कर काम करते हैं। आप विद्वान् और अंगरेज़ी भाषा के उत्तम लेखक हैं। देश की भलाई के उद्देश्य से, आपने एक अंगरेज़ी भाषा का समाचार पत्र सन् १८८० से निकालना आरम्भ किया था। इस पत्र का नाम आपने "इण्डियन स्पेक्टेटर" रक्खा। यह पत्र आपके हाथ में सन् १८८७ तक रहा और बड़ी उत्तमता के साथ चलता रहा। उस समय जो लेख उस पत्र में आपके लिखे हुए प्रकाशित हुए हैं वह बहुतही प्रभावशाली और उत्तम हैं।

जिस तरह आप अंगरेज़ी भाषा के उत्तम लेखक हैं उसी तरह आप वक्ता भी बहुत अच्छे हैं। बम्बई मेन्यूसिपेलिटी के कारपोरेशन में कई एक बार आपने उत्तम उत्तम व्याख्यान दिए। इनके लेख अथवा भाषण में एक विशेष गुण यह है कि हर एक बात को आप बिना किसी आधार के नहीं लिखते अथवा नहीं बोलते। आप बिना प्रमाण के कुछ भी नही लिखते और न उस बात पर कुछ कहते हैं। इसी कारण आपके भाषण अथवा लेख का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है और आपके कथन का लोग विश्वास अधिक करते हैं। जो पुरुष विचार पूर्वक सच अथवा झूंठ का निर्णय करके तब कुछ कहता है उसकी बात लोग ज़रूर मानते हैं। सर्वसाधारण में अपने कथन का प्रभाव डालने के लिए मनुष्य को चाहिए कि हमेशा सच ही बोले। मन, वचन और कर्म से जो सत्य का

व्यवहार करता है उसी का संसार में आदर होता है। बम्बई में जो कुछ उद्योग देश की भलाई के लिए किया जाता है उस हर एक काम में, आप कुछ न कुछ भाग ज़रूर लेते हैं। सन् १९०१ में जब कांग्रेस की १७वीं बैठक कलकत्ते में हुई तब सब लोगों की सलाह से, आप उस साल कांग्रेस के सभापति बनाए गए। उस समय जो आपने व्याख्यान दिया वह मनन करने योग्य है। हर एक भारत-हितैषी को आपका व्याख्यान पढ़ना चाहिए। पुस्तक बढ़ जाने के भय से हम उसे यहाँ पर नहीं दे सकते। देश की भलाई में आप जिस प्रकार दत्त चित्त हैं उसी प्रकार देशवासियों ने भी आपको भारत की राष्ट्रीयसभा का सभापति बनाकर उचित मान दिया। देश सेवा करने वालों को, सर्वसाधारण की ओर से, उचित मान मिलने पर ही, उनका उत्साह दिन ब दिन देश सेवा का काम करने की ओर बढ़ता है। आपको कांग्रेस का सभापति बनाकर, भारतीय प्रजा ने सबों को यह साफ़ तौर पर दिखला दिया कि हमारे साथ जो भलाई करता है उसका हम मान, आदर और सत्कार किए बिना नहीं रहते।

आज कल आपको दो बातों की ओर अधिक ध्यान है। एक तो भारत की दरिद्रता और दूसरे भारत सरकार का फ़ौजी ख़र्च। इन दोनों विषयों पर आप लेख लिख कर प्रकाशित करते हैं और व्याख्यान द्वारा भी भारत की दरिद्रता का कारण और फ़ौजी के फ़िज़ूल ख़र्चों का विवरण लोगों को समझाते हैं। इन विषयों पर आपके लेख और व्याख्यान इतने चित्त वेधक और हृदयंगम होते हैं कि उनको पढ़ने पर इन दोनों विषयों की बाबत किसी प्रकार की शंका मन में नहीं रहती और आप के सत्य कथन का चित्र हृदय पट पर चित्रित हो जाता है। आपका कथन है कि इंग्लिश राष्ट्र के सहवास से भारत की प्रजा दिनों दिन कंगाल होती जाती है और भारत सरकार सेना विभाग में बहुत ही धन ख़र्च करती है। जो धन प्रजा की शिक्षा और भलाई में ख़र्च होना चाहिए वह सब का सब सेना विभाग में ख़र्च हो जाता है। आपकी ये दोनों बातें सच्ची मालूम पड़ती हैं। और दोनों बातें बड़े महत्त्व की हैं

भारत के कल्याण का चिन्तन करने वाले हर एक को ये बातें ध्यान में रखना चाहिए। भारत की ऐसी राज-भक्त प्रजा शायद ही किसी देश में हो। यहां के लोग राजा को ईश्वर का अंश मानते हैं और उसकी आज्ञा का उल्लंघन करना पाप समझते हैं। अन्य देशों के लोग राजदण्ड के कारण राजा से डरते और उसकी आज्ञा का पालन करते हैं परन्तु भारतीय प्रजा पाप के भय से राजा की आज्ञायें बिना किसी प्रकार का हीला हवाला किए स्वीकार करती है और राजा को भय उपस्थित होने पर अपना तन,मन, धन सब उसके अर्पण कर देती है। ऐसी भोली भाली और कर्तव्य परायण प्रजा के ऊपर विश्वास न करके उसके धन को अधिक सेना रखकर नष्ट करना और उसकी शिक्षा और सुख की ओर ध्यान न देना कितनी बड़ी लज्जा की बात है। भारत में अकाल पर अकाल पड़ते हैं परन्तु सरकार उसका कुछ भी स्थायी प्रबंध न करके; सेना विभाग के सुधार में, प्रजा का धन नष्ट कर रही है जिसके कारण भारत की प्रजा दिनों दिन कंगाल होती जाती है। ये सब बातें आप स्पष्ट रूप से लोगों को समझाते हैं। बहुत से लोगों को स्पष्ट बोलने का साहस नहीं होता परन्तु बाबा महोदय बेधड़क, निडर होकर, सत्य बात को साफ़ साफ़ लोगों के सामने कह देते हैं। आप अन्तःकरण से सत्यवादी हैं। आप हमेशा यही कहा करते हैं कि "नहि सत्यात् परो धर्मः" अर्थात् सत्य से बढ़कर और कोई दूसरा धर्म नहीं है। इस पर आपको पूरा विश्वास भी है। कथन मात्र में ही आप सत्य शब्द का प्रयोग करते हों ऐसा नहीं; वरन् सत्यता पूर्वक काम भी करके लोगों को दिखलाते हैं। इसी कारण आप के वाक्यों का प्रभाव श्रोताओं पर ख़ूब अच्छी तरह पड़ता है। भारत का कल्याण चाहने वालों में यह गुण ज़रूर होना चाहिए। क्योंकि ऐसे लोगों की जिह्वा अथवा लेखनी से जो काम होता है वह बड़ी बड़ी तोपों से नहीं हो सकता। ऐसे लोगों द्वारा ही भारत की मूक प्रजा के दुःख का ज्ञान बृटिश सरकार को हो सकता है और सम्भव है कि सरकार हमारी सच्ची स्थिति जानकर हमारे दुःख की ओर कभी न कभी ज़रूर ध्यान देगी।

बाबू लालमोहनघोष ।

सएव धन्यो विपदि, स्वरुपं यो न मुञ्चति ।
त्यजत्यर्क करैस्तप्तं, हिमं देहं न शान्तिताम् ॥ *

ईश्वर प्राप्ति के निमित्त, जिस प्रकार मनुष्य को स्वार्थ का त्याग करना पड़ता है उसी प्रकार राष्ट्रहित साधन के लिए भी मनुष्य को बड़े बड़े सङ्कट भोगना पड़ते हैं। कभी कभी तो मरने तक की नौबत पहुंच जाती है। स्वदेश हित चिन्तन करने वालों को क्या क्या और किस प्रकार सङ्कट आ कर घेर लेते हैं इस को वे ही लोग ख़ूब अच्छी तरह जान सकते हैं जो व्रत में व्रती हो कर संसार सुख की कामना को परित्याग करके अपने व्रत के उद्यापन में अपने जीवन को लगाते हैं। जिस प्रकार ईश्वर प्राप्ति के निमित्त जो क्लेश सहन करना पड़ते हैं उन्हें योगियों के अतिरिक्त सर्वसाधारण लोग नहीं जानते उसी प्रकार राष्ट्र हित साधन करने वालों को क्या क्या कष्ट भोगना पड़ते हैं उसे सब लोग नहीं जान सकते। ऐसे महान् पुरुष संसार में बहुत ही कम पैदा होते हैं बाबू लालमोहन घोष ने अपना सारा जीवन देश हित के काम में लगा दिया जिसका संक्षेप हाल हम नीचे देते हैं।

बाबू लालमोहनघोष का जन्म सन् १८४९ में, कृष्ण नगर में हुआ। आप का जन्म बंगाल के उच्च कुल कायस्थ घोष घराने में हुआ है। घोष घराना बंगाल में बहुत ही प्राचीन इतिहास प्रसिद्ध है। घोष यह पहले बुलादिया में रहते थे परन्तु वहां से उठकर ढाका के पास बैरगढ़ी में जाकर

---

* वही पुरुष धन्य है जो विपत्ति के समय भी अपना स्वरूप नहीं छोड़ता। सूर्य की किरणों से बरफ़ पिघल कर पानी हो जाता है परन्तु अपनी शीतलता नहीं छोड़ता।

रहने लगे। क्योंकि यहां के राजा गोपालकृष्ण से उनकी अनबन होगई थी। बेरगढ़ी में लाल मोहन के पिता का जन्म हुआ। लार्ड आकलैण्ड की कृपा से सबसे पहले बंगाल में इनको मदरअमीनी की जगह मिली। लालमोहन के पिता और राम मोहन राय से आपस में खूब मिलता थी। राजा साहब भारत के प्राचीन धर्म और रीति रवाज से उदासीन थे। अतएव उन्हों ने उस समय ब्राह्मधर्म की नींव डाली। राजा साहब के कार्य में आप के पिता बहुत कुछ सहायता पहुंचाते थे। जिस समय ढाका कालिज की बुनियाद रक्खी गई उस समय आप के पिता ही अग्रगण्य थे। आप के पिता जी ने स्वतः बहुत सा धन कालिज फंड में दिया था।

आप के पिता ने आप को पढ़ाने के लिए कलकत्ते भेजा। वहां पर आप ने २० वर्ष की उमर तक अर्थात् सन् १८६९ तक पढ़ा। बाद को आप उसी साल बैरिस्टरी पास करने के लिए विलायत गए। आपके बड़े भाई मनमोहन घोष आपसे पहले ही विलायत जाकर बैरिस्टरी की परिक्षा पास कर आए थे और कलकत्ते में उनकी बैरिस्टरी खूब अच्छी तरह चलने लगी थी। इसी उम्मेद से, अपने भाई की देखा देखी, बैरिस्टरी की परीक्षा पास करने, आप भी विलायत गए। वहां आप ने दो वर्ष शिक्षा पाई। सन् १८७१ में बेरस्टरी की परीक्षा पास करके, आप भारतवर्ष में लौट आए और कलकत्ते में बेरिस्टरी करने लगे। राजनैतिक चर्चा करने में बंगाल पहले से ही अन्य प्रान्तों की अपेक्षा आगे है। अंगरेजी राज्य की बुनियाद, सब से पहले भारत में, बंगाल में ही पड़ी। सब से पहले अंगरेजी शिक्षा का आरम्भ बंगाल से ही हुआ। अंगरेजी रीति रिवाज का ताना बाना सब से पहले बंगालियों ने ही सीखा। फिर यदि राजनैतिक चर्चा बंगाल से ही आरम्भ होकर अन्य प्रान्तों में फैले तो कुछ आश्चर्य की बात नहीं। सन् १८७१ में जब बाबू लालमोहन विलायत से वापस आ गए तब कलकत्ते में राज नेतिक चर्चा फैलाने के लिए 'बृटिश इण्डियन असोसिएशन' की बुनियाद डाली गई। इस असोसिएशन द्वारा सब से पहले लोगों ने यह उद्योग किया कि जिस प्रकार इंग्लैंड में

सिविल सर्विस की परीक्षा होती है उसी प्रकार भारतवर्ष में भी हुआ करे। इस काम को पूर्ण रूप से करने के लिए लोगों ने आपस में सलाह करके बाबू लाल मोहन घोष को विलायत भेजा।

इस विषय का उद्देश्य लोगों को समझाने का भार बाबू सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने अपने ऊपर लिया। उन्होंने शहरों शहरों, गांव गांव घूम कर, सभा करके, पार्लियामेंट में पेश करने के लिए, एक मेमोरियल तय्यार किया। इस मेमोरियल को साथ लेकर, पार्लियामेंट में पेश करने के लिए, बाबू लाल मोहन घोष सन् १८७९ ई॰, भारत से विलायत को बिदा हुए। विलायत में जाकर आपने व्याख्यानों द्वारा वहां खूबही आन्दोलन मचाया। थोड़े दिनों के परिश्रम से ही विलायत के लोग आप के साथ सहानुभूति प्रगट करने लगे। विलायत के प्रसिद्ध नीतज्ञ मिस्टर ब्राइट ने आपके साथ अपनी पूर्ण सहानुभूति प्रगट की और आपके साथ भारत का हित करने के लिए, काम करने को, राज़ी हुए। विलिश रूम (लन्डन) में, मिस्टर ब्राइट के सभापतित्व में, मिस्टर घोष ने सभा करके अपने उद्देश्य पर व्याख्यान दिया। आपने अपने विषय के प्रतिपादन और पुष्टि करण में इतना अच्छा भाषण किया कि मिस्टर ब्राइट ने सभापति के नाते से मिस्टर घोष के कथन का पूर्णरूप से समर्थन करते हुए लालमोहन की विद्या, वाक्चातुरी की प्रशंसा मुक्ति कंठ से की। मिस्टर घोष के व्याख्यानों का उस समय विलायत के लोगों पर बहुत अच्छा असर पड़ा। उस समय विलायत में कन्सर्वेटिव गवर्मेंट का अधिकार था। पार्लियामेंट के कन्सर्वेटिव मेम्बरों ने भारतवर्ष में सिविल सर्विस परीक्षा लेने का बिल, हौस आफ़ कामन्स में पेश किया। बाबू लालमोहन घोष विलायत में थोड़े ही दिन रहे परन्तु आपके भाषण सुनने की इच्छा वहां अधिक लोगों में उत्पन्न हो गई। जिस समय आप विलायत में थे उस समय आपके व्याख्यान सुनने को बहुत लोग इच्छुक रहा करते थे। भारत में सरकार की व्यापार सम्बधी कैसी व्यवस्था और कैसी पालिसी है इस का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बर्किंगहम चेम्बर आफ़ कामर्स ने, आपको निमंत्रित किया! आपने वहां जाकर भारत सरकार की व्यापार सम्बन्धी पालिसी, व्यवस्था और-

कर्तव्य का ख़ूब अच्छा चित्र खींच कर लोगों के सामने बतलाया। आपके व्याख्यान से वहां के लोग बहुत ही प्रसन्न हुए।

मार्च सन् १८८७ में, घोष महोदय विलायत से कलकत्ते वापस आए। उस समय लोगों ने आपका भले प्रकार स्वागत किया। इसके बाद फिर आप विलायत गए। और वहां से नवम्बर मास में बम्बई वापस आए। उस समय बम्बईवासियों ने आपका अच्छे प्रकार स्वागत करके आपकी ख़ूब इज़्ज़त की। तब से अबतक आप इंग्लेण्ड और भारतवर्ष में राजनैतिक आन्दोलन में शरीक होते हैं। जिस समय आप दुबारा विलायत गए उस समय वहां "दक्षिण अफ़्रिका में इंग्लैण्ड की नीति" और "संसार की शान्ति" इन दो विषयों पर बहुत ही अच्छे व्याख्यान दिए। सन् १८८३ में, इलबर्ट बिल के समय, सारे भारतवर्ष में हलचल मच गई थी। परस्वार्थी, अविचारी और कमज़ोर विचार के लोगों ने, बिल के विरुद्ध बहुत कुछ कोलाहल मचाया। यह वृथा का कोलाहल अंगरेज़ लोगों को शोभा नहीं देता इस बात का भारतवासियों ने प्रत्यक्ष रूप से प्रतिपादन किया। बहुत से विचारवान अंगरेज़ विद्वानों ने इस बात को स्वीकार भी किया। इस बाबत ढाका में मिस्टर घोष ने एक अच्छा व्याख्यान दिया। उसमें आपने यह सिद्ध किया कि विरुद्ध पक्ष वालों के विचार कैसे हलके हैं। उस समय के व्याख्यान से सरस्वती देवी सचमुच आप से प्रसन्न हुईं मालूम पड़ती थीं। युक्ति वाद द्वारा आपने विरोधियों के मत का ख़ूब ही अच्छा खंडन किया। सन् १८८४ में, आप फिर विलायत गए। उस समय विलायत में पार्लियामेंट का नया चुनाव होने वाला था। पार्लियामेंट में मेम्बर होने के उद्देश्य से उस बार आप विलायत गए थे। विलायत में आपको पहले से ही लोग ख़ूब अच्छी तरह जानते थे। अपनी वक्तृता द्वारा विलायत वासियों की सहानुभूति आपने पहले ही से सम्पादन कर ली थी। अतएव आपकी गणना वहां लिबरल पक्ष वालों में होने लगी। एक प्रान्त की ओरसे आप पार्लियामेंट में मेम्बर होने के लिए उम्मेदवार हुए। भाषणपटुता, उत्तम व्यवहार, काम करने की उत्सुकता और इनके द्वारा दीन, हीन भारत की प्रजा का दुःख पार्लियामेंट के सभ्य सभासदों को मालूम हो; इस विचार

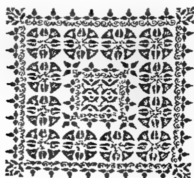
से, डेप्टफ़र्ड के लिबरल दल ने आप के साथ सहानुभूति प्रगट की। काले लोगों को पार्लियामेंट में बैठने के लिए जगह दिलाने का सबसे पहले डेप्टफ़र्ड वालों को यश प्राप्त हुआ। परन्तु इस यश का मान सेन्ट्रलफिंसबरी वालों को प्राप्त हो, ईश्वर की ऐसी इच्छा थी; जिसके कारण उन बिचारों ने जो श्रम घोष महोदय के लिए किया वह सुफल नहीं हुआ। बाबू लालमोहन घोष कामियाब न हुए। इसका वर्णन आपने जब आप बम्बई वापस आए तब इस प्रकार किया। "उस समय का वर्णन करने को मेरी मति मन्द हो गई है। उसका वर्णन मैं किस प्रकार, किन शब्दों में करूं; यह बात मेरी समझ में नहीं आती। चारों ओर निशाना ठीक लगा था। भारत और इंग्लैण्ड दोनों देशों के प्रतिनिधि रास्ते में एक दूसरे से हाथ मिलाते थे। कान्सरवेटिव लोग, लोगों से कहते थे कि "हिन्दू के लिए राय मत दो, अपने स्वदेश बान्धवों के लिए राय दो"। दो ८० वर्ष के वृद्ध पुरुषों ने मेरे पक्ष में राय दी थी। इस पर लोगों ने उनसे पूछा, कि तुमने मिष्टर घोष के पक्ष में क्यों राय दी? यह सुन कर उन दोनों वृद्धों ने जवाब दिया कि 'तुम उनको काला कहते हो इसी कारण हमने उनके पक्ष में राय दी। उस समय मेरे पक्ष में ३५६० रायें एकत्रित हुई थीं। लोगों को आशा होने लगी थी कि मैं ज़रूर मेम्बर हो जाऊंगा। परन्तु आयरिश मेम्बरों ने ठीक समय पर धोखा दिया। मिष्टर पार्नेल ने खुद अपना दस्तख़ती नोटिस चार दिन पहले इस बाबत निकाला कि लिबरल उम्मेदवारों के पक्ष में राय न दी जावे।

डेप्टफ़र्ड निवासियों की कृपा और सहानुभूति की बात बाबू लाल मोहन घोष को अब तक याद है। आप उन लोगों की सहानुभूति के कारण अपनी कृतज्ञता सदैव प्रगट करते हैं। अंगरेज़ लोग स्वयं गुणी हैं गुणियों की क़दर करना भी वे लोग खूब जानते हैं। नहीं तो अपने देश बान्धवों को छोड़ कर लाल मोहन घोष के लिए राय कौन देता!

इसके बाद आपने फिर विलायत जाकर, मेम्बर होने का पुनः उद्योग नहीं किया। क्योंकि यह बड़े ख़र्च का काम है। अब आप की उमर क़रीब क़रीब ५७ वर्ष के है तो भी आप कुछ न कुछ देश हित का काम किया

ही करते हैं। हां, ज्यादा दौड़ धूप का काम अब आप नहीं कर सकते हैं। न विलायत जाकर कठिन परिश्रम करके भारत का हित साधन कर सकते हैं। आपने भारत के हित के लिए जो कुछ काम किया वह थोड़ा नहीं है। हां, यह सत्य है कि जैसा हित आप करना चाहते थे और जिस के लिए विलायत में आपने कठिन परिश्रम भी किया था वह भारत के दुर्भाग्य से पूरा न हो सका।

भारतवासियों ने भी अपने हित चिन्तक का सन्मान करने में किसी प्रकार की कसर न की। बाबू लाल मोहन घोष को लोगों ने सन् १९०३ ईसवी में, कांग्रेस का सभापति चुना। इस राष्ट्रीय सन्मान को आप ने आनन्द पूर्वक ग्रहण किया। अर्थात् कांग्रेस की उन्नीसवीं बैठक जो मद्रास में हुई उस में आपने सभापति का आसन सुशोभित किया था। आपने जो जो बातें कांग्रेस में कहीं वह सब बहुत अच्छी थीं। परन्तु आपका व्याख्यान सुनने में, लोगों को दुर्भाग्य से आनन्द न प्राप्त हुआ। कारण यह कि उस समय मद्रास में खूब ही पानी बरसा, जिस से कि लोग सुबिधा के साथ बैठ कर ठीक ठीक आप का व्याख्यान न सुन सके। दूसरे उन्हीं दिनों में आप का गला भी बैठ गया था, जिस कारण दूर बैठे हुए लोगों को भी आप की आवाज़ सुनाई नहींपड़ी।



सर हेनरी काटन।



निर्गुणेष्वापि सत्त्वेषु दयां कुर्वन्ति साधवः।
नहि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनि ॥*

सर हेनरी काटन का जन्म, १३ सितम्बर सन् १८४५ को तंजोर के कुम्भ कोनम गांव में हुआ। उस समय आपके पिता तंजोर जिले में नौकर थे। काटन महोदय के वंश का भारत से बहुत पुराना सम्बन्ध है। प्रथम काटन का नाम, जो इस देश में अठारहवीं सदी के मध्य में आए, कप्तान जोज़फ़ काटन था। वे अट्ठाईस वर्ष तक कम्पनी सरकार की नौकरी करके, इसी कम्पनी के डाइरेक्टर हो गए। जान काटन नाम का उनका एक पुत्र सन् १८०० ईसवी में, यहां आया। उन्होंने तंजोर में पन्द्रह वर्ष तक कलेक्टर का काम किया। पेन्शन पाने के बाद वे भी कम्पनी के डाइरेक्टर बना दिए गए। उस समय भारत में, लार्ड एलिनबरो गवर्नर जनरल थे। उनकी राजनीति से कोई भी प्रसन्न न था। अतएव जान काटन के उद्योग से, उन्हें शीघ्र ही अपना पद त्याग करना पड़ा। उस समय के ऐंग्लोइंडियन-प्रेस (भारतवर्ष से प्रकाशित, अङ्गरेजों के अख़बार) ने उन पर बड़ी ही तीक्ष्ण आलोचना की। जान काटन पर अख़बारों ने ख़ूब गालियों की वर्षा की। मि० जान काटन के पुत्र जोज़ेफ़ जान काटन ने, मदरास की सिविल सर्विस में, सन् १८३१ में प्रवेश किया। और वहीं मदराज प्रांत में हमारे चरित्र नायक सर हेनरी काटन का जन्म हुआ। काटन साहब के एक और भाई हैं। ये भी भारत के सम्बन्ध में बहुत प्रसिद्ध हैं। उन्होंने English citizen series में भारतवर्ष पर एक अति उत्तम ग्रन्थ लिखा है। Rulers of India series में मांटस्टुअर्ट एल्फ़िन्सटन का जीवन चरित्र भी उन्हीं का लिखा हुआ है। इस देश

* निर्गुणी पर भी साधु जन दया करते हैं। चन्द्रमा अपनी चांदनी चाण्डाल के घर से नहीं संकोड़ लेता।

के सम्बन्ध में उनके अनुभव ज्ञान, और प्रेम को देख कर सरकार ने उनसे Gazatteer of India के नूतन संस्करण सम्पादन कार्य में सहायता ली है। अपने भाई सर हेनरी की तरह वे भी भारतवर्ष के आधुनिक शिक्षित लोगों को सादा सहानुभूति और प्रतिष्ठा की निगाह से देखते हैं। सर हेनरी काटन ने अपनी New India नूतन भारतवर्ष नामक पुस्तक में, अपने भाई के लेख से नीचे लिखे हुये वाक्य उध्दृत करते हुए यह लिखा है कि "मुझे अपने भाई के लेखसे निम्न लिखित वाक्य उध्दृत करने में बड़ा हर्ष होता है":—

'जो लोग बहुतेरे अङ्गरेजों से भी अच्छी अङ्गरेजी बोलते हैं; जो लोग मिल, केन्ट, मेक्समूलर और मेन के ग्रंथों का अध्ययन करते हैं; कि जिनकी मनुष्य संख्या कई करोड़ हैं। जो लोग अपने द्रव्य से बड़ी बड़ी मिलों का कारोबार चलाते हैं; जो लोग अङ्गरेजी भाषा के बड़े बड़े समाचार पत्रों का सम्पादन करते हैं; वे किसी प्रकार कम दर्जे के लोग नहीं कहे जा सकते।"

सर हेनरी काटन का विद्याभ्यास पहले आक्सफोर्ड में हुआ। फिर आप लदंन के किंग्ज़ कालिज में भरती हुए। आप ने वहां इतिहास और साहित्य में प्रवीणता प्राप्त करके अच्छा नाम पाया। सन् १८६७ में, आप भारतवर्ष में आए और २२ वर्ष की उमर में, मिदनापुर जिले के असिस्टेंट मजिस्ट्रेट नियत हुए। फिर ग्यारह वर्ष के बाद आप चिट-गांव के कलेक्टर हुए। वहां से आप बोर्ड आफ़ रेव्यन्यू के सेक्रेटरी, पुलिस कमिश्नर, कलकत्ता कारपोरेशन के चेअरमेन, बंगाल गवर्नमेंट के चीफ़ सेक्रेटरी आदि भिन्न भिन्न पदों पर रहे। आप कुछ दिनों तक लेजिसलेटिव कौंसल के सभासद भी रहे। आप के कामों से प्रसन्न होकर सन् १८८२ में सरकार ने आपको सी० एम० आई० की पदवी प्रदान की। सन् १८९६ में लार्ड एलगिन ने आपको गवर्नमेंट आफ़ इण्डिया के होम सेक्रटरी के पद पर नियत किया। उसी पद पर से आप आसाम के चीफ़ कमिश्नर नियुक्त हुए। सरकार ने आपको के० सी० एस० आई० की उपाधि दी। आप की न्याय प्रियता, पक्षपात

रहित और स्वतंत्र स्वभाव के कारण, इस देश की शासन प्रणाली तथा राज्य नीति विषयक अन्य बातों में, गवर्मेंट के बड़े बड़े पदाधिकारियों से आपकी अन बन रहा करती थी। इसीलिए आपने सन् १९०२ ईसवी में, सरकारी नौकरी से इस्तेफ़ा दे दिया।

अपना पद त्याग कर, जब आप आसाम से चलने लगे तब आपने वहां के लोगों से कहा कि "मुझे विश्वास है कि यह मेरी अन्तिम विदाई नहीं है। यह सम्भव नहीं कि, जिस मनुष्य ने अपना सारा जीवन इस देश की सेवा में बिताया हो और जिसको सर्वस्व इसी देश से प्राप्त हुआ हो, वह फिर यहां कभी आने की इच्छा न करे।" कलकत्ते में भी आपने इसी प्रकार कहा था कि "मैं आप लोगों से जुदा नहीं हो सकता मुझे विश्वास है कि यह मेरी अन्तिम विदाई नहीं होगी। यदि मेरा जीवन और स्वास्थ्य ठीक रहा तो आप विश्वास कीजिये कि मैं फिर कभी आप लोगों से आ कर मिलूंगा।" ईश्वर की कृपा से ऐसा ही हुआ। भारतीय प्रजा ने आपको अपनी जातीय सभा काङ्ग्रेस का सभापति बनाया। गत वर्ष काङ्ग्रेस की २० वीं बैठक बम्बई में हुई थी इसी में आकर आप सभापति हुए थे।

प्रायः सब सरकारी नौकर चाहे वे देशी हों अथवा विदेशी केवल सरकारी काम करके ही वे अपने जीवन की इति कर्तव्यता समझते हैं। सरकारी काम करने के बाद वे फिर किसी उपकारी काम की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। भारत के जो विद्यार्थी कालिजों में उच्च शिक्षा पाते हैं वे भी परीक्षोत्तीर्ण होकर सरकारी नौकरी पाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं और अपना जीवन सुफल समझने लगते हैं। यह बात अनुभव से सिद्ध हो चुकी है कि जिन विषयों की चर्चा और अध्ययन में, उन लोगों को विद्यार्थी-दशा में आनन्द प्राप्त होता था, उन्हीं विषयों में जब वे सरकारी नौकर हो जाते हैं घृणा करने लगते हैं। ऐसे लोगों को सर हेनरी काटन के चरित्र से शिक्षा ग्रहण करना चाहिए। हम ऊपर लिख आए हैं कि जब सर हेनरी काटन कालेज में पढ़ते थे तब आपने इतिहास और साहित्य में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर ली थी। बस, इसी का उपयोग आप ने भारत की सेवा करने में किया। जब कभी आपको

नौकरी से फ़ुरसत मिलती तब आप भारत के विषय कुछ न कुछ लिखा ही करते थे। मिस्टर जान मार्ले द्वारा सम्पादित प्रसिद्ध पत्र "फ़ार्ट-नाइटली" में, आपने भारतवर्ष पर बहुत ही उत्तम उत्तम कई एक लेख लिखे हैं। जब आप चटगांव में थे तब आप ने "चटगांव की माल-गुज़ारी का इतिहास" लिख कर प्रकाशित किया था। उसकी प्रशंसा सरकार ने भी की थी। अक्तूबर सन् १८७८ में, आप ने "भारतवर्ष की आवश्यकता और इंग्लेण्ड का कर्तव्य" इस विषय पर एक बहुत ही प्रभा-वशाली लेख लिखा। जिस के कारण, उस समय, इंग्लेंड में बहुत बड़ा आन्दोलन हुआ। नवम्बर सन् १८८५ में, आपने 'नूतन भारत" नाम का एक बहुत ही अच्छा ग्रंथ लिख कर प्रकाशित किया। इस पुस्तक का नूतन संस्करण हाल ही में प्रकाशित हुआ है। यह पुस्तक हर एक भारतवासी के पढ़ने योग्य है। इस पुस्तक की बाबत हम अपनी ओर से कुछ न कह कर भारत के प्रसिद्ध हितैषी जान ब्राइट के वाक्यों को उद्धृत किए देते हैं:—

Nothing could be happier for England and India, in regard to Indian questions, than that the book should be carefully read by every man..............................."

सरहेनरी काटन ने भारतवर्ष के बारे में, कई एक व्याख्यान भी दिए हैं। आप लार्ड रिपन महोदय की नीति (पालिसी) के समर्थक हैं। इस प्रकार आप ने अंगरेज़ी भाषा में ग्रंथ और लेख लिख कर तथा समय समय पर व्याख्यान देकर इस देश की सेवा की है।

काटन महोदय के अन्तः करण की कोमलता और मन की विशा-लता का वर्णन करना कठिन काम है। भारतवासियों के साथ आप अप्र-तिम महानुभूति और प्रेम प्रगट करते हैं। आपने राजनैतिक विषयों की दीक्षा, इंग्लेंड के प्रसिद्ध वक्ता और लेखक तथा भारत के सहायक वर्क और ब्राइट से पाई है। आप भारतवासियों को आत्म शासन प्रणाली के सत्य प्रदान करने वाले, लार्ड रिपन महोदय को आदर्श स्वरूप मानते हैं। बस, इन्हीं बातों से जान लेना चाहिए कि आप भारत के कैसे हितैषी हैं! आप की उदारता और महानुभूति,- औरों की तरह, केवल बातें

बनाने वाली नहीं है। जब कभी आपने भारतवासियों के साथ भलाई करने का अवसर पाया तब ही आपने स्वयं श्रद्धा और प्रेम पूर्वक भारत की भलाई का उद्योग किया।

भारत के सुशिक्षित नवयुवकों पर आप को निस्सीम प्रेम है। क्योंकि भारतवर्ष की भावी उन्नति वर्तमान युवकों के ही आधीन है। खेद की बात है कि इस बात पर कोई उचित ध्यान नहीं देता। अब तक हमारे स्कूल और कालिजों में जिस प्रकार की शिक्षा दी जाती थी और अब जो नवीन यूनिवर्सिटी एक्ट के अनुसार शिक्षा दी जायगी उससे यह आशा कदापि नहीं की जा सकती कि इस देश के शिक्षित युवकों से इस देश का कुछ कल्याण होगा। जिस शिक्षा के द्वारा आत्मत्याग, देश सेवा और निरन्तर परिश्रम करने का उत्साह प्राप्त नहीं होता वह शिक्षा किस काम की? हमारे देश के नेताओं को शिक्षा विषय पर बहुत ही अधिक ध्यान देना चाहिए। यदि इस बाबत कुछ भी उद्योग न किया जायगा तो "नूतन भारतवर्ष" खपुष्प के समान केवल कल्पना ही में बना रहेगा।

काटन महोदय ने एक बार रिपन कालिज के विद्यार्थियों को इस प्रकार उपदेश दिया थाः—

"इस विद्यालय का नाम रिपन कालिज है। मैं रिपन के नाम को अत्यन्त पूज्य मानता हूं। तुम लोग भी ऐसा ही मानते होगे। तुम्हारी सन्तान भी उस महात्मा का नाम भक्ति, श्रद्धा और प्रेम के साथ उच्चारण करेगी। रिपन कालिज में शिक्षा पाने के कारण मैं तुम सबों को हार्दिक धन्यवाद देता हूं। निस्सन्देह तुम लोगों को इस बात का गौरव प्राप्त होगा कि तुम लोगों ने इस कालिज में शिक्षा पाई जिस का नाम उस महात्मा की याद दिलाता है; जिसने इस देश की मूक प्रजा को आत्मशासन प्रणाली के हक़ प्रदान किए। यद्यपि इसी कारण कुछ संकुचित हृदय के अंगरेज़ों ने उनकी निन्दा की, तथापि वे भारतवासियों के प्रेम और आदर के पात्र होगए हैं। प्यारे बालकों! तुम अपने जीवन में रिपन महोदय को अपना आदर्श मानो। जब तुम्हें कुछ कठिन काम

करना हो तब मन में धैर्य रक्खो, अपने उत्साह और निश्चय का भंग न होने दो। स्मरण रक्खो कि, इस संसार में बिना उत्साह और उद्योग के, कोई महत्कार्य नहीं किया जा सकता।"

काटन महोदय के इस कथन पर हम लोगों को बहुत विचार करना चाहिए। आजकल हमारे स्कूलों में जो शिक्षा दी जाती है उसके द्वारा काटन महोदय की बताई हुई कामना कहां तक पूरी हो सकती है! अतएव सरकारी स्कूलों अथवा कालिजों की शिक्षा का उलाहना न देकर हमें अपनी गृह-शिक्षा सुधारना चाहिए। जिसके द्वारा हमारे बालकों के आचरणों पर अच्छा असर पड़े। जब कभी हम अपने यहां के युवकों को श्रेष्ठों की आज्ञा उल्लंघन करते हुए अथवा असभ्यता का बर्ताव करते हुए देखें तब हमको यही समझना चाहिए कि यह दोष केवल शिक्षा प्रणाली का नहीं है, किन्तु उन युवकों के माता पिता और उनके पालन करने वालों का है कि जिन्होंने अपने लड़कों को घर में उचित शिक्षा नहीं दी।

स्कूल और कालिज के बहुतसे विद्यार्थी राजनैतिक विषयों की चर्चा में मन लगाया करते हैं। कोई कोई इस बात को बुरा समझते हैं। कभी कभी सरकार भी इस उपयोगी चर्चा का विरोध करती है और अपने स्कूल तथा कालिजों के विद्यार्थियों को राजनैतिक विषयों की चर्चा में शामिल होने नहीं देती। इस विषय पर काटन महोदय की सम्मति ध्यान में रखने योग्य हैः—

"मैं इस बात को कदापि भूल नहीं सकता कि यूरोप की जन सम्मति (public opinion) में अधिकांश विद्यार्थियों का सम्बन्ध रहता है। अतएव यह कुछ आश्चर्य की बात नहीं है कि इस देश के विद्यार्थीगण भी अपने देश के उपयोगी विविध विषयों की चर्चा करें। और सर्व साधारण की सम्मति को दृढ़ करने में सहायता देवें। यदि कोई किसी आन्दोलन की नींव दृढ़ करना चाहे और उसको बहुत दिनों तक कायम रक्खा चाहे तो उसको केवल उन्हीं लोगों की सहायता लेनी चाहिए कि जिनमें युवावस्था की पूर्ण शक्ति और उत्साह हो। राजनैतिक विषयोंपर

जो आन्दोलन किया जाता है, चाहे वह इस देश में हो अथवा किसी अन्यदेश में उसका मुख्य कारण शिक्षित लोगही हैं। ऐसी दशा में इस देश के युवा विद्यार्थियों और सुशिक्षित आन्दोलन करने वालों की सम्मति को कौन बुद्धिमान पुरुष तिरस्कार कर सकता है? यही युवक भावी पीढ़ी के जनक हैं—इन्हीं की सन्तान भविष्यत में अपने देश का उद्धार करेगी।"

भारतवासियों की बाबत उनकी यह राय है कि—"भारतवासी अत्यन्त श्रद्धालु, धार्मिक और कृतज्ञ होते हैं। यही पूर्वी देशों के प्रधान गुण हैं। इन को किसी प्रकार नष्ट नहीं होने देना चाहिए।"

आप अन्याय और अनुचित बर्ताव से बहुत ही घृणा करते हैं। अपने हृद्गत विचारों को प्रगट रूप से प्रकाश करने में आप कभी नहीं डरते। आपका स्वभाव ऐसा होने के कारण परिणाम यह हुआ कि बड़े बड़े सरकारी अफ़सर और संकुचित हृदय के उनके कुछ भाई बन्द आपसे विरोध करने लगे। आसाम के मज़दूरों की दशा देख कर आपको ऐसा खेद होता था कि भाषण करते समय आप इस बात को बिलकुल भूल जाते थे कि हम सरकार के नौकर हैं या क्या! एक समय पर, आपने बड़े लाट साहब की कौंसल में यह कहा था कि "यह उन दुःखियों की राम कहानी है। हे लार्ड महोदय! मैंने इस शोचनीय विषय पर बहुत कुछ कहा है। क्या मेरा कथन अब तक सिद्ध नहीं हुआ? क्या इस से मुझे क्रोध नहीं आएगा? मैं सच कहता हूं कि इन अभागों की राम कहानी का और इनके साथ जो अन्याय और अनुचित बर्ताव हो रहा है उसका, वर्णन करते करते मेरी नसों का खून खौलने लगा है। यदि इस विषय में आपकी सहानुभूति प्राप्त न होगी तो सचमुच मुझे बड़ा आश्चर्य होगा।" क्या इस प्रकार के वाक्य, जो सच्ची सहानुभूति के दर्शक हैं, कभी किसी ने दास वृत्ति में आनन्द मानने वाले पुरुष के मुख से सुने हैं? सुनते हैं कि आसाम के मज़दूरों का पक्ष स्वीकार करने के कारण ही सरकार ने आपको बंगाल के छोटे लाट का पद नहीं दिया!

नौकरी की हालत में, सरकारी बड़े बड़े अधिकारियों से, आपका मत विरोध रहा करता था; इसका एक और उदाहरण हम देते हैं। एक समय लार्ड कर्जन महोदय ने आसाम के चाय के अंगरेज़ व्यापारियों से यह कहा था कि "इस देश में जितने अङ्गरेज़ हैं—चाहें वे खेती और खानों के काम पर हों; अथवा व्यापार और सरकारी नौकरी करते हों उन सबों का उद्देश्य एक ही है। अर्थात सरकारी कर्मचारियों को चाहिए कि वे इस देश का शासन उत्तम रीति से करें; और अन्य लोगों (विदेशियों) को चाहिए कि अपनी पूंजी भिन्न भिन्न व्यवसायों में सफलता पूर्वक लगा कर इस देश की सम्पत्ति को चूसलें" * भारत में खानों का व्यवसाय करने वाले अंगरेज़ों से लार्ड कर्जन ने जो कुछ कहा था उसका भी सारांश यही था कि मेरा काम शासन करने का है और तुम लोगों को इस देश की सम्पत्ति को चूस लेने का। दोनों कार्य एक ही प्रश्न और एक ही कर्तव्य के भिन्न भिन्न स्वरूप हैं।" † इस सम्मति का विरोध करते हुए काटन महोदय ने कहा था कि:—"उक्त वाक्यों में एक भी ऐसा शब्द नहीं है कि जिससे यह बात प्रगट होती हो कि इस देश की दुःखित प्रजा का पक्ष करना और उनको कष्ट से मुक्त करना अफ़सरों का कर्तव्य है। बलवान का धर्म यही है कि वह दुर्बल की रक्षा करे। परन्तु हम देखते हैं कि इस देश में अङ्गरेज़ों के केवल दोही कर्तव्य हैं। शासन करना और धन को चूसना। भारतवासियों की योग्यता और उनके हक़ पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता!! इस बात का कुछ भी विचार

* यह अंगरेज़ी के "Exploit" का भावार्थ है काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने अपने "भाषा वैज्ञानिक कोष" के 'अर्थशास्त्र की परिभाषा' में उक्त शब्द का यही अर्थ किया है।

† My work lies in administration, yours in exploitation; but both are aspects of the same question and of the same duty."

Lord Curzon's speach at
Burrakur, January 1905

नहीं किया जाता कि भविष्यत में भारतवासियों को कौनसा स्थान प्राप्त होगा !!!

एक बार अपने सिविल सर्विस डिनर (भोज) के समय अपने देशबांधवों को इस प्रकार उपदेश दिया था:— "भारतवर्ष में यह परिवर्तन का समय है। शासन करने वालों को जिनगुणों की आवश्यकता है उन से भिन्न और उत्तम गुण हम लोगों में रहना चाहिए, हम लोगों को उत्तम राजनीतज्ञ होना चाहिए, इसका अर्थ 'दूर दृष्टि से देखना और तदनुसार कार्य करना है। इस समय जो परिवर्तन हो रहा है उसे कोई रोक नहीं सकता। अतएव हम लोगों को उचित है कि हम इसी अवस्था के अनुकूल अपना बर्ताव रक्खें। हम लोग गवर्नमेंट के प्रतिनिधि हैं। हम लोगों को अपनी शक्ति का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए कि अन्त में यह परिवर्तन हमारे लिए सुखकारी हो। यह कार्य केवल सहानुभूति, प्रेम और धैर्य से हो सकता है।"

सर हेनरी काटन महोदय हमारी कांग्रेस के भी बड़े भक्त हैं। आपको विश्वास है कि कांग्रेस की इस देश से लाभ होगा। बहुधा आप कहा करते हैं कि यह भारत की राष्ट्रीय सभा है। इस में हर एक प्रान्त के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। बड़े बड़े घराने के ज़मीदार, कौंसल के मेम्बर, लोकल बोर्ड और म्युनिसिपलिटी के मेम्बर, आनरेरी मजिस्ट्रेट यूनिवर्सिटी के फ़ेलो, व्यापारी, इंजिनियर डाक्टर, पत्र सम्पादक, प्रोफ़ेसर, वकील इत्यादि सब लोग एकत्रित होकर, राजनैतिक विषय की चर्चा करते हैं और प्रजा के दुःखों को सरकार से निवेदन करते हैं।

हम ऊपर लिख आए हैं कि काटन साहब भारत के शिक्षित समाज पर बहुत प्रेम करते हैं। आपका कथन है कि भारत में जो सबसे अच्छे लोग हैं वे एकान्त में रहना पसंद करते हैं। वे लोग अपनी विद्वता, शुद्धा चरण और स्वतंत्रता के कारण अपने समाज पर इस प्रकार का अद्भुत प्रभाव डालते हैं कि वे बिना किसी के कहे ही सब समाज के मुखिया समझे जाते हैं। यद्यपि काटन महोदय इस देश के शिक्षित युवकों से द्वेष नहीं करते

तथापि आप उनकी न्यूनताओं को भली भांति जानते हैं। आप लिखते हैं कि, "शिक्षित लोगों में जो अवगुण दिखाई देते हैं वे उन कारणों से उत्पन्न हुए हैं कि जिन पर उनका कुछ वश नहीं चलता । सम्प्रति इन लोगों की संख्या बहुत कम है । और वे जन समूह के मान से बहुत अधिक शिक्षित हैं। ऐसी अवस्था में यदि वे अभिमानी हों तो इस में आश्चर्य ही क्या है ? इन लोगों को सरकारी अधिकार के बड़े २ पद दिए नहीं जाते; तब यदि वे असन्तुष्ट हों तो इस में आश्चर्य की कौन सी बात है ?"

सर हेनरी काटन महोदय के दो पुत्र भारतवर्ष में ही हैं। एक तो कलकत्ता हाईकोर्ट के एडवोकेट हैं; और दूसरे मदरास की सिविल सर्विस में हैं। आपका एक भतीजा भी यहीं नौकर है । इस देश के साथ आप के वंश का जो इतना घना सम्बन्ध है उसको सर हेनरी काटन अत्यन्त भूषणास्पद समझते हैं एक स्थान पर आपने बड़ी ख़ुशी के साथ यह कहा भी है कि "भारतवर्ष के शासन में, वंश परम्परा से, मेरा सम्बन्ध चला आता है" । हम ईश्वर से सविनय प्रार्थना करते हैं कि काटन महोदय के वंशज भी आप ही के समान इस देश की भलाई करने का उद्योग करें ।

—:+:+:*:+:+:—

गोपाल कृष्ण गोखले।

—:+:X:*:X:+:—

यथा चित्तं तथा वाचो यथा वाचस्तथा क्रिया ।
चित्ते वाचि क्रियायां च साधूनामेकरूपता ॥ *

वर्तमान समय में, कितने ही भारत सन्तान जननी जन्म भूमि की सेवा, अपना स्वार्थ त्याग कर रहे हैं। एक प्रकार से तो उन्होंने देश सेवा करने का व्रत ही धारण किया है। काम करने पर चाहे उनका नाम भले ही हो, लोग उनका आदर, सत्कार और मान करें; परन्तु वे कभी अपने नाम अथवा मान के लिये उद्योग नहीं करते। उन पुरुष रत्नों में से, भारत का मुख उज्ज्वल करने वाले माननीय गोपाल कृष्ण गोखले भी हैं। आज से कुछ वर्षों पहले आपको देशवासियों में से बहुत ही कम लोग जानते थे। आप एकान्त में आत्मत्याग किए बैठे, देश की भलाई का कार्य बिना किसी प्रकार का बदला लिए अथवा उसकी इच्छा किए हुए कर रहे थे। परन्तु मणि का प्रकाश कब तक न होता? आपके प्रकाश से देशवासियों के नेत्र खुले, सर्वत्र लोग आपकी चर्चा करने लगे। बंगाल, पंजाब, संयुक्त-प्रान्त, मदरास इत्यादि सारे देश में, लोग आपका आदर सम्मान करने लगे। आपने भारत की भलाई का जो कुछ कार्य किया अथवा कर रहे हैं उसकी प्रशंसा इसी देश के लोग नहीं करते हैं वरन् इंगलैंड के लोग भी आपकी प्रशंसा मुक्त कंठ से कर रहे हैं। आप स्वावलम्बी हैं। अब तक आपने जो कुछ धन अथवा मान प्राप्त किया वह सब आपके

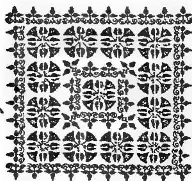
---

* जैसा चित्त में होता है वैसा ही वचन बोलते हैं और जैसा बोलते हैं वैसा ही करके दिखा देते हैं। सत्पुरुषों का मन, वचन, कर्म तीनों एक ही तरह के होते हैं।

तथापि आप उनकी न्यूनताओं को भली भांति जानते हैं। आप लिखते हैं कि, "शिक्षित लोगों में जो अवगुण दिखाई देते हैं वे उन कारणों से उत्पन्न हुए हैं कि जिन पर उनका कुछ वश नहीं चलता। सम्प्रति इन लोगों की संख्या बहुत कम है। और वे जन समूह से मान से बहुत अधिक शिक्षित हैं। ऐसी अवस्था में यदि वे अभिमानी हों तो इस में आश्चर्य ही क्या है? इन लोगों को सरकारी अधिकार के बड़े २ पद दिए नहीं जाते; तब यदि वे असन्तुष्ट हों तो इस में आश्चर्य की कौन सी बात है?"

सर हेनरी काटन महोदय के दो पुत्र भारतवर्ष में ही हैं। एक तो कलकत्ता हाईकोर्ट के एडवोकेट हैं; और दूसरे मदरास की सिविल सर्विस में हैं। आपका एक भतीजा भी यहीं नौकर है। इस देश के साथ आप के वंश का जो इतना घना सम्बन्ध है उसको सर हेनरी काटन अत्यन्त भूषणास्पद समझते हैं एक स्थान पर आपने बड़ी खुशी के साथ यह कहा भी है कि "भारतवर्ष के शासन में, वंश परम्परा से, मेरा सम्बन्ध चला आता है"। हम ईश्वर से सविनय प्रार्थना करते हैं कि काटन महोदय के वंशज भी आप ही के समान इस देश की भलाई करने का उद्योग करें।





गोपाल कृष्ण गोखले ।

—:+:X:*:X:+:—

यथा चित्तं तथा वाचो यथा वाचस्तथा क्रिया ।
चित्ते वाचि क्रियायां च साधूनामेकरूपिता ॥ *

वर्तमान समय में, कितने ही भारत सन्तान जननी जन्म भूमि की सेवा, अपना स्वार्थ त्याग कर रहे हैं। एक प्रकार से तो उन्होंने देश सेवा करने का व्रत ही धारण किया है। काम करने पर चाहे उनका नाम भले ही हो, लोग उनका आदर, सत्कार और मान करें; परन्तु वे कभी अपने नाम अथवा मान के लिये उद्योग नहीं करते। उन पुरुष रत्नों में से, भारत का मुख उज्वल करने वाले माननीय गोपाल कृष्ण गोखले भी हैं। आज से कुछ वर्षों पहले आपको देशवासियों में से बहुत ही कम लोग जानते थे। आप एकान्त में आत्मत्याग किए बैठे, देश की भलाई का कार्य बिना किसी प्रकार का बदला लिए अथवा उसकी इच्छा किए हुए कर रहे थे। परन्तु मणि का प्रकाश कब तक न होता? आपके प्रकाश से देशवासियों के नेत्र खुले, सर्वत्र लोग आपकी चर्चा करने लगे। बंगाल, पंजाब, संयुक्त-प्रान्त, मद्रास इत्यादि सारे देश में, लोग आपका आदर सम्मान करने लगे। आपने भारत की भलाई का जो कुछ कार्य किया अथवा कर रहे हैं उसकी प्रशंसा इसी देश के लोग नहीं करते हैं वरन् इंगलैंड के लोग भी आपकी प्रशंसा मुक्त कंठ से कर रहे हैं। आप स्वावलम्बी हैं। अब तक आपने जो कुछ धन अथवा मान प्राप्त किया वह सब आपके

* जैसा चित्त में होता है वैसा ही वचन बोलते हैं और जैसा बोलते हैं वैसा ही करके दिखा देते हैं। सत्पुरुषों का मन, वचन, कर्म तीनों एक ही तरह के होते हैं।

ही स्वावलम्ब का कारण है। ये सब बातें आपके जीवन चरित से स्पष्ट प्रगट होती हैं।

आपका जन्म सन् १८६६ में, एक निर्धन ब्राह्मण के यहां, दक्षिण प्रान्त के कोल्हापुर नगर में हुआ। आपके भाग्य में पितृ सुख भोग बहुत दिनों तक बदा न था। आपके पैदा होने के थोड़े ही दिनों बाद आपके पिता का देहान्त हो गया। इन के एक भाई और हैं। वे आप से बड़े हैं। पिता के मरने पश्चात् उन्हीं के सर पर गृहस्थी का सारा बोझ पड़ गया। घर के सब लोगों का पालन पोषण करना और इन्हें पढ़ाने लिखाने का भार उन्हीं पर था। आपने आरम्भ में शिक्षा कोल्हापुर के एक स्कूल में पाई। वहां अपनी शिक्षा समाप्त करके उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए आप बम्बई गए। वहां आकर एलफ़िन्सटन कालिज में, आपने पढ़ना आरम्भ किया। वहां आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। बी० ए० पास होने पश्चात् आपकी इच्छा इंजिनियरिंग कालिज में पढ़ने की हुई। परन्तु बी० ए० की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण न होने के कारण आप स्वफल मनोरथ न हो सके। अच्छा ही हुआ। यदि आप इंजिनियर कालिज में भरती होकर उसकी उच्च परीक्षा को पास करके इंजिनियर बन जाते तो आपको आर्थिक लाभ अवश्य होता परन्तु उस दशा में आपके द्वारा देश को लाभ पहुंचने की कम सम्भावना थी। उस कार्य में प्रवेश होने से आप राजनैतिक देश हित कार्य को कभी न कर सकते। इसी लिए हम कहते हैं कि अच्छा हुआ कि आप इंजिनियरिंग कालिज में भरती न हो सके। उधर से निराश होकर, आप पूना में आकर न्यू इंग्लिश स्कूल में शिक्षक नियत हुए। उस समय आप की उमर क़रीब १८ वर्ष के थी। यही न्यू इंग्लिश स्कूल अब फ़र्ग्युसन कालिज के नाम से प्रसिद्ध है। इस स्कूल को अपने उद्योग, परिश्रम और आत्मत्याग द्वारा कालिज बनाने वाले चिपलूनकर, नामजोशी, आगरकर, आपटे और तिलक महोदय हैं। यह कालिज महाराष्ट्र देश के प्रधान गौरवशाली विद्वानों के निरन्तर परिश्रम और साहस द्वारा बहुत ही उत्तम रीति से चल रहा है। अति सामान्य एक छोटे से स्कूल से बढ़ कर यह कालिज

बम्बई विश्वविद्यालय में एक श्रेष्ठ कालिज समझा जाता है। गोखले के समान त्यागी, विद्याव्यसनी लोग ही इस कालिज में अल्प वेतन लेकर अध्यापक का काम करते हैं। गोखले महोदय को यहां केवल सत्तर रुपया मासिक निर्वाह के लिए मिलता था। इतना ही धन पाकर आप वहां अधिक प्रसन्न थे। आपके बड़े भाई की इच्छा थी कि आप कोई ऐसा कार्य करें जिसमें अधिक धन पैदा किया जा सके। आपके भाई ने ग़रीबी के दिन देखे थे। बाल्यावस्था में ही पिता के परलोक वास हो जाने से, गृहस्थी का सारा बोझ, उनके सर पड़ गया था। बहुत दिनों तक, वे इस बोझ को इस आशा से संभाले रहे कि, छोटे भाई के विद्वान हो जाने पर फिर तो अधिक धन प्राप्त हो सकेगा और जीवन आनन्द से व्यतीत होगा। परन्तु छोटे भाई ने लिख पढ़ कर—विद्वान होकर—आत्मत्याग करने का निश्चय किया। स्वल्प वेतन लेकर ही, देश सेवा करने का व्रत ग्रहण किया। यही देख कर उन्हें दुःख हुआ। परन्तु गोखले महोदय की माता विदुषी थीं। उनका विचार था कि यदि हमारा पुत्र स्वार्थ त्याग करेगा तो अवश्य उसकी अधिक कीर्ति संसार में फैलेगी। संसार का वैभव अनित्य है, धन आता है और चला जाता है। धन और वैभव का पाना तो सरल है परन्तु कीर्ति लाभ करना सरल नहीं है। अतएव उन्होंने अपने प्रिय पुत्र को स्वार्थ त्याग करने की आनन्द पूर्वक आज्ञा दे दी। माता की आज्ञा पाकर गोखले महोदय, आनन्द के साथ अध्यापक का कार्य करने लगे और देश का कार्य करने के लिए अध्ययन और अनुभव द्वारा, अपने में देशानुराग की मात्रा को दिनों दिन बढ़ाने लगे।

दक्षिण में, बहुत से विद्वान लोगों ने मिल कर एक समिति स्थापित की है। उसका नाम है Deccan Educational Society; गोखले महोदय भी इस के सभासद हैं। जिस समय गोखले महोदय ने फ़र्ग्युसन कालिज में, शिक्षक का कार्य करना आरम्भ किया उस समय उनकी इच्छा यह न थी कि हम अपना सारा जीवन बालकों को पढ़ाने में ही व्यतीत करें। उनको इस बात की प्रबल उत्कंठा थी कि हम अपना जीवन देशोपकार के कार्य

में व्यतीत करें। इसी कारण आपने शिक्षक की दशा में भी अपने अध्ययन को बराबर जारी रक्खा। अन्य लोग जो समय नौकरी करने से बचा पाते हैं उसे आमोद प्रमोद, कथा वार्ता इत्यादिक अनेक व्यर्थ के कामों में नष्ट करते हैं परन्तु आपने अपना समय विद्या अध्ययन में लगाया। अर्थ शास्त्र पर आपको अधिक अनुराग है। बहुत सा समय उसीके अध्ययन और मनन में आपने अपना व्यतीत किया। इस समय आप अर्थशास्त्र के बहुत बड़े पंडित समझे जाते हैं। अर्थ शास्त्र में आपके अगाध पांडित्य और गंभीर ज्ञान का तब परिचय मिलता है जब आप देश की आर्थिक दशा पर कहीं व्याख्यान देते हैं। आप अपने उत्तम गुणों के कारण पूना में, बहुत ही शीघ्र लोगों को प्रिय हो गए। चारों ओर लोग आपके कार्यों की प्रशंसा करने लगे। सौभाग्य वश सन् १८८७ में, पूना में आपकी स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानडे से भेंट हो गई। रानडे से भेंट हो जाने से आपके जीवन में फेर फार होना आरम्भ हुआ। रानडे ने आपकी कुशाग्र बुद्धि को जान कर आप से देश हित का कार्य लेना आरम्भ किया। रानडे महोदय ने देश का कार्य करने योग्य, योग्य शिष्य पाया और गोखले को अपनी योग्यता प्रगट करने का उत्तम अवसर मिला। रानडे और गोखले के सम्मेलन से मानो इतिहास में एक शुभ घटना घटित हुई। रानडे महोदय उस समय पूना की सार्वजनिक सभा के सभापति थे। हमारे प्रान्त के निवासी चाहे इस सभा से अपरिचित हों परन्तु बम्बई प्रान्त के लोग इस सभा को उत्तम रीति से जानते हैं। बम्बई प्रान्त में राजनैतिक उन्नति का मुख्य कारण यह सभा है। रानडे महोदय ही इस सभा के जीवन दाता थे। रानडे महोदय के पास सार्वजनिक कामों की इतनी अधिकता थी कि वे अकेले सब कार्यों को ठीक ठीक नहीं कर पाते थे। उनको इस कार्य में सहायता देने के लिए एक प्रतिभाशाली पुरुष की आवश्यकता थी। रानडे ने गोखले को देखते ही जान लिया कि इनके द्वारा अवश्य हमें देश हित के कार्यों में सहायता मिलेगी। अतएव रानडे महोदय ने गोखले से कार्य में सहायता देने के लिए कहा। आप तो इस बात की चिन्ता में ही थे

तुरन्त रानडे महोदय की आज्ञा को स्वीकार कर लिया। रानडे ने आपको सार्वजनिक सभा से निकलने वाली त्रैमासिक पत्रिका का सहकारी सम्पादक नियत किया। बस इसी समय से गोखले महोदय राजनैतिक कार्यों में भाग लेने लगे और यही कार्य आपकी उन्नति का मूल कारण हुआ। आपको रानडे महोदय ने ही राजनैतिक क्षेत्र में लाकर खड़ा कर दिया। भारत में बहुत से ऐसे नवयुवक विद्वान हैं जिनको देश का कार्य करने की उच्च अभिलाषा है। परन्तु रानडे महोदय के समान उनको सहायता देकर अथवा हाथ पकड़ कर उठाने वाला नहीं मिलता। यही कारण है कि इस देश में कार्य करने वाले लोग, समय पड़ने पर नहीं मिलते। यदि रानडे महोदय गोखले को आगे न लाते तो आज देश को यह सौभाग्य प्राप्त न होता। इस बात को गोखले महोदय स्वयं स्वीकार करते हैं। आप रानडे का नाम बड़े आदर के साथ लेते हैं। उनको अपना गुरु मानते हैं।

सन् १८९७ में, वेल्बी कमीशन नियत हुआ। उस समय कमीशन के सामने गवाही देने के लिए कुछ लोगों को विलायत भेजने की योजना की गई। बंगाल प्रान्त की ओर से बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मदरास प्रान्त की ओर से सुवरामनिया अय्यर और बम्बई प्रान्त की ओर से दिनशा एडलजी वाचा का भेजा जाना निश्चय हुआ। साथ ही लोगों ने गोखले को भी इस कार्य में सहायता देने के लिए भेजा। जितने लोग कमीशन के सम्मुख गवाही देने गए थे वे सब विद्वान होने के अतिरिक्त अनुभवी और वयोवृद्ध भी थे। परन्तु गोखले महोदय उन लोगों की अपेक्षा अल्पवयस्क होने पर भी इस बहुत बड़े कार्य को उत्तमता पूर्वक विलायत जाकर पूरा कर आए। आप विलायत जाकर कमीशन के सामने कोरी गवाही देकर ही वापस लौट न आए वरन् इङ्गलैंड के बड़े २ नगरों में घूम घूम कर भारत की वर्तमान दशा पर कई एक व्याख्यान भी दिए। इङ्गलैंड में आपके साथ लोगों ने बहुत कुछ सहानुभूति प्रगट की। विलायत से स्वदेश लौट आने पर लोगों को आपकी प्रतिभा का और भी अधिक परिचय मिला। लोग आपके अगाध ज्ञान और पांडित्य को

समझ गए। अतएव कुछ दिनों पश्चात आप बम्बई प्रान्त की ओर से प्रतिनिधि स्वरूप बड़े लाट महोदय की व्यवस्थापक सभा के सभासद नियुक्त हुए। यहां थोड़े ही दिनों में आपने अच्छा नाम पैदा किया। आपने लाट सभा में निर्भय होकर स्वाधीनता पूर्वक एक सच्चे राजनीतज्ञ के समान वक्तृतायें दीं। आपने लार्ड कर्ज़न के कार्यों की आलोचना, बड़े कटु शब्दों में की है। जब लार्ड कर्ज़न ने बंगालियों के बहुत कुछ रोने पीटने, चिल्लाने और हाय २ मचाने पर भी, बंगाल के दो टुकड़े कर दिए; तब देश में अशान्ति उत्पन्न हुई। लोगों को गवर्मेंट के कार्यों से अश्रद्धा हो गई। सब लोग गवर्मेंट से निराश हो कर विलायती वस्तुओं का बहिष्कार करने लगे। ऐसे कठिन समय में, गोखले महोदय ने विलायत में जाकर भारत की दशा का यथार्थ चित्र विलायत वासियों के सम्मुख प्रगट किया। आपको आशा थी कि विलायत वासी अवश्य हमारे दुःख कहानी को सुन कर हमारे साथ सहानुभूति प्रगट करेंगे और भारतवर्ष में जो अत्याचार हो रहे हैं उन के द्वारा उनकी रोक टोक होगी। क्योंकि विलायत में सर्वसाधारण लोगों के चुने हुए प्रतिनिधि गण ही वास्तव में राज्य कार्य करते हैं। यदि वे लोग चाहें तो भारत की दशा अवश्य सुधर सकती है। परन्तु नक्कार ख़ाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है। विलायतवासी भारत के अन्न से चाहें जितना पले पोसे हों, यहां के धन से उन्हें चाहें जितना सुख प्राप्त हो रहा हो परन्तु वहां-कुछ सज्जनों को छोड़ कर-भारत की दीन दशा पर कोई कभी विचार तक नहीं करता। गोखले ही ने विलायत में, स्टेट सेक्रेटरी जान मार्ले साहब से भी भेंट की परन्तु वहां भी उनको कोरी बातों की सहानुभूति के अतिरिक्त भारत की यथार्थ भलाई होने का ढङ्ग न दिखाई पड़ा। अन्त में आप स्वदेश लौट आए। भारतवासियों में कृतज्ञता की मात्रा बहुत ही अधिक है। जब कभी कोई उनके हित का कुछ भी कार्य करता है वे उसका मान बढ़ाने और कृतज्ञता प्रकाशित करने के लिए तुरन्त खड़े हो जाते हैं। गोखले महोदय की देश सेवा से प्रसन्न होकर लोगों ने आपको जातीय

महासभा–नेशनल कांग्रेस–का सभापति चुना। अतएव सन् १९०५ में, आपने काशी की कांग्रेस के सभापति का आसन ग्रहण किया। कांग्रेस पंडाल में घुसतेही चारों ओर से दर्शकों ने 'वन्दे मातरम्' और गोखले की जय की आनन्द ध्वनि आरम्भ की। सभापति का आसन ग्रहण करने पर आपने जो वक्तृता दी वह बहुत ही उत्तम और मनन करने योग्य है। आप ने अपने भाषण में लार्ड कर्ज़न के राजत्व काल की आलोचना करते हुए कहा कि :—

"काल सभी बातें उलटी कर देता है। अब लार्ड कर्ज़न का भी राज्य काल नहीं रहा है। गत सात वर्ष तक हम उस विलक्षण मूर्ति को देख देख कर कभी चकित होते थे, कभी घबरा उठते थे, कभी क्रोध के मारे जल उठते थे, कभी दुःख से तड़फड़ाने लगते थे; यहां तक कि अब अनुमान करना कठिन हो गया है कि हम उस मूर्ति से पार पा गए हैं कि नहीं। उस मूर्ति ने हमारे चित्त में औरंगज़ेब का समय ला दिया। लार्ड कर्ज़न ने उसी की भांति योग्यता, उसी की भांति शक्ति, उसी की भांति कार्य करके, उसी के समान अपना भयानक स्वरूप दिखा कर सबों को डरवा दिया।" इसके पश्चात् आपने लार्ड कर्ज़न की 'वायकाला क्रम' में दी हुई वक्तृता की आलोचना की। आपने कहा कि "लार्ड कर्ज़न के सारे काम जो लोगों के दिल में चुभ रहे हैं उनमें से बंग-भंग के कारण लोगों के हृदय पर अधिक आघात पहुंचा है। देश के बड़े से बड़े और छोटे से छोटे मनुष्य ने भी लार्ड कर्ज़न की इस नीति पर शोक और दुःख प्रगट किया परन्तु उन्होंने हम लोगों के कथन को बहुत ही उपेक्षा की दृष्टि से देखा। महाराजा यतीन्द्र मोहन, सर गुरुदास बनर्जी, राजा प्यारी मोहन, डाक्टर रास बिहारी घोस, महाराजा मैमन सिंह, महाराजा क़ासिम बाज़ार, इत्यादि बड़े बड़े लोग जो कभी राजनैतिक झगड़े में नहीं पड़ते हैं वे भी अपनी आर्तनाद लेकर गवर्मेंट की सेवा में उपस्थित हुए; परन्तु उनकी पुकार को भी धूल में मिला दिया गया। यदि ऐसे सज्जनों की बातें योंही टाल दी जावें, यदि सब भारतवासी अमोल जानवरों की तरह तुच्छ समझे जावें, तो हम केवल

यही कहेंगे कि गवर्मेंट का प्रजा से मिलकर कार्य करने की इतिश्री हो चुकी। आज सौ वर्ष से अँगरेज़ी गवर्मेंट भारत पर शासन करती है परन्तु इस से बढ़कर राजनीति का अपमान कभी देखने में न आया था।"

इसी प्रकार आपने स्वदेशी, बहिष्कार इत्यादि अनेक देश हित की बातों की विवेचना बड़ी योग्यता से की। आपके भाषण को सुनकर सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। परन्तु विलायत में बहुत दिनों तक निरन्तर व्याख्यान देते रहने से आपके गले में, एक फोड़ा हो गया था। यद्यपि वह फोड़ा उस समय बिलकुल अच्छा हो गया था परन्तु उसका कुछ असर बाक़ी था। इस कारण जो लोग पंडाल में दूर बैठे थे वे आपका भाषण अच्छी तरह सुन न सके।

अब भी आप सारा समय देश हित का कार्य करने में, व्यतीत करते हैं। गत वर्ष संयुक्त प्रान्त के कई एक बड़े बड़े नगरों में भी आपने आकर व्याख्यान दिए और लोगों को भली भांति समझा दिया कि, हमारे राजनैतिक अधिकार क्या हैं। लाला लाजपत राय को जब गवर्मेंट ने बिना कारण और बिना उनके अपराधों की जांच किए मंडाले भेज दिया तब आपने लाला लाजपत राय का पक्ष समर्थन करने के लिए एक पत्र बम्बई के प्रसिद्ध अंगरेज़ी समाचार पत्र 'टाइम्स आफ़ इंडिया' में, प्रकाशित करवाया था। उसमें आपने स्पष्ट लिखा था कि:-"वर्तमान दशा पर मैंने ख़ूब अच्छी तरह विचार किया है। मुझे इस बात का दृढ़ विश्वास हो गया है कि लाला लाजपत राय की स्वतंत्रता छीन कर बिना विचार किए हुए ही, उन्हें देश निकाले का कठिन दंड देकर, गवर्मेंट ने बड़ा अन्याय किया है।"

राजविद्रोही सभाओं को बन्द करने का बिल नवम्बर सन् १९०७ में, गवर्मेंट ने कौंसिल के सामने पेश किया। कौंसिल में सर्कारी मेम्बर अधिक होने के कारण वह बिल पास हो गया। जिस समय यह बिल शिमले में वायसराय की कौंसिल में उपस्थित किया था उस समय गोखले महोदय ने निर्भय होकर बिल के पास किए जाने का ख़ूब ही कड़े शब्दों में विरोध किया। आपने कहा कि:- "इस प्रकार बिल पास

करने से अच्छा तो यह होता कि हार्वी साहब यह कह देते कि भारत-वर्ष में कौंसिल का यह काम है कि हाकिमों के हुक्मों को कानून बतादें। कौंसिल में तो बिल केवल नाम मात्र के लिए नियम पालन करने के हित पेश किया जाता है। भारतवासियों को याद रखना चाहिए कि उन्हें इन बातों में दख़ल देने का कोई काम नहीं है। वह चाहें जितना चिल्लावें उनकी बातें कभी न सुनी जायगी। उनका भला इसी में है कि जो कुछ हम करें उसे वे चुप चाप मान लें"। देश में शान्ति कड़ाई करने से रहती है अथवा देशवासियों को प्रसन्न रखने से; इस बाबत आपने कहाः– "यह बात सच है कि, देश में अशान्ति फैल रही है परन्तु क्या सरकार समझती है कि ऐसे उग्र उपायों से अशान्ति दब जायगी? नहीं, यह कभी नहीं दब सकती; वह और अधिक फैलेगी। गवर्मेंट से बैर का भाव क़रीब क़रीब कहीं नहीं है और जहां है वहां उसके कारण स्पष्ट हैं। यदि सरकार चाहे तो उन्हें भी सहज में मिटा सकती है। परन्तु यही नाराज़ी और असन्तोष बढ़ते बढ़ते प्रजा के भावों को गवर्मेंट की ओर से बिलकुल बदल देंगे और उनके आचरणों में भी अवश्य परिवर्तन होगा। 'भारत की प्रजा अच्छे भाव से राज भक्त है'। यह बात लार्ड कर्ज़न ने आज से पांच वर्ष पहले दिल्ली दरबार में स्पष्ट कही थी। और यह बात सच भी है। परन्तु देश में शिक्षा का प्रचार बढ़ने से लोगों की अभिलाषायें भी बढ़ रही हैं। अपनी अभिलाषाओं को पूरा करने के लिए उद्योग करना राजविद्रोह नहीं है। लार्ड कर्ज़न की दुर्नीति और दुर्वाक्यों से ही देश में असन्तोष फैला। लार्ड कर्ज़न ने अपनी दुर्नीति द्वारा मूर्खता वश हो, लोगों के विरोध करने पर भी बंग-भंग कर ही डाला। गवर्मेंट लोक मत की कुछ भी परवाह नहीं करती यह जान कर लोगों का चित्त बड़ा खिन्न हुआ और साथ ही देश में गरम दल का जन्म हुआ। उनका प्रभाव देश में ख़ूब बढ़ा। परन्तु इस सबका कारण गवर्मेंट की दुर्नीति ही है"। अन्त में आपने इस बिल का परिणाम बतलाते हुए कहा किः- "यह बात सरकार को अच्छी तरह याद रखनी चाहिए कि

संसार भर में कहीं भी ये उत्कट उपाय सफल नहीं हुए हैं और न भारतवर्ष में भी ये कभी सफल होंगे। इस से लोगों के मन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा जिसे शायद वे कभी न भूलें। शासन का काम भी इस बिल के पास हो जाने से कुछ सरल न हो जायगा वरन् जिस असन्तोष को रोकने के लिए आप इस बिल को पास करते हैं इसके पास हो जाने से वह दिन दूना रात चौगना बढ़ेगा।"

पाठकगण! आपने गोखले महोदय की स्वतंत्रता को देखा? सच बात कहने में आप किसी का भय नहीं करते। भारत के विधाता और उनके मंत्रियों के सम्मुख ही आपने किस प्रकार उनके कार्य की निन्दा की। सच बात कहने का आप में एक सर्वोत्तम गुण है। दूसरा गुण आप में त्याग का है। सबसे पहले आपने दक्षिणात्य शिक्षा समिति के लिए धन का त्याग करना स्वीकार किया। केवल जीवन निर्वाह के लिए सत्तर रुपया मासिक वेतन लेना और धैर्यता पूर्वक काम करना एक युवक के लिए बहुत ही सराहनीय है। जब विद्या प्राप्त करने पश्चात युवकों के मन में, सुख और वैभव पाने की उत्कट अभिलाषा सहज में ही पैदा होती है। ऐसे कठिन समय में अपने मन को रोक कर देश हित के लिए अपना जीवन दे देना कितना कठिन काम है। गोखले महोदय ने फ़र्ग्युसन कालिज में विद्यार्थियों को विद्यादान देने के लिए बीस वर्ष तक अपना जीवन निछावर कर दिया। त्याग के अतिरिक्त एक विशेष गुण आप में और है; वह गुण है गुरुभक्ति। हमारे देश में प्राचीन समय में यह नियम था कि शिष्य कार्य करने से पहले अपने गुरु का अभिवादन करता था। इसी प्रकार गोखले महोदय सदा अपने प्रिय गुरू रानडे का भक्ति पूर्वक नामोच्चारण करते हैं। जहां कहीं इस विषय का ज़िक्र आता है आप अपने को 'रानडे महोदय का ऋणी बतलाते हैं और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करते हैं। आप अब भी देश हित का कार्य तन, मन, धन, से कर रहे हैं। ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि आप दीर्घायु हों और इसी प्रकार सदैव देश का कार्य बराबर करते रहें।

डाक्टर राश विहारी घोष।

—:०:*:०:—

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते निघर्षणच्छेदनतापताडनैः।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते श्रुतेन शीलेन कुलेन कर्मणा ॥*

डाक्टर राश विहारी घोष का जन्म, २३, दिसम्बर, सन् १८४६ को, तोरेकोना नामक एक छोटे से गांव में हुआ। यह गांव बंगाल प्रान्त के बरदवान ज़िले में है। आपके पिता का नाम जगबन्धु घोष था। जगबन्धु बाबू एक सामान्य गृहस्थ थे। डाकृर साहब को पितृ सुख बहुत दिनों तक न मिला। जिस समय आपकी उमर चार वर्ष की थी तबही आपके पिता का देहान्त हो गया। अपने भाइयों में राश विहारी घोष सब से बड़े थे। अतएव आप को लिखाने पढ़ाने का सब से पहले प्रबंध किया गया। आरंभिक शिक्षा आपने बानकुड़ा हाई स्कूल में पाई। वहां आपने मेट्रिक्यूलेशन की परीक्षा दी और इस परीक्षा में आप दूसरे नम्बर पर पास हुए। मेट्रिक्यूलेशन परीक्षा पास हो जाने बाद उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए सन् १८६१ में, आप कलकत्ते आए। कलकत्ते आकर आप वहां प्रेसीडेन्सी कालिज में भरती हुए। उस समय प्रेसीडेन्सी कालिज में मिस्टर सटक्लिफ़ प्रिन्सिपल थे। आपके पढ़ाने की पद्धति और विद्वता की लोग उस समय बहुत बड़ी प्रशंसा करते थे। उन्हीं की निरीक्षणता में राशविहारी घोष ने शिक्षा पाई। सन् १८६४ में, आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। आपका ऐच्छिक विषय भाषा शास्त्र था। अतएव आपने सन् १८६६

* जिस प्रकार ४ तरह से सोने की परख होती है अर्थात घिसने से, काटने से, तपाने से, और पीटने से उसी प्रकार ४ बातों से आदमी परखा जाता है—विद्या से, शील से, कुल से, और काम से।

में, अंगरेज़ी भाषा में, एम० ए० की परीक्षा पास की। और सन् १८६७ में बी० एल० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। इस परीक्षा में आप अपने साथियों में सब से अव्वल नम्बर रहे। अतएव कलकत्ता विश्वविद्यालय ने आपको एक स्वर्णपदक प्रदान किया।

विश्वविद्यालय की सारी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो जाने पर भी आप की ज्ञान-तृष्णा पूरी न हुई। आपने अपने अध्ययन को बराबर जारी रक्खा। अंगरेज़ी भाषा की सर्वोत्तम पुस्तकों को आप ने ख़ूब ही मन लगाकर पढ़ा। जब इस से भी आप को सन्तोष न हुआ तब आप ने जर्मन और फ्रेंच भाषाओं का भी अध्ययन किया। यूरोपीय इतिहास और राजनीतिशास्त्र का भी आपने ख़ूब ही मनन किया है। इस प्रकार आपने परिश्रम करके भाषा और विचार दोनों प्रकार के ज्ञान को उत्तम प्रकार से बढ़ाया। अंगरेज़ी भाषा पर आपको पूर्ण अधिकार है। विगत वर्ष जब कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ते में हुआ था तब आप स्वागतकारिणी सभा के सभापति नियत हुए थे। उस समय जो आपने वक्तृता दी थी उस से आप के पांडित्य का पूर्ण रूप से परिचय मिलता है। गत नवम्बर मास में भी, जब लाट सभा के सम्मुख सभाओं के बन्द किए जाने का बिल पेश था उस समय भी आपने अपने भाषा ज्ञान का भली भांति परिचय दिया था। आप की स्मरणशक्ति बहुत ही तीव्र है। इस कारण जो कुछ आपने पढ़ा है उसका उद्योग समय पड़ने पर लिखने अथवा बोलने में, आप उत्तम रूप से कर सकते हैं। लिखते अथवा बोलते समय, आप अंगरेज़ी भाषा के उत्तम उत्तम ग्रंथों के प्रमाण, सरलता पूर्वक देते चले जाते हैं। उस समय ऐसा मालूम होता है कि वे सब ग्रंथ आप को कंठस्थ हों।

बी० एल० की परीक्षा पास हो जाने पश्चात, थोड़े दिनों बाद ही सन् १८६७ में, आपने कलकत्ता हाई कोर्ट में वकालत करना आरम्भ किया। पहले पहल आपने माननीय जस्टिस द्वारकानाथ मित्र का आश्रय ग्रहण किया। परन्तु थोड़े दिनों में ही मित्र महोदय इस

असार संसार को त्याग कर स्वर्गवास करने के लिए चल बसे। माननीय द्वारका नाथ मित्र का सहारा न रहने से आपकी भी वकालत अन्य नवीन वकीलों की तरह सामान्य रूप से चलने लगी। उन दिनों आप को बहुत समय मिलता था। परन्तु आप अपना समय व्यर्थ की बातें करने, टेनिस अथवा गेंद बल्ला खेलने, इत्यादि बातों में नष्ट नहीं करते थे। आप अपना सारा समय क़ानून का अध्ययन करने में व्यतीत करते थे। आपने क़ानून का अध्ययन और मनन शास्त्रोक्त रीति से किया। क़ानून के मूल तत्वों पर भी आपने ख़ूब ही विचार किया। क़ानून का मनन करते समय आपने हिन्दू और मुसलमानी धर्मशास्त्र का ही अध्ययन नहीं किया वरन् अंगरेज़ी, यूरोपियन और अमेरिकन क़ानून का भी ज्ञान पूर्ण रूप से आपने प्राप्त किया। एक देश के क़ानून को दूसरे देश के क़ानून से तुलना करने में आप बहुत निपुण हैं। भारत, यूरोप और अमेरिका की अदालतों के फैसलों को भी आपने ध्यान से पढ़ा। इंग्लैंड के क़ानून की भी ख़ूब ही बारीक बारीक बातों पर आपने विचार किया। इस प्रकार चार वर्ष निरन्तर परिश्रम करके सन् १८७१ में, 'आनर्स इन ला' की सर्वोच्च क़ानूनी परीक्षा को आपने पास किया।

इस परीक्षा को पास कर लेने पश्चात आप चार वर्ष तक 'टागोर ला लेक्चरर' का काम करते रहे। 'भारत में रहन का क़ानून' (The law of Mortgages in India) यह विषय बहुत ही कठिन है। परन्तु इस विषय पर आपने बारह लेक्चर दिए। ये व्याख्यान बहुत ही शीघ्र पुस्तकाकार छपकर प्रकाशित हुए। इन व्याख्यानों का प्रचार होने से डाक्टर घोष के अध्ययन, विवेचन, क़ानूनी तत्वों का ऐतिहासिक पद्धति से विचार करने की शक्ति, क़ानून के अनेक तत्वों की तुलना करने का विलक्षण ज्ञान, इत्यादि महत्व की बातों का परिचय लोगों को प्राप्त हुआ। उस समय इस पुस्तक की चारों ओर इतनी अधिक प्रशंसा हुई कि छोटे से लेकर बड़े तक सब वकीलों ने उसे मँगाकर पढ़ा। सन् १८८२ में, 'ट्रान्सफ़र आफ़ प्रापरटी एक्ट' तय्यार करने के समय इस पुस्तक से बहुत कुछ मदद ली गई। इस बात को उस एक्ट का

मसविदा तय्यार करने वाले डाक्टर स्टोक्स ने स्वयं कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार किया है।

टागोर ला लेक्चर की पुस्तक प्रसिद्ध होते ही डाक्टर घोष की वकालत खूब अच्छी तरह चलने लगी। उस समय से अब तक बराबर आपकी वकालत उत्तमता पूर्वक चल रही है। सन् १८७९ में, कलकत्ता विश्वविद्यालय ने आपको अपना फ़ेलो बनाया और सन् १८८४ में, कलकत्ता विश्वविद्यालय ही ने आपके क़ानूनी ज्ञान को जानकर 'डाक्टर आफ़ लाज़' (एल० एल० डी०) की पदवी दी। सन् १८८९ में, आप बंगाल के लाट सभा के सभासद बनाए गए।

सन् १८९१ में, लार्ड लैंसडौन साहब ने आपको भारतवर्ष की क़ानून बनाने वाली कौंसिल का सभासद बनाया। आप इस लाट कौंसिल में, सन् १८९५ तक सभासद रहे। इन ६ वर्षों में आपने लाट-सभा में, कई एक देश सुधार के काम किए। आप के ही सुझाने पर दीवानी के क़ानून में दो एक नए सुधार हुए। परदेश से आनेवाले माल पर कर लगाने के क़ानून का-आपने यह जान कर भी कि सरकार विलायत वालों के लाभ के सामने हमारी बातों को कभी स्वीकार न करेगी भारतवासियों का पक्ष लेकर–निर्भय पूर्वक खूब ही कड़े शब्दों में विरोध किया। उस समय आपने अपने भाषण द्वारा गवर्नमेंट को यह स्पष्ट बतला दिया था कि गवर्नमेंट मेनचेस्टर वालों के लिए भारतवासियों के साथ कितना अन्याय करती है। कौंसिल में उत्तम प्रकार से कार्य करने के कारण गवर्नमेंट ने आपको सन् १८९६ में, सी०आई०ई० की पदवी प्रदान की। इस के पश्चात आपने आठ वर्ष तक अपना जीवन साधारण रीति से निर्वाह किया। वकालत का कार्य करने और पुस्तकावलोकन के अतिरिक्त, आपने किसी देश हित कार्य में भाग नहीं लिया।

परन्तु इतने में लार्ड कर्ज़न के औरंगजेबी समय का वैभवरवि पश्चिम की ओर से प्रकाशित हुआ। उन्होंने अपनी अदूरदर्शिता के कारण, भारतवासियों के ऊपर बहुत ही बे परवाई के साथ शासन किया। दिल्ली दरबार के समय, अपने नवाबी ठाठ में मग्न होकर, भारत के राजा

महाराजाओं की प्रतिष्ठा और मान की कुछ भी परवाह न कर के उनकी खूब ही विडम्बना की। यहां तक कि अन्त में कलकत्ता विश्वविद्यालय के परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियों को पदवी दान के समारम्भ में, जो आपने वक्तृता दी थी उस में इस देशवासियों के प्रति—नहीं वरन् सारे एशियावासियों के प्रति—कटु और असत्य शब्दों को कह कर लोगों के क्रोध और घृणा को खूब ही बढ़ा दिया। लार्ड महोदय के व्याख्यान से व्यथित होकर बंगालियों ने कलकत्ते में एक सभा की। इस सभा के सभापति का आसन डाक्टर घोष ने ग्रहण किया। जो पुरुष आठ वर्ष तक बराबर साहित्य अध्ययन और अपनी जीविका निर्वाह करने के अतिरिक्त, संसारी झगड़ों में नहीं पड़ा; उसमें भी लार्ड कर्ज़न के घृणित कार्य से नवीन स्फुर्ति आगई और एक दम आगे आकर कार्य करने में तत्पर हो गया। लोगों ने भी उसे अपना नेता बनाना स्वीकार किया। जिस प्रकार कोई ऋषि मुनि किसी पहाड़ की खोह में बैठा तपस्या करता हो और अपने देश पर संकट आया हुआ जान तुरन्त आकर उस संकट को निवारण करे उसी प्रकार डाक्टर घोष ने एक दम अपनी तटस्थ वृत्ति को त्याग कर, भारत माता पर आए हुए अनिष्ट ग्रहों का निवारण करने और देशसेवा करने के अभिप्राय से अपने मौन व्रत का भंग किया। इस समय के पश्चात डाक्टर घोष ने जो कुछ देश सेवा की है वह किसी पर छिपी नहीं है। राजविद्रोही सभाओं के बन्द करने का बिल गत नवम्बर मास में शिमले के लाट भवन में, पास होने के लिए उपस्थित किया गया था उस समय आपने भी माननीय गोखले के समान ही निर्भय होकर गवर्मेंट के इस अन्याय कार्य की निन्दा की थी।

गत वर्ष सन् १९०७ के दिसम्बर मास में, जब कांग्रेस का अधिवेशन सूरत में हुआ था तब आप उसके सभापति चुने गए। सूरत में, दला दली के कारण, कांग्रेस का कार्य निर्विघ्न समाप्त न हो सका और न आप को अपनी पूरी वक्तृता पढ़ने का अवसर मिला परन्तु तौ भी आपकी वक्तृता जो सामयिक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई थी उससे जाना

जाता है कि आपने निर्भय होकर, स्पष्ट रूप से, गवर्मेंट के राजनीति सम्बन्धी कार्य की बड़ी ही तीव्र आलोचना की। आपकी वक्तृता बहुत लम्बी चौड़ी है परन्तु उसमें के मुख्य मुख्य विषयों का भाव हम नीचे देते हैं जिसे पढ़ने से मालूम होगा कि आप गवर्मेंट के कार्यों की कितनी तीव्र आलोचना करते हैं। आपका कथन है कि:-"यदि पंजाब आज चुप है तो उसका कारण यह है कि उसका कहना मान लिया गया। यदि बंगाल में इस समय तक बेचैनी मौजूद है तो इसका कारण यह है कि बंग-भंग एक ऐसा नासूर है जो अच्छा न होगा। बंगला भाषा बोलने वाली प्रजा पर एक गवर्नर नियत कीजिए तब आप को हमारी बेचैनी दूर होती मालूम होगी। ज़बरदस्ती का कुछ इलाज नहीं है। देश में शान्ति बनाए रखने का सबसे सरल और आसान उपाय यह है कि प्रजा को इस बात का विश्वास करा दिया जाय कि तुम्हारे सब दुःख दूर कर दिए जांयगे; न कि देश निष्काशन और कठिन से कठिन क़ानून बना कर उसको दबाया जाय। अशान्ति की घटा को अभी सरलता के साथ रोका जा सकता है जो आज कल एक छोटे से बादल के समान है। परन्तु एक समय इस छोटे से बादल से ही, सारे देश पर घन घोर घटा छा जायगी।" भारत सचिव मार्ले साहब को भारत की सच्ची दशा का ज्ञान क्यों नहीं होता इस बाबत आपने लिखा है कि:-"सेक्रेटरी आफ़ स्टेट तमाम बातों को हाकिमों से मालूम करते हैं। सर्वसाधारण की राय कह कर जो बात उनको बताई जाती है वह भारतवर्ष के सर्वसाधारण की राय नहीं है वरन् वह विलायत के उन झूठे सम्वाददाताओं की है जो विलायती समाचार पत्रों में प्रकाशित होती हैं"। आप ने मिस्टर मार्ले की एक वक्तृता का हवाला देकर लिखा है कि:- "मिस्टर मार्ले ने अभी हाल में इंग्लैंड के शत्रुओं का वर्णन किया है। इंग्लैंड के वे शत्रु कौन हैं? भारत के लिखे पढ़े सुशिक्षित लोग। परन्तु भारत के शिक्षित लोग इंग्लैंड के शत्रु नहीं हैं वरन् इंग्लैंड के असली शत्रु वे अंगरेज़ हैं जो इस देश की प्रजा के साथ घृणा करने में कोई अवसर ख़ाली नहीं जाने देते। प्रभु की जाति

में होने के कारण वे मारे घमंड के फूले नहीं समाते और इस देश की प्रजा को तुच्छ जाति समझ कर उनसे प्रेम और मित्रता के बंधन दृढ़ करना वे असम्भव समझते हैं। मिस्टर मार्ले यह विचार करते हैं कि हम बालकों की तरह चान्द को पकड़ने के लिए रोते हैं। परन्तु जब नेशनल कांग्रेस यह कहती है कि सेना विभाग का ख़र्च कम किया जाय तब क्या वह चान्द के पकड़ने के लिए रोती है? जब नेशनल कांग्रेस बृटिश कालोनी के उन आज्ञाओं का विरोध करती है जिनके द्वारा भारतवासियों को अपमानित किया जाता है और यह विनय करती है कि कालोनियों में रहने वाले भारतवासियों को वहां के रहने वाले अन्य लोगों के समान ही अधिकार दिए जांय तो क्या वह चान्द पकड़ने के वास्ते रोती है? जब नेशनल कांग्रेस न्याय और शासन विभाग के पृथक पृथक किए जाने पर ज़ोर देती है, जब नेशनल कांग्रेस बंग-भंग पर विरोध प्रगट करती है, जब नेशनल कांग्रेस आरम्भिक शिक्षा का अधिक प्रचार किए जाने के लिए विनय करती है अथवा भूमिकर का स्थायी प्रबंध करने के लिए कहती है या कौंसिलों में देशवासियों को अधिक लिए जाने पर ज़ोर डालती है तो क्या ये सब बातें कहना चान्द पकड़ने के लिए ही हैं? क्या कोई मनुष्य धर्म पूर्वक यह कह सकता है कि इंग्लैंड को भारतवर्ष के प्रति जो कुछ कर्तव्य कर्म करना था वह उसने पूरा किया है? मैं यह प्रश्न करता हूं कि डेढ़ सौ वर्ष में तुम ने क्या किया? क्या तुमने भारत-वासियों को सुखी बनाने के लिए कुछ उपाय किए? भारतवर्ष के हज़ारों प्राणी कराल काल के गाल में चले जा रहे हैं। क्या हम को तुम ने उच्च शिक्षा दी? वर्तमान समय की शिक्षा ने शान्ति के स्थान पर हमारे दिलों में अशान्ति उत्पन्न करदी है। परन्तु तौभी इस अधूरी शिक्षा ने तुम को योग्य और राजभक्त सेवक दफ़्तरों में काम करने के लिए दिए, जो अंगरेज़ों के समान ही योग्य हैं; तो क्या अब समय नहीं आया है कि शिक्षित भारतवासियों को अपने देश का शासन करने में कुछ अधिकार दिए जांय? हम देखते हैं कि जापान ने पचास वर्ष के अन्दर ही अन्दर किस प्रकार अपने देश की उन्नति करली है। हम फ़ारस

और चीन की भी दशा को देख रहे हैं। और इन देशों की ये दशा देख कर हमें निराशा उत्पन्न हो रही है। हमें अब चिकनी चुपड़ी बातों से शान्ति नहीं मिलेगी। मिस्टर मार्ले जब इन बातों पर विचार करते हैं तब वे इस दृश्य को भूल कर यह कहने लगते हैं कि हमने अपनी ज्ञान ज्योति को मिल और बर्क की ज्ञान ज्योति से प्रकाशित किया है। हम भी जानते हैं कि हमें क्या कठिनाइयां हैं। हम लोगों को राजनैतिक दृष्टि से युक्त होकर एक जाति बनने के लिए क्या क्या कठिनाइयां बीच में पड़ेंगी इस बात को हम जानते हैं। रस्ता बहुत दूर है, ख़राब है, पैर थक जायंगे। परन्तु धीरे धीरे पैर बढ़ते बढ़ते बढ़ेंगे। घुटने रक्त से भर जायंगे। दिल टूट जायंगे। परन्तु हमारी विनय है ईश्वर के लिए इस पवित्र राह में तलवार निकाल कर रास्ता न रोकिए। हम फिर भी कहते हैं कि हम चान्द के लिए नहीं रोते हैं वरन् हमारी यह इच्छा है कि हमारा देश ब्रटिश राज्य के स्वाधीन रह कर भी संसार की अन्य जातियों में, अपना यथार्थ गौरव प्राप्त करे।"

डाकूर राश बिहारी घोष के जीवन चरित से उनकी योग्यता, काम करने की प्रणाली, देश सेवा इत्यादि गुण स्पष्ट प्रगट होते हैं। गत तीन चार वर्ष पहले आप कांग्रेस के अनुयायी नहीं थे, इसी कारण आप पर कुछ लोग आक्षेप करते हैं और इसी सबब से गरम दल के लोग आपको कांग्रेस का सभापति बनाए जाने के विपक्ष में थे। परन्तु जो पुरुष समय पड़ने पर देश सेवा का कार्य कर सके, देश सेवा करने के योग्य हो, तो क्या वह इस योग्य नहीं कि उसका मान किया जाय? हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि कांग्रेस में जो मतभेद उत्पन्न हो गया है वह शीघ्रही दूर हो जाय और डाकूर महोदय सदैव जीवन पर्यन्त इस अभागे देश का कार्य करने में तत्पर रहें।

—:○:*:○:—

बाबू आनन्द मोहन बोस।

शरीरस्य गुणानां च दूर मत्यन्तमन्तरम्।
शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः॥*

आज बाबू आनन्द मोहन बोस महोदय का शरीर इस जगत में नहीं है परन्तु उनके नाम और गुण का प्रकाश सारे संसार में फैल रहा है। भारतवर्ष आज कल बहुत ही कुछ गिरी दशा में है परन्तु तौ भी उसमें समय समय पर ऐसे मानवरत्न उत्पन्न हो जाते हैं जो भारत माता के मस्तिक को ऊंचा किए हुए हैं। भारत के सपूत अपने गुण, कर्म और स्वभाव से, 'भारत माता का नाम रत्नगर्भा है' यह सार्थक करके दिखला देते हैं। बाबू आनन्द मोहन बोस उन्हीं सुखोज्वलकारी पुरुषों में से थे। संसार में कोई विद्या लाभ कर के बड़ा होता है, कोई कार्य करके बड़ा होता है, कोई नीतिवान अथवा धर्मज्ञ होने से बड़ा समझा जाता है; परन्तु बाबू आनन्द मोहन बोस में ये सब गुण आकर एकत्रित हुए थे। विद्या का अगाध ज्ञान, कार्य करने की अपूर्व क्षमता और दक्षता, विलक्षण नीतिज्ञ और धर्म में अपूर्व भक्ति और श्रद्धा; सब आपमें एक दूसरे से अधिक थे। अतएव यह बात स्पष्ट रूप से बताने में कठिनाई है कि इन गुणों में से कौन सा गुण आपमें अधिक था।

आपका जन्म सन् १८४८ में, बङ्गाल प्रांत के अन्तर्गत जयसिद्धि ज़िला मैमन सिंह में हुआ था। आपके पिता का नाम बाबू पद्म लोचन बोस था। पद्म लोचन बाबू उस समय मैमन सिंह में सरिश्तेदार थे। अतएव आनन्द मोहन ने वहीं जाकर लिखना पढ़ना आरम्भ किया। लड़कपन में आपका चित्त लिखने पढ़ने में नहीं लगता था। खेलना

* शरीर में और गुण में बड़ा अन्तर है। मनुष्य का शरीर क्षण भर में नष्ट हो जाता है पर उसमें जो गुण रहता है वह कल्पान्त तक स्थित रहता है। अर्थात् उसके गुण की चर्चा नहीं मिटती सदा बनी रहती है।

कूदना ही आपको अधिक प्रिय था। यह दशा देख कर आपके बड़े भाई ने एक दिन क्रोध युक्त होकर कहा कि "तुम अच्छी तरह खेलो, कूदो, तुम लिख पढ़ नहीं सकते"। अपने भाई के क्रोध-युक्त भाषण को सुन कर आनन्द बाबू ने तुरन्त उत्तर दिया कि "हम अवश्य पढ़ सकते हैं; देखना आज से हम कैसा पढ़ते हैं।" उसी दिन से आनन्द मोहन बोस ने पढ़ने लिखने में ख़ूब ही चित्त लगाया। बालक आनन्द मोहन ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर दिखलाई। ९ वर्ष की अवस्था में ही आपने ज़िला की छात्रवृत्ति परीक्षा में सब बालकों से उच्च स्थान पाया—आप अव्वल नम्बर पास हुए। इसके बाद आप अंगरेज़ी पढ़ने के लिए ज़िला स्कूल में भर्ती हुए। यहां भी आप अपने परीक्षकों को अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया। एक एक वर्ष में आपने दो दो दर्जों की परीक्षा देकर उनमें प्रथम नम्बर पाया। सन् १८६२ में, आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय के इन्ट्रेन्स की परीक्षा दी। इन्ट्रेन्स की परीक्षा देने से पांच मास पहले आपके पिता का देहान्त हो गया, इस कारण कई मास तक आपको अपने घर पर जा कर रहना पड़ा। अध्ययन का कार्य कई मास तक रुका रहा। परन्तु अनध्ययन होने पर भी आपका सारे बङ्गाल में दसवां नम्बर रहा और १८) मासिक गवर्मेंट स्कालर शिप (वज़ीफ़ा) पाया। यदि आपका चार पांच मास अनध्ययन न होता तो आप अवश्य सारे बङ्गाल में प्रथम रहते। इस बात का परिचय आपके एफ़० ए० परीक्षा से मिलता है। इन्ट्रेन्स पास होने बाद आप कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालिज में जाकर पढ़ने लगे। सन् १८६४ में, आपने एफ़० ए० की परीक्षा दी। इस परीक्षा में आप सारे बङ्गाल में अव्वल रहे। बी० ए० और एम०ए० की परीक्षा में भी कलकत्ता विश्वविद्यलय में, आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। परन्तु इतने ही से आपकी अपूर्व प्रतिभा का पूर्ण परिचय नहीं मिलता। बहुत से और विद्यार्थियों ने भी विश्वविद्यालय की उच्च परीक्षाओं में अव्वल नम्बर पाया है—वे भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो चुके हैं। परन्तु आनन्द मोहन बोस में और भी विशेषता थी। बी०ए० की परीक्षा में आपने गणित के परचे में इतने अधिक नम्बर पाए कि परीक्षक भी देख कर विस्मित

हो गया। एम० ए० की पदवी दान समारम्भ के समय, कलकत्ता विश्व-विद्यालय के वायसचेन्सलर साहब ने आपके पांडित्य की मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी। एक दिन की बात है कि अध्यापक महोदय ने क्लास में तीन प्रश्न दिए और कहा कि "जो इन प्रश्नों में से एक का उत्तर देगा उसे हम बहुत बड़ा बुद्धिमान समझेंगे और जो दो प्रश्नों का उत्तर देगा वह प्रथम श्रेणी में पास समझा जायगा।" यह सुन कर बाबू आनन्द-मोहन ने पूछा कि "जो तीनों प्रश्नों का उत्तर देगा वह ? "अध्यापक ने हँस कर कहा "तीनों प्रश्नों का उत्तर कोई दे नहीं सकता।" फिर आनन्द मोहन ने पूछा "यदि कोई देसके तो ?" "तो वह हमारे आसन पर विराजमान होगा।" थोड़ी देर के बाद आनन्द मोहन ने तीनों प्रश्नों के उत्तर लिख कर अध्यापक को बताए। अध्यापक महोदय उत्तर देख कर अवाक रह गए। एक दिन गवर्नरजनरल बहादुर कालिज देखने आए। उस समय कालिज के प्रधान अध्यक्ष मि० सटक्लिफ़ साहब ने गवर्नर जनरल से आनन्द मोहन का परिचय करा दिया और इनकी कुशाग्र बुद्धि की बड़ी प्रशंसा की। एम० ए० पास होते ही आनन्द मोहन को सटक्लिफ़ साहब ने प्रेसीडेंसी कालिज के 'इंजिनियरिंग' विभाग में, गणित का अध्यापक नियत कर दिया। उस समय आपकी उमर २१ वर्ष की थी। अध्यापक का काम करते हुए भी आपने 'रायचन्द्रप्रेमचन्द्र स्कालर शिप' (छात्रवृत्ति) की परीक्षा दी। इसमें भी आपको सफलता प्राप्त हुई। 'रायचन्द्रप्रेमचन्द्र स्कालरशिप' पाकर ही आप इंग्लैंड गए। वहां आप केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में गणित का अध्ययन करने लगे। वहां आप को लेटिन और ग्रीक भाषाओं का जानना आवश्यक था। इससे पहले इन भाषाओं से आप बिलकुल अनभिज्ञ थे। दो नवीन भाषाओं को सीख कर उच्च स्थानलाभ करना कठिन कार्य है। परन्तु आप ने अपने परिश्रम और अपनी असाधारण प्रतिभा द्वारा केम्ब्रिज विश्वविद्यालय की गणित परीक्षा में सर्वोच्चस्थान लाभ किया। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में, जो दस विद्यार्थी उच्च स्थान लाभ करते हैं उनको 'रेंगलर' कहते हैं। इन दस विद्यार्थियों में

आनन्द मोहन का नवां नम्बर था। अध्यापक लोगों को पूर्ण विश्वास था कि आप सब में प्रथम होंगे। परन्तु परीक्षा के दिनों में आपका स्वास्थ्य कुछ ख़राब हो गया था। इसके अतिरिक्त और भी कई एक विघ्न उपस्थित हुए; नहीं तो आप अवश्य सबों में प्रथम रहते। परन्तु इससे पहले और किसी भारतवासी ने विलायत जाकर इतनी उच्च परीक्षा नहीं पास की थी। आनन्द मोहन ने इस उच्च परीक्षा को पास करके अपने गौरव को नहीं बढ़ाया वरन् भारत माता के मुख को उज्वल किया। जब विलायत वालों ने सुना कि एक भारतवासी ने 'रेंगलर' की उच्च परीक्षा पास की है तब वे चकित हो गए। उन लोगों को विश्वास हो गया कि भारतवासी, विद्या और बुद्धि में हम लोगों से किसी प्रकार कम नहीं हैं। एक समय स्वयं आनन्द मोहन ने अपनी वक्तृता में कहा था कि "हमें विश्वास है कि जिस ज्ञान ज्योति का प्रकाश हमारे ऋषियों के मस्तिष्क में था वह अब भी बुझ नहीं गया है। उस की आभा अब तक हम लोगों में बनी है। यदि ठीक ठीक उद्योग किया जाय तो ऋषियों के ज्ञान का प्रकाश पुनः हम पर पड़ कर हमें प्रकाशित कर सकता है"। आनन्द मोहन ने स्वयं इस का उज्ज्वल दृष्टान्त दिखला दिया।

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में अध्ययन करते समय ही आपने बैरिस्टरी की परीक्षा का भी अभ्यास किया। बैरिस्टरी की परीक्षा पास हो जाने पश्चात आप स्वदेश लौट आए और कलकत्ता हाईकोर्ट में, वकालत करना आरम्भ कर दिया। थोड़े समय में ही आप, कलकत्ता हाईकोर्ट में, वाक् शक्ति, चिन्ता शीलता और क़ानून के अगाध ज्ञान के लिए प्रसिद्ध हो गए। परन्तु आपने कभी धनोपार्जन की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया। यदि आप गणित और विज्ञान चर्चा में अपना सारा जीवन व्यतीत करते तो आप संसार में गणित और विज्ञान के एक असाधारण पंडित समझे जाते। यदि आप अपना सारा समय वकालत करने में ही लगाते तो भी आप अवश्य खूब ही धन संचय करने में मग्न होते और असाधारण क़ानून का ज्ञान रखने वाले समझे

जाते। परन्तु आपने धन संचय अथवा अद्वितीय वैज्ञानिक कहलाने की अपेक्षा देश के नाना प्रकार के जनहित कार्यों को करने में, अपना समय व्यतीत किया। जो समय उनका अदालत में जाने और अपने मुवक्किलों से बातें करने अथवा उनके लिए क़ानून की किताबें देखने का था वह समय वे भारत की भलाई के लिए एकान्त में बैठ कर विचार करने अथवा ब्रह्मसमाज में जाकर ईश्वर की प्रार्थना करने में लगाते थे। मुवक्किल लोग आपको ढूढ़ ढांढ़ कर निराश हो वापस चले जाते थे। आपके साथी बैरिस्टर लोग कहा करते थे कि कलकत्ता हाईकोर्ट ने एक असाधारण बैरिस्टर खो दिया है। यदि बैरिस्टरी में आप मन लगाते तो लाखों रुपया पैदा कर लेते।

बाबू आनन्द मोहन असाधारण वक्ता थे। जिस समय आप बोलने को खड़े होते उस समय न मालूम कहां से आपके हृदय में असाधारण भाव उत्पन्न हो जाया करते थे। आप बोलते समय कभी सोचते नहीं थे। धारा प्रवाहवत् बोलते ही चले जाते थे। बोलते समय आपके मुख की आकृति शान्त, सौम्य और प्रतिभामय दिखाई पड़ती थी। कटु शब्द कभी आप अपने मुख से नहीं निकालते थे। आपका भाषण सरल होता था। जिस समय आप बोलने को खड़े होते थे सब लोग श्रोतागण शान्त, चुप चाप, आपके मुख की ओर टकटकी लगाए, आप की अमृतमयी वाणी को सुनने के लिए चकोरवत् बैठे रहते थे। एक बार कलकत्ता हाईकोर्ट में, एक मुक़द्दमें पर बहस करने के लिए आप खड़े हुए; उस समय आपके वक्तृत्व कौशल को देख कर जज साहब ने सब लोगों के सम्मुख स्पष्ट रूप से यह कहा था कि "पार्लियामेंट के बाहर और कहीं भी हमने इस प्रकार आश्चर्य में मग्न करने वाली अपूर्व प्रतिभाशाली वक्तृता नहीं सुनी।"

गत तीस वर्ष में कोई भी ऐसा देश हित का कार्य नहीं था जिसमें आनन्द मोहन का हाथ न रहा हो। राजनीति, धर्म और समाज संस्कार इत्यादि सब प्रकार के देश हित कामों में आप बड़ी प्रसन्नता के साथ योग देते थे। इन्हीं सब कामों में फँसे रहने के कारण आप अपने व्यव-

साथ में उन्नति न कर सके। वर्तमान समय में, जो राजनैतिक आन्दोलन देश में हो रहा है उस आन्दोलन के जन्मदाताओं और नेताओं में आप का भी नाम है। साधारण प्रजागण को राजनैतिक चर्चा करने, अपने अधिकार और अपने कर्तव्य जानने के लिए आपने बंगाल में, 'भारत सभा' स्थापित की। आप ही उस सभा के मंत्री थे। आप आजन्म उस सभा की उन्नति के लिए चेष्टा करते रहे। नेशनल कांग्रेस की उत्पत्ति होने के दिन से ही आपने इस सभा की सहायता करना आरम्भ किया। स्त्री शिक्षा के भी आप बहुत बड़े पक्षपाती थे। स्त्रियों की उच्चशिक्षा प्राप्ति के लिए आप ने "बंग महिला विद्यालय" स्थापित किया था जो अब बेथून कालिज में मिला दिया गया है। बालकों की शिक्षा के लिए भी आप ने "सिटी कालिज" की बुनियाद डाली थी। कालिज आरम्भ करते समय सारा धन आपने ही लगाया था। परन्तु पश्चात् आपने उदारता पूर्वक इस कालिज को सर्वसाधारण की सम्पत्ति बना दी। साधारण ब्रह्म समाज की स्थापना करनेवालों में आपही प्रधान उद्योगी थे। बहुत दिनों तक आपने इस सभा के सभापति रह कर उत्तमता पूर्वक काम को चलाया। कलकत्ता विश्वविद्यालय की उन्नति के लिए आपने बहुत कुछ परिश्रम किया। एक समय लार्ड रिपन ने इस देश में शिक्षा की उन्नति का उपाय निर्धारित करने के लिए कई एक योग्य पुरुषों पर इसका भार डाला; उन पुरुषों में आनन्द-मोहन का भी नाम था। लाट साहब ने इस कार्य में राय देने के लिए आप से विशेष अनुरोध किया था। आपने इस कार्य में बहुत कुछ लाट साहब को सहायता पहुंचाई थी। आप बंगाल के छोटे लाट की व्यवस्थापक सभा के सभासद् भी थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने भी आपको अपना फ़ेलो बनाया था। मादक द्रव्य निवारणी सभा के भी आप सभासद थे। आप सदैव अपने देशभाइयों को मादक-द्रव्य त्याग का उपदेश दिया करते थे। आपको विश्वास था कि मादक-वस्तुओं का सेवन करने से मनुष्य में मनुष्यत्व नहीं रहता।

सन् १८९८ में, जब कांग्रेस की बैठक मदरास में हुई थी, उस समय लोगों ने आपको कांग्रेस का सभापति चुना। अपने जातियान्धओं द्वारा प्राप्त मान को आपने सहर्ष स्वीकार किया और मदरास जाकर सभापति के आसन को ग्रहण किया। जितनी ही आपको देश की राजनैतिक दशा सुधारने की चिन्ता थी उतनी ही चिन्ता आपको देश की समाजिक और धार्मिक दशा सुधारने की थी। आप बाल्यावस्था से ही ब्राह्मधर्म के अनुयायी थे। जिस समय आप कलकत्ते में पढ़ने गए थे उस समय स्वर्गीय बाबू केशवचन्द्र सेन ब्राह्मधर्म का उपदेश लोगों को देते थे। उन्हीं का उपदेश सुनकर आपने ब्राह्मधर्म ग्रहण किया था। उस समय से मरने के समय तक आप बराबर ब्राह्मधर्म पर दृढ़ बने रहे। और अपनी शक्तिअनुसार ब्रह्म समाज की सेवा करते रहे। आप रात दिन सदा देश कल्याण की चिन्ता में ही मग्न रहते थे। अन्त में यही चिन्ता आपको शीघ्र ही चिता पर लेगई। रुग्नावस्था में भी आप सदा देश हित कार्य में लगे रहते थे; इसी कारण आपकी बीमारी दिनों दिन बढ़ती गई। डाक्टर और आप के आत्मीय स्वजन, आपको ऐसी दशा में काम करने से मना करते थे परन्तु आप ने कभी किसी की बात की ओर ध्यान नहीं दिया। सदैव अपने व्रत में व्रती बने रहे। विगत साल जब लार्ड कर्जन ने बंग-भंग कर डाला और स्वदेशी आन्दोलन का आरम्भ हुआ उस समय आप बीमार थे। चारपाई से उठ नहीं सकते थे। परन्तु ऐसी दशा में भी उस विराट सभा में, जो १६ अक्तूबर को बंग-भंग के स्मरणार्थ कलकत्ते में, बड़े जोश के साथ हुई थी आप गाड़ी में दो आदमियों के सहारे से बैठ कर पधारे थे। और वहां पर जो आप की वक्तृता पढ़ी गई थी वह बड़ीअपूर्व थी। उस से आप के चित्त की गम्भीरता और मन की तेजस्विता प्रगट होती है।

सन् १९०५ में, जब कांग्रेस की बैठक बनारस में हुई थी और गोखले महोदय सभापति हुए थे तब एक खुला हुआ छपा पत्र मि० गोखले के नाम आया था। उस पत्र के नीचे लिखा था "कांग्रेस का

एक भूत पूर्व सभापति" । सुनते हैं यह पत्र आप का ही लिखा हुआ था । आप बीमारी के कारण कांग्रेस में नहीं आसकते थे इसी कारण यह पत्र भेजा था । उस पत्र में बहुत ही महत्व की बातें और देशवासियों के प्रति कर्तव्य का उपदेश था ।

सब से विशेष गुण आप में विनय का था । हमारे यहां नीति के ग्रन्थों में लिखा भी है कि "विद्या ददाति विनयं" यह कहावत आप पर पूरीपूरी घटती है । अंगरेज़ी शिक्षित समाज में, आप के समान विनीति, मिष्ठ भाषी, परोपकारी और साधु चरित पुरुष बहुत कम देखने में आते हैं। विलायत से लौट कर लोग अपने देश भाइयों को घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं और उन्हें तुच्छ समझते हैं परन्तु इस की गंध तक भी बाबू आनन्द मोहन में न थी । वे अपने देश वासियों से बड़े प्रेम से मिलते थे । उनकी यथा शक्ति सहायता करते थे और उनकी ज्ञान वृद्धि का सदैव उपाय सोचा करते थे । बाबू आनन्द मोहन का नाशवान शरीर अब इस जगत में नहीं है परन्तु आप की कीर्ति और गुणों का प्रकाश हो रहा है । हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि बाबू आनन्द मोहन के समान त्यागी, देशानुरागी पुरुष सदैव इस भारत भूमि पर जन्म ग्रहण करके भारत माता के संकट के दूर करते रहैं ।

नोट—बाबू आनन्द मोहन का जीवन चरित इस पुस्तक में मि० सी० शंकरन नाय्यर के बाद होना चाहिए था । परन्तु जिस समय यह पुस्तक लिखी गई उस समय आप का जीवन चरित नहीं प्राप्त हो सका । गतवर्ष जब आप का देहान्त हुआ तब कई एक मासिक पुस्तकों और समाचार पत्रों में, आप का चरित प्रकाशित हुआ । उन्ही के आधार से यह जीवनी पश्चात् लिख कर अन्त में जोड़ दी गई है । पाठक इस त्रुटि को क्षमा करें । लेखक

(परिशिष्ट)

मिस्टर ए० ओ० ह्यूम।

—:○:※:○:—

अयं निजः परो वेति गणनालघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥*

उपरोक्त कवि के कथनानुसार जिस पुरुष में उत्तम गुण हों उसका नाम जान कर मन में बड़ा आनन्द होता है और ऐसे महात्मा पुरुष का चित्र और चरित देखने और पढ़ने की बड़ी प्रबल इच्छा रहती है। अन्य जाति के हित के लिए जो अपनी जाति वालों की परवाह न करके, उन पर उपकार करते हैं उनके गुणों का जितना बखान किया जावे उतना थोड़ा ही है। संसार में ऐसे पुरुष बहुतही कम पैदा होते हैं। भारत का कौन ऐसा पुरुष है जो ह्यूम साहब को नहीं जानता? संयुक्त प्रांत के इटावा ज़िले में, उनका नाम घर घर बाल बच्चे और स्त्रियां, सब ही जानते हैं। गांव के बूढ़े लोग ह्यूम साहब की बहुत सी बातें याद करके अब भी रोने लगते हैं। ह्यूम साहब ने इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना की इस कारण भारतवासी सब उन के ऋणी हैं। जिस समय कांग्रेस का आरम्भ हुआ उस समय सब लोग हँसते थे परन्तु ह्यूम साहब ने दो तीन वर्ष में ही दिखा दिया कि कांग्रेस क्या चीज़ है। हम उनका संक्षिप्त जीवन चरित नीचे देते हैं जिसे पढ़ने से मालूम होगा कि उन्हों ने कई एक बड़े बड़े सरकारी पदों को भारतवर्ष की सेवा करने के कारण ही नहीं स्वीकार किया।

इनके पिता का नाम जोज़ेफ़ ह्यूम था। यह भी बड़े सज्जन राजनैतिक पुरुष थे। ए० ओ० ह्यूम साहब का जन्म सन् १८२९ ई० में, हुआ। लड़कपन में इन का स्वभाव बड़ा चंचल था। तेरह वर्ष की उमर में

---

* यह हमारा है, यह दूसरे का है यह गणना ओछे चित्त वालों की है। उदार चित्त के लिए सब संसार अपना ही है। दूसरा उनको कुछ है ही नहीं जिस में वे वैर भाव रक्खें।

इन्होंने एक जहाज़ के ऊपर नौकरी कर ली। परन्तु इनके पिता ने इनका मन नौकरी के ओर से हटा कर पढ़ने की ओर लगाया। उसी समय से इनका पढ़ना आरम्भ हुआ। विद्या अभ्यास ख़तम करके ये सन् १८४९ में, कलकत्ते आए और ईस्ट इण्डिया कम्पनी की नौकरी करली।

कुछ दिनों तक इन्होंने कलकत्ते में ही काम किया, बाद को सन् १८५६ में, संयुक्त प्रांत के इटावा ज़िले के कलक्टर और मजिस्ट्रेट नियत हुए। इटावे में कलक्टरी और मजिस्ट्रेटी का काम इन्होंने बड़ी योग्यता के साथ चलाया। इनके इटावा में आने के थोड़े ही दिनों बाद उत्तर भारत में सिपाहियों ने बलवा मचा दिया। इटावे का ज़िला और ग्वालियर राज्य की सरहद्द मिली हुई है। ग्वालियर में राव साहब पेशवा, तांतिया टोपे और झांसी की रानी लक्ष्मी बाई ने आकर सेंधिया की सेना को अपनी ओर करके वहां बहुत ही भयङ्कर उपद्रव मचाया। महाराज जयाजी राव सेंधिया आगरे को चले गए। विद्रोहियों ने ऐसा सुअवसर पाकर इटावे की सरकारी काली फ़ौज को बलवा करने के लिए उकसाया। इटावे की फ़ौज ने यह जान कर कि ग्वालियर के महाराजा आगरे चले गये और ग्वालियर राज्य पर पेशवा ने अपना अधिकार जमा लिया, उन्होंने भी बलवा कर दिया। उस समय इटावा में नवीं काली पल्टन रहती थी। उसने पहले पहल सरकारी ख़ज़ाने को ही लूटना चाहा। परन्तु ह्यूम साहब सरकारी ख़ज़ाना पहले ही आगरे भेज चुके थे। इस कारण विद्रोहियों के कुछ हाथ न लगा। जब विद्रोहियों ने सरकारी ख़ज़ाना खाली पाया तब उन्होंने ह्यूम साहब को मार डालने की फ़िकर की। वे चारों ओर ह्यूम साहब को तलाश करने लगे। परन्तु ह्यूम साहब ने इटावा की प्रजा पर बहुत ही उपकार किये थे; इस कारण प्रजा इनको बहुत ही चाहती थी। अतएव इटावा के सारे लोगों ने मिल कर यह निश्चय किया कि कुछ ही हो परन्तु ह्यूम साहब की जान पर किसी तरह का धक्का न आने देंगे। उस समय इटावा विद्रोहियों से भरा था। ह्यूम साहब की जान जाने का

पग पग पर भय था परन्तु गयादीन नामक एक सिपाही को शहर के प्रतिष्ठित पुरुषों ने ह्यूम साहब को आगरे पहुंचा देने का काम सौंपा। गयादीन ने बड़ी खुशी के साथ भारत के प्यारे ह्यूम को आगरे पहुंचाने का भार अपने ऊपर लिया। गयादीन ने ह्यूम साहब को, मुसलमानी ढंग के वस्त्र पहनाए और अपने साथ एक और आदमी को ले लिया। गयादीन ने रास्ते में ह्यूम साहब को अपने और अपने साथी के बीच में कर लिया। इस प्रकार बड़ी चलाकी के साथ ह्यूम साहब ने इस संकट से छुटकारा पाया। भारतवासियों के साथ अच्छा सलूक करने और उनपर कृपा रखने से वे संकट पड़ने पर किस प्रकार सहायता पहुंचाते हैं यह बात ह्यूम साहब को खूब अच्छी तरह मालूम हो गई। उसी दिन से वे भारतवासियों पर अधिक प्रेम प्रगट करने लगे। इस बात को वे सदैव, आनन्द पूर्वक बड़ी खुशी के साथ, मौक़ा आनेपर, लोगों से कहते हैं। इसी उपकार का बदला चुकाने के लिए ही, शायद उन्होंने भारत की भलाई के लिए, नेशनल कांग्रेस की स्थापना की हो; ऐसी शंका का लोगों के हृदय में उत्पन्न होना एक सहज बात है। परन्तु नहीं, वे बड़े दयालु महात्मा पुरुष हैं; भारत में जिस समय विद्रोह हुआ उस समय भारत के विद्रोही लोग उनको मार डालना चाहते थे। बहुत से लोग उनकी जान के ख्वहां थे। चन्द आदमियों ने ही उनकी जान बचाई थी। यदि उनके दिल में भारत की भलाई का स्वाभाविक अंकुर न होता तो वे कभी नेशनल कांग्रेस की स्थापना का उद्योग न करते। महात्मा लोग दूसरे के दुःख को देखते हैं, उपकार अपकार की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। "विभुक्षितं किंन करोति पापम्" भूखा क्या पाप नहीं करता। यदि भारतवासियों से विभुक्षित दशा में कुछ पाप बन पड़े तो क्या वह क्षमा करने योग्य नहीं हैं? जब मनुष्य भूखा होता है, उस समय उसे कुछ नहीं सूझता। उसका विवेक जाता रहता है। यदि उस समय उससे कुछ पाप बन पड़े तो क्या उस पर दया नहीं दिखाना चाहिए? शायद ह्यूम साहब ने यही सब बातें सोच कर; भूखों के अपराध को क्षमा करके केवल दया के

विचार से कि किसी प्रकार भारतवासियों को रोटी मिले और वे सुखी रह कर ब्रिटिश सरकार को सदैव सहायता पहुंचाते रहें इसी उद्देश से, नेशनल कांग्रेस की स्थापना की है। हमारी समझ में तो यही आता है।

इटावे में जो विद्रोही लोग थे वह इटावे में लूट लाट कर दिल्ली की ओर चले गए। इस कारण इटावे में कुछ दिनों के लिए शान्ति हो गई और ह्यूम साहब फिर इटावा में आकर रहने लगे। परन्तु थोड़े दिनों बाद ही फिर इटावे में विद्रोह उठ खड़ा हुआ। यह देख कर ह्यूम साहब ने राजा लक्ष्मण सिंह और कुंवर ज़ोर सिंह के साथ क़रीब ३० स्त्री और बालकों को आगरे भेज दिया। ये स्त्री और बालक उन अंगरेज़ों के थे जो उस समय इटावे के ज़िले में कुछ न कुछ सरकारी काम काज करते थे। राजा लक्ष्मण सिंह उस समय इटावे में तहसीलदार थे। ह्यूम साहब की उनपर बड़ी कृपा थी। ह्यूम साहब के वे विश्वास पात्र थे। इसी तरह कुंवर ज़ोरसिंह का हाल था। प्रसंगवशात् हम यहां पर इन दोनों सज्जनों का थोड़ा सा हाल पाठकों के जानने के लिए देते हैं। राजा लक्ष्मण सिंह का नाम हिंदी भाषा जानने वालों से छिपा नहीं है। आपने कालिदास के मेघ दूत, शकुन्तला और रघुवंश का हिंदी अनुवाद करके बहुत कुछ कीर्ति लाभ की है। आपके द्वारा अनुवादित पुस्तकों को हिन्दी पढ़ने वाले लोग बड़ी ख़ुशी के साथ पढ़ते हैं। आपकी पुस्तकों की बड़े बड़े अंगरेज़ों ने भी तारीफ़ की है। आपका शकुन्तला नाटक सिवलसर्विस की परीक्षा देने वालों को पढ़ाया जाता है। इसी से आपकी पुस्तकों की उत्तमता का बहुत कुछ पता चल सकता है। आप आगरे के रहने वाले थे। बहुत दिनों तक आपने सरकारी सेवा की। बाद को डिप्टी कलेक्टर के पद से आपने पेन्शन ली। ग़दर में ह्यूम साहब को आपने बहुत सहायता पहुंचाई थी इसी कारण सरकार ने इन्हें बहुत कुछ पुरस्कार दिया। राजा [illegible] पदवी भी [illegible] ने ही ने उनको दी थी। यह पदवी [illegible] दी। केवल लक्ष्मण सिंह के नाम के [illegible] अब भी उन के दो पुत्र आगरे में मौजूद [illegible]

सिंह और छोटे का महेन्द्र सिंह। महेन्द्र सिंह संयुक्त प्रान्त में डिप्टी कलेक्टर हैं।

कुंअर ज़ोर सिंह—इटावे के पास परतापनेर चौहान क्षत्रियों का एक छोटा सा राज्य है। वे उस समय के महाराज के भाई थे। उन्हों ने ग़दर में सरकार अङ्गरेज़ी को बहुत कुछ सहायता पहुंचाई थी जिनके बदले में सरकार ने उनको कई एक गांव बतौर इनाम के दिए हैं। अब भी सरकार परतापनेर की इज़्ज़त करती है। परन्तु वर्तमान राजा साहब हुकम सिंह साहब का चाल चलन ठीक न होने के कारण सरकार ने राजा की पदवी उनसे छीन ली। अब वे सरकारी पत्र व्यवहार में ठाकुर कह कर लिखे जाते हैं। परन्तु सर्वसाधारण में अब भी वे राजा करके प्रसिद्ध हैं। सबलोग राजा के ख़िताब से ही उनका सम्बोधन करते हैं। ज़ोर सिंह के दो लड़के थे परन्तु दोनों का ही देहान्त हो गया। इन्हीं की कृपा से महाराजा तेज सिंह मैनपुरी वाले पकड़े गए थे। सुनते हैं महाराजा तेज सिंह विद्रोहियों में जाकर शामिल हो गए थे।

राजा लछमण सिंह और कुंवर ज़ोर सिंह ने अंगरेज़ों के बाल-बच्चों को बड़ी सावधानी के साथ आगरे पहुंचा दिया। यह उपकार ह्यूम साहब के ध्यान में बना है। बाल-बच्चे आगरे पहुंच जाने के बाद ह्यूम साहब भी आगरे को फिर चले गए। जब ग़दर बिलकुल शान्त हो गया तब ह्यूम साहब फिर इटावे आए। इटावे के ज़िले में उस समय पांच तहसीलें थीं। ह्यूम साहब ने हर एक तहसील में अपने विश्वास-पात्र आदमी नियत किए। ह्यूम साहब ने इटावा ज़िले का प्रबंध इस प्रकार उत्तम रीति से किया कि ग़दर करने वालों को इटावे ज़िले का एक भी सरकारी पैसा हाथ न लगा। ह्यूम साहब के सरल स्वभाव और प्रजा के साथ उत्तम व्यवहार करने के कारण उन्हें विद्रोहियों की सब ख़बरें समय पर मिलती थीं। विद्रोहियों का दल कहां पर क्या कर रहा है इस बात को वे अपने गुप्त चरों द्वारा जान कर विद्रोह का सारा समाचार सरकार को बराबर लिख कर भेज देते थे। इस से सरकार को बहुत कुछ सहायता मिली।

विद्रोह दमन करने के लिए ह्यूम साहब ने सरकार से ५०० पैदल, ३५० सवार और ८ तोपों की मंज़ूरी मांगी। सरकार ने फ़ौज भरती करने और तोपें देने की ख़ुशी से मंज़ूरी दी। यह सब फ़ौज और तोपें लेकर ह्यूम साहब ने हरचन्द्र पुर के पास विद्रोहियों को परास्त किया। इस एक ही लड़ाई में विद्रोही लोग तितर बितर हो गए और फिर किसी की हिम्मत इटावे ज़िले में उपद्रव मचाने की न पड़ी। इस का एक कारण यह भी है कि इटावे के विद्रोहियों को ग्वालियर से सहायता मिलने की आशा थी परन्तु ग्वालियर में सर ह्यूरोज़ साहब और ब्रिगेडियर जनरल नेपियर साहब ने आकर विद्रोहियों का नाश किया। ग्वालियर में विद्रोह दमन हो जाने के बाद चारों ओर बहुत जल्द शान्ति हो गई। ग़दर समाप्त हो जाने के ३ वर्ष बाद ह्यूम साहब सन् १८६१ में छुट्टी लेकर विलायत गए। वहां आपको एक बहुत अच्छी जगह मिलती थी परन्तु उसे आप ने स्वीकार न किया। छुट्टी ख़तम के होने बाद ही आप भारतवर्ष में फिर वापस आए। भारत में आने के दो वर्ष बाद आप निमक महसूल के कमिश्नर नियत हुए। निमक के महकमे में आपने बहुत कुछ सुधार किया। इतनी योग्यता और कार्य पटुता को देख कर लार्ड मेंटो ने इन्हें संयुक्त प्रान्त के महकमे ज़राअत का डाइरेक्टर बनाया। इस काम को भी ह्यूम साहब ने बड़ी योग्यता से किया। परन्तु कुछ दिनों बाद ख़र्च की तंगी की वजह से यह महकमा तोड़ दिया गया। इस के बाद सूती कपड़े पर महसूल बन्द करने का विचार सरकार में पेश हुआ। ह्यूम साहबने सरकार के इस विचार का खंडन बड़ी उक्ति युक्ति के साथ किया। इस पर विलायती सरकार ने इन पर एतराज़ किए। परन्तु लार्ड रिपन ने सरकार को इस प्रकार कह कर समझा दिया कि ह्यूम साहब बड़े योग्य, अनुभवी, सरकारी ख़ैर-ख़्वाह और मतलब के आदमी हैं। रिपन ने इतनाही ह्यूम साहब के साथ सलूक नहीं किया वरन् उस समय एक प्रान्त में लेफ़टिनेण्ट गवर्नरी की जगह ख़ाली होने वाली थी उस पर ह्यूम साहब को नियत करना चाहा। परन्तु ह्यूम साहब ने लाटगिरी से इनकार कर दिया! ह्यूम साहब ने

इतने बड़े ओहदे को क्यों नहीं स्वीकार किया इसकी यह वजह मालूम पड़ती है कि उन्होंने अपनी उमर का बाक़ी हिस्सा भारत का हित साधन करने के लिए अर्पण किया। नहीं तो कौन ऐसा होगा जो इतने बड़े ओहदे को इन्कार करके त्याग दे। परन्तु परोपकारी महात्मा पुरुष दूसरों के हित के लिए सब कुछ त्याग सकते हैं। दूसरों का दुःख दूर करने के सामने लाटगिरी उनके लिए क्या चीज़ थी! सन् १८८२ में उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ कर पेन्शन ली। तब से और अब तक आप बराबर भारत का हित साधन करने के लिए तन, मन, धन से उद्योग कर रहे हैं। आपही की कृपा से "इण्डियन नेशनल कांग्रेस" की बुनियाद पड़ी। अतएव आपको "भारतीय राष्ट्रीय सभा का पिता" कहने में किसी प्रकार की हानि नहीं है। कांग्रेस की उन्नति के लिए बीस पचीस हज़ार रुपया आप अपना स्वतः ख़र्च कर चुके हैं और समय आने पर आप और भी ख़र्च करने को तइयार हैं।

बहुत से अंगरेज़ लोग कांग्रेस से अप्रसन्न हैं। अतएव वे लोग आप से भी अप्रसन्न रहते हैं। परन्तु ह्यूम साहब दूसरों की भलाई के सामने, अपने जातिबांधवों की कुछ भी परवाह नहीं करते। वे निर्भय होकर भारत की भलाई का काम करते हैं। वे इण्डियन नेशनल कांग्रेस की जान हैं। यद्यपि वे आज कल कई वर्षों से भारत में नहीं हैं परन्तु अपने स्वदेश में बैठे हुए वे भारत के हित का चिन्तमन किया करते हैं। विलायत में कांग्रेस की एक कमेटी है वहां से "इण्डिया" नाम का एक अंगरेज़ी भाषा में साप्ताहिक पत्र भी निकलता है। उसी कमेटी में ह्यूम साहब आज कल काम करते हैं। समय पड़ने पर वे वहां विलायती सरकार को भारत के कल्याण की बातें सुझाया करते हैं। इस समय आपकी उमर क़रीब क़रीब ७६ वर्ष की है तौभी वे वहां भारत की भलाई के लिए बहुत कुछ परिश्रम करते हैं। भारतवासी उनके लिए जितनी कृतज्ञता प्रकाशित कर सकें उतनी थोड़ी ही है।

ह्यूम साहब को राजनैतिक विषय में ही ज्ञान हो ऐसा नहीं। खेती के काम में भी आपको पूरा पूरा ज्ञान है। जिस ज़माने में वे इटावे में

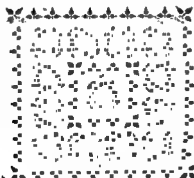
कलेक्टर थे उस समय की कई एक बातें उनकी जानने योग्य हैं। हमारा स्थान इटावे ज़िले में ही है। अतएव हमारे गांव के कई एक बूढ़े बूढ़े सज्जन बहुधा ह्यूम साहब की बातें कहा करते हैं। ह्यूम साहब की दयालुता के बारे में जब वे कुछ कहने लगते हैं तब उनके आंसू निकल आते हैं। वे ह्यूम साहब का नाम और उस ज़माने का उनका काम जानते हैं परन्तु ह्यूम साहब अब उनके देश के लिए क्या कर रहे हैं वे इस बात को बिलकुल नहीं जानते। हमने एक बार एक सज्जन से यों ही ह्यूम साहब की बातें निकलने पर कहा कि ह्यूम साहब अभी ज़िन्दा हैं और हिन्दोस्थान की भलाई के लिए वे कांग्रेस में काम करते हैं। यह जान कर उस वृद्ध को बड़ा आश्चर्य और आनन्द हुआ। उसने बड़े ताज्जुब से पूछा कि क्या हमारे ह्यूम साहब अब तक जीते हैं? वे कहां हैं? क्या हम उन्हें देख सकते हैं? जब हमने उसके सब सवालों का जवाब दे दिया तब उसने कहा कि ह्यूम साहब खेत बोने, हल चलाने और किस प्रकार नाज ज़्यादा पैदा हो सकता है इस बाबत जब वे गांव में आते थे तब बड़े धीरज के साथ हम सबों को समझाते थे।

जिस ज़माने में इटावे में ह्यूम साहब के नाम से 'ह्यूमगंज' बनता था उस समय ह्यूम साहब ने हमारे गांव के एक ठाकुर साहब से बुलाकर कहा कि आप भी इस गंज में दस पांच दुकानें बनवा लें इस में आप के लड़के तिजारत का काम कर सकेंगे, और आपको किराया मिलेगा। इस पर ठाकुर साहब ने कहा कि "साहब! यह काम बनियों का है। हमारी औलाद से दुकानदारी का काम न होगा। हम तो ज़मींदारी और सिपाहगिरीका काम कर सकते हैं। यही काम हमारी औलाद कर सकेगी। बनियों का काम उससे न होगा"। साहब ने फिर कहा "ठाकुर साहब! आप भूलते हैं, आपकी सिपाहगिरी और ज़िमींदारी की अब क़दर न रहेगी। जो तिजारत पेशा होंगे, विद्या पढ़कर तिजारत करेंगे, वे ही भविष्यत में सुखी रहेंगे; आप सोच समझ कर

की गुज़र न होगी"। ह्यूम साहब की बातों का ठाकुर साहब पर कुछ भी असर न हुआ। परन्तु ह्यूम साहब की उस समय की कही हुई सब बातें आज कल सच्ची हो रही हैं। ज़िमींदारी और सिपाहगिरी कोअब कोई नहीं पूछता। व्यापार की आज कल क़दर दिनों दिन बढ़ रही है।

इटावे में ह्यूम साहब का बनवाया हुआ एक स्कूल है जिसका नाम ह्यूम्स हाई स्कूल है। इस की इमारत ऐसी उत्तम है कि ह्यूम साहब के शिल्प विद्या जानने का इससे बहुत अच्छा परिचय मिलता है। इस स्कूल के बीच में एक हाल है। उसके बीच में एक डाट ऐसी विलक्षण लगी है कि जिसे देखकर बड़े बड़े इंजिनियर चक्कर खाते हैं। यह डाट अधर बिना किसी लकड़ी अथवा पत्थर के सहारे ज्यों की त्यों खड़ी है। सुनते हैं एक मर्तबा एक इंजिनियर ने उसे देख कर उस डाट के बीच में, दो खम्भे लगवा दिए और कहा कि बग़ैर किसी सहारे के इस का रहना बहुत ही बुरा है; किसी न किसी वक्त इससे लोगों को हानि पहुंचेगी। परन्तु जब यह बात ह्यूम साहब को मालूम हुई तब उन्होंने उन खम्भों को निकलवा डाला और कहा कि यह डाट इस क़दर मज़बूत है कि अब सब इमारत गिर जायगी तब कहीं यह गिरेगी। न मालूम यह बात कहां तक सच है। आप की बनवाई हुई इटावे में तहसीली भी देखने लायक़ है।

—:O:*:O:—



पण्डित अयोध्या नाथ।



दुर्बलार्थं बलं यस्य धर्मार्थंश्च परिग्रहः।
वाक् सत्यवचनार्थं च पिता तेनैव पुत्रवान्॥ *

संसार में ऐसे बहुत कम आदमी देखे जाते हैं जो दूसरों के लिए अथवा देश के लिए अपनी हानि उठा कर कुछ काम करें। परन्तु ऐसे आदमी पैदा हुए बिना मानव-जाति का कभी कल्याण नहीं होता। समय पड़ने पर ऐसे प्रतिभाशाली पुरुषों का, प्रादुर्भाव हुए बिना संसार का काम नहीं चलता। इसी कारण देश का अधः पतन होजाने के बाद धीरे धीरे ऐसे महा पुरुष पैदा होने लगते हैं जिनके द्वारा देश का हित होता है। वर्तमान समय में भी, इस गिरे हुए देश में, कई एक पुरुष पैदा हुए जिनके द्वारा भारत को बहुत कुछ लाभ पहुंचा। इन महापुरुषों में से एक तो हमारे प्रान्त के ही सज्जन महात्मा थे जिनका नाम पण्डित अयोध्या नाथ था। पण्डित अयोध्या नाथ का नाम इस देश में व्यापक हो रहा है। हर एक लिखा पढ़ा आदमी उनके नाम से परिचित है। परन्तु उनका वृहत चरित अब तक हिन्दी भाषा में छपा हुआ देखने में नहीं आया, यह बड़े लज्जा की बात है। भारत के अन्य प्रान्तों में जो बड़े बड़े पुरुष पैदा हुए हैं उनका चरित तो उन प्रान्तवासियों ने लिख कर प्रकाशित किया। बड़ी बड़ी पुस्तकें उनकी मातृभाषा में उनके चरित का परिचय देने के लिए मौजूद हैं। परन्तु पण्डित अयोध्या नाथ सरीखे देश-हितैषी पुरुष का चरित हिन्दी भाषा में मौजूद नहीं यह कितनी शरम

---

* जिसका बल दुर्बलों की रक्षा के लिए, गृहस्थी, धर्म का काम करने के लिए और बोलना सत्य वचन के लिए है ऐसे ही पुत्र को पाकर पिता पुत्रवान् कहा जा सकता है।

की बात है। इस में कृतज्ञता और कृतघ्नता का कितना कितना भाग है इसे पाठक स्वयं सोच लें।

पण्डित अयोध्या नाथ जिस प्रान्त में पैदा हुए; उसी प्रान्त वासी उनके चरित से अनभिज्ञ। उनके चरित सम्बन्धी बहुत सी बातों का पता लगाने पर भी नहीं लगता; परन्तु जहां तक हमें अन्य भाषा की पुस्तकों से उनके चरित सम्बन्धी हाल ज्ञात हुए उन्हें हम पाठकों के जानने के लिए नीचे देते हैं और हिन्दी के मर्मज्ञ रसिक लेखकों से हम सविनय प्रार्थना करते हैं कि वे पण्डित जी का बृहत् जीवन चरित लिख कर इस कलंक को दूर करें।

पंडित अयोध्या नाथ जी का जन्म ८ अप्रेल सन् १८४० इसवी को आगरा में हुआ। आप काश्मीरी ब्राह्मण थे। आपके पिता का नाम पण्डित केदारनाथ था। वे भी बड़े विद्वान् थे। पहले वे नव्वाब जाफ़र के यहां दीवान रहे। बाद को कई कारणों से नौकरी छोड़ दी और आगरे में ही रह कर कुछ व्यापार करने लगे। व्यापार में भी उनकी खूब उन्नति हुई। उनका ध्यान अपने प्रिय पुत्र अयोध्या-नाथ की शिक्षा की ओर अधिक था। वे इनकी शिक्षा की ओर अधिक ध्यान देते थे। पण्डित अयोध्यानाथ बचपन से ही बुद्धिमान और परिश्रमी थे। पढ़ने लिखने में इनका ख़ूब जी लगता था। फ़ारसी और अरबी पढ़ने का इन्हें बड़ा शौक़ था। अतएव इन दोनों भाषाओं में इन्होंने अच्छी निपुणता लाभ की थी। अंगरेज़ी भाषा को भी पण्डित जी ने जी लगा कर परिश्रम के साथ पढ़ा था। जिस समय वे कालिज में पढ़ते थे उसी समय से लोगों का ख़याल था कि किसी न किसी दिन ये बड़े आदमी होंगे। "पपुलर एज्यूकेशन" सम्बन्धी सन् १८६०, ६१ की सरकारी रिपोर्ट में, पण्डित जी की बाबत "होशियार और प्रसिद्ध होने लायक़ विद्यार्थी" लिखा है। इम्तिहान होने पर इतिहास और तत्वज्ञान के प्रश्नों का जो उत्तर पण्डित जी ने दिया उसकी बाबत पण्डित जी की असाधारण बुद्धिमानी और विचार शक्ति की सरकार ने अपनी रिपोर्ट में बड़ी तारीफ़ की है।

सन् १८६२ में, पण्डित जी ने कालिज छोड़ा। उस समय संयुक्त प्रान्त की राजधानी आगरा थी। और इसी कारण हाईकोर्ट की कचहरी भी आगरे में ही थी। पण्डित जी ने आगरे से ही हाईकोर्ट में वकालत करना शुरू किया। सब से पहला काम जो पंडित जी ने देश हित का किया वह 'विक्टोरिया कालिज, की स्थापना थी। इस काम में अपने बहुत परिश्रम किया था। जब संयुक्त प्रान्त की राजधानी आगरे से उठ कर प्रयाग गई तब पंडित जी भी आगरे से प्रयाग चले गए और अन्त तक वहीं रह।

सन् १८६९ में, आगरा कालेज में ला प्रोफ़ेसर की जगह ख़ाली हुई। बहुत से लायक़ लोगों ने इस जगह को पाने के लिए दरख़ास्तें दीं। परन्तु सरकार ने पंडित जी को क़ानून क़ायदे का उत्कृष्ट ज्ञाता जानकर इस जगह पर पंडित जी को नियत करके अपने न्याय का परिचय दिया।

प्रयाग जाने पर पंडित जी को वकालत से ख़ूब अच्छी आमदनी होने लगी। धन प्राप्त होने पर बहुधा मनुष्य अपने कर्तव्य कर्म को भूल जाते हैं। वे धन के मद से मतवाले हो कर दूसरों के सुख दुःख की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देते। विद्या से भी उनकी रुचि जाती रहती है। परन्तु धन पाकर पंडित जी ने अपने कर्तव्य कर्म और परोपकार व्रत को परित्याग नहीं किया। वे अपना वकालत का काम करके देशहित, समाज हित इत्यादि परोपकार के अनेक काम करते थे और अंगरेज़ी, फ़ारसी, अरबी, की पुस्तकें पढ़ कर अपने ज्ञान भाण्डार को भी बढ़ाया करते थे। सन् १८७९ में, आपने "इण्डियन हेरल्ड" नामक एक अंगरेज़ी दैनिक पत्र निकाला; जो तीन वर्ष तक बराबर चलता रहा। परन्तु इस पत्र को जैसी चाहिए वैसी सहायता लोगों से नहीं मिली। इस कारण सन् १८८२ में, यह बन्द हो गया! परन्तु पंडित जी को बिना एक दूसरा पत्र चलाए कल न पड़ी। उन्होंने सन् १८९० में, एक दूसरा पत्र "इण्डियन यूनियन" निकाला। इस पत्र को सर्वोत्तम बनाने के लिए पंडित जी ने बहुत ही परिश्रम किया। संयुक्त प्रान्त की लेजिसलेटिव कौंसिल के पंडित जी सभासद थे। कलकत्ता और इलाहाबाद इन दोनों यूनिवर्सिटियों के भी

वे फ़ेलो थे। पण्डित जी ने इन दोनों स्थानों पर बड़ी योग्यता से काम किया । पण्डित जी ने सब से उत्तम काम अपने जीवन में यह किया कि अपना तन, मन, धन, "राष्ट्रीय सभा" की उन्नति करने में लगा दिया । सुनते हैं कि जिस प्रकार इटली के प्रसिद्ध देशभक्त मज़ीनी को रोम के ऊपर प्रेम था वैसाही पण्डित जी को अपने देश के ऊपर पूर्ण भक्ति थी। यदि इस समय पण्डित जी सरीखे सच्चे दस बीस आदमी नेशनल-कांग्रेस के नेता निकल आवें तो देश का बहुत कुछ कल्याण हो सकता है। और राष्ट्रीय-सभा का स्वरूप बहुत कुछ बदल सकता है । सन् १८८५ में, जो पहली राष्ट्रीय-सभा बम्बई में हुई थी उसमें पण्डित जी नहीं गए थे और न दूसरी सभा जो कलकत्ते में हुई थी उसमें पण्डितजी मौजूद थे। तीसरी सभा जो मदरास में हुई थी उस में पण्डित जी नहीं शामिल हो सके थे; परन्तु चौथी बार जब संयुक्त प्रान्त में सभा करने की बारी आई तब पण्डित जी ने सब से आगे हो कर यह काम करके दिखलाया जिसे देख सब लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ ! चारों ओर पण्डित जी की वाह वाह होने लगी । इस समय पर ये स्वागत कमेटी के सभापति थे । पहिले ही दिन, सभा का काम आरम्भ होने पर, जो व्याख्यान पण्डित जी ने दिया वह बहुत ही उत्तम था । उसे सुन कर लोगों के हृदय पर बहुत अच्छा असर पड़ा । पण्डित जी की ही कृपा से इस राष्ट्रीय-सभा का परिचय विलायत वालों को हुआ । देशी और विदेशी विद्वानों को इसी दिन से इस सभा के साथ सहानुभूति पैदा हुई । हमारी समझ से तो यह कहने में भी कुछ हानि नहीं है कि इस सभा को "राष्ट्रीय-सभा" इस प्रकार सम्बोधन करने अथवा बतलाने का सौभाग्य उसी दिन से प्राप्त हुआ जिस दिन से पण्डित अयोध्या नाथ इस में शामिल हुए । जब से पण्डित जी इस सभा में शामिल हुए तब ही से इस सभा की दिनों दिन उन्नति होती गई !

सन् १८८८ में, राष्ट्रीय-सभा की चौथी बैठक प्रयाग में हुई। इस समय बड़े बड़े अधिकारियों ने अनेक प्रकार के विघ्न डाले। परन्तु पण्डित जी ने किसी बात की परवाह न करके निस्पृहता, साहस, दीर्घोद्योग,

और कठिन परिश्रम द्वारा सभा का काम इस प्रकार उत्तम रीति से कर के दिखला दिया कि विपक्षी लोग स्तम्भित और चकित होकर रह गए। बड़े लाट डफ़रिन, छोटे लाट कालविन सरीखे सरकारी अफ़सर और सरसैय्यद अहमद, राजा शिवप्रसाद और मुंशी नवलकिशोर सरीखे बड़े बड़े आदमियों के विरोध करने पर भी पंडित जी ने अपना कर्तव्य कर्म समझ कर किसी की भी परवाह न करके, शान्ति के साथ इस देश हित के काम को पूरा किया। सुनते हैं कि एक बार पंडित जी आगरे में कांग्रेस के लिए चन्दा इकट्ठा करने को गए थे। पंडित जी ने वहां एक सभा करके कांग्रेस के उद्देश्य बतला कर चन्दे के लिए अपील की। कांग्रेस के किसी एक विरोधी ने हँसी उड़ाने की ग़रज़ से, एक लड़के को एक पैसा देकर कहा कि तुम जाकर इस पैसे को पंडित जी के पास मेज़ पर रख आओ। लड़के ने वैसाही किया। पंडित जी इसके मतलब को समझ गए और खड़े होकर कहने लगे कि "मुझे आज से बढ़ कर ज़्यादा ख़ुशी अपने जीवन में और कभी नहीं हुई। इस बालक को इसकी मां ने यह एक पैसा आज मिठाई खाने को दिया होगा परन्तु उसने देश की दुर्दशा को जान और देशभक्ति में मग्न हो कर आज देश हित के लिए उस पैसे को अर्पण किया है। इस से अच्छा ख़ुशी का दिन और कौन हो सकता है? अब इस देश के बालकों को भी अपने देश हित के लिए इतना ध्यान और विचार है तो फिर देश के कल्याण होने में अब विलम्ब क्या है?" पंडित जी के इस भाषण को सुनकर, जिन सज्जन महात्मा ने यह काम हानि के लिए करवाया था वे बहुत ही लज्जित हुए; और चन्दा भी जितना अनुमान किया गया था उस से बहुत ज़्यादा आया। पंडित जी की गणना उन लोगों में नहीं थी जो चार दिन तक सभा मंडप में बड़े बड़े लम्बे व्याख्यान देकर साल भर तक चुप चाप बैठे रहते हैं। वे साल भर तक बराबर सभा के लिए काम करते रहते थे। देश में चारों ओर घूम कर सभा के लिए चन्दा इकट्ठा करते थे, सभा का उद्देश्य लोगों को समझाते, और उसमें शामिल होने का लोगों से अनुरोध करते थे।

सुनते हैं कि, जिस समय प्रयाग में सभा की बैठक हुई थी उस समय

सभा मंडप बनाने के लिए कोई जगह वहां नहीं मिलती थी। जब पंडित जी ने देखा कि, बहुत उद्योग करने पर भी कोई जगह नहीं मिलती तब उन्होंने अपना मकान खोद डालने और वहां पर मंडप बनाना निश्चय किया। परन्तु बाद को एक राजा साहब की कृपा से सभा मंडप के लिए एक मकान मिल गया। इसी पर से उनके देशाभिमान और देशभक्ति का पूरा परिचय मिलता है। उनके भाषण के विषय में, उस समय इंडियन-मिरर पत्र के सम्पादक ने जो वाक्य लिखे थे, उन्हें हम पाठकों के जानने के लिए नीचे देते हैं।

"पंडित जी की भाषण शैली बड़ी ही मधुर और स्पष्ट है। जैसा उनको विश्वास है वैसा ही वे कह कर लोगों को बतलाते भी हैं। समाज के सामने अपने मन का भाव साफ़ तौर पर बतलाने का गुण उनमें प्रशंसनीय है। पंडित अयोध्या नाथ के देशाभिमान की बाबत किसी प्रकार की शंका मन में लाना बड़ी भूल है। उनमें देशभक्ति का गुण सर्वोपरि है यह कहने में कोई हानि नहीं है। वे चाहें किसी छोटी सभा में बोलें अथवा किसी बड़ी सभा में परन्तु सुनने वालों के मन को चुम्बक पत्थर की तरह अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। बोलते समय अंगविक्षेप और हाव भाव बतलाने की क्रिया उनमें बहुत उत्तम है। कभी कभी तो बोलते समय अंगविक्षेप की मात्रा उनमें बहुत ही ज्यादा हो जाती है। परन्तु स्वदेशाभिमान, शुद्ध भाषा शैली और स्वदेश बांधवों के प्रति प्रेम, इन गुणों के आगे उनके अंगविक्षेप का दोष किसी के ध्यान में नहीं आता है।" राष्ट्रीय-सभा के जनरल सेक्रेटरी मिस्टर ए० ओ० ह्यूम जब विलायत जाने को तय्यार हुए तब सब लोगों को सभा का काम उत्तम प्रकार से चलने में नाना प्रकार की शंकायें उत्पन्न हुईं। क्योंकि ह्यूम साहब सरीखा उद्योगी, परिश्रमी और दृढ़ निश्चयी सेक्रेटरी सभा को मिलना कठिन था। परन्तु देश के भाग्य से, अथवा राष्ट्रीय-सभा के भाग्य से, ह्यूम साहब से भी अधिक गुणी पण्डित अयोध्यानाथ निकल आए। सब लोगों ने मिलकर राष्ट्रीय-सभा के ज्वाइंट जनरल सेक्रटरी की जयमाला आपके गले में पहना दी। इस देशहित के काम को

पण्डित जी ने किस प्रकार उत्तम रीति से किया इस बात को कांग्रेस के नेता लोग भली भांति जानते हैं। सब लोगों को इस बात का निश्चय हो गया कि ह्यूम साहब के बाद पण्डित जी जनरल सेक्रेटरी का काम बहुत ही उत्तम रीति से चला सकेंगे। परन्तु किसी को क्या मालूम था कि हमारे युवा पण्डित जी वृद्ध ह्यूम साहब से पहले ही परलोक का अक्षय सुख पाने के लिए हम लोगों से शीघ्र विदा हो जांयगे॥

पंडित अयोध्या नाथ ने जो अलौकिक देश सेवा की उसके बदले में उन्हें राष्ट्रीय-सभा का सभापति बनाया जावे इस बाबत चारों ओर से आवाज़ें सुनाई पड़ने लगीं। इसी के अनुसार यह निश्चय हुआ कि नागपुर में जो राष्ट्रीय-सभा हो उसके सभापति पंडित जी बनाये जावें। परन्तु बम्बई और बंगाल प्रदेश को दो तीन बार यह मान प्राप्त हो चुका था; मदरास प्रान्तवासी अब तक उस मान से वंचित थे। अतएव नागपुर में किसी मदरासी सज्जन को सभापति होने का सौभाग्य प्राप्त हो और उसके बाद संयुक्त प्रान्तवासी कोई सज्जन सभापति बनाया जाय यह प्रस्ताव प्रबंध कारिणी सभा ने पेश किया। इस प्रस्ताव का सब से पहले पंडित अयोध्यानाथ ने अनुमोदन किया जिसके कारण श्रीमान् आनन्द-चार्लू नागपुर की सभा के सभापति बनाए गए। चार्लू महाशय ने जो सभा में वक्तृता दी उसमें उन्होंने स्पष्ट कहा था कि "श्रीयुत पंडित अयोध्यानाथ मदरासी नहीं हैं परन्तु आज के दिन जो यह मान इन्हों ने मदरास को दिया यह बड़ी ही उदारता की बात है। यदि यह ऐसा न करते तो हम यह बात साफ़ साफ़ कह सकते हैं कि पंडित जी सरीखे साहसी, देशहितैषी और राष्ट्रिय-सभा के नेता के सामने हमारी एक भी न चलती और न हम उनके मुक़ाबले में ठहर सकते थे। आज यह मान उन्हीं को प्राप्त हुआ है इस में कुछ भी शंका नहीं है।"

नागपूर की राष्ट्रीय सभा का काम समाप्त हो जाने पर पंडित जी प्रयाग वापस आए। रास्ते में ही उन्हें ज्वर हो आया। प्रयाग में आकर उन्होंने बहुत दवा दारू की परन्तु किसी से आराम न हुआ। अन्त में ११ जनवरी सन् १८९२ ईसवी को, वे इस लोक को छोड़ परलोक

को सिधार गए !! उनके मरने परदेश में चारों ओर हाहाकार फैल गया। भारत की राष्ट्रीय-सभा का स्तम्भ, आधार, भारत का उज्ज्वलतारा, देश का मित्र, देशाभिमान की एक मात्र मूर्ति और साहस, उद्योग इत्यादि गुणों की खानि, पण्डित अयोध्यानाथ इस प्रकार संसार से उठ गए। भारत ने अपना एक अमूल्य रत्न खो दिया। भारत सरकार के हाथ से उसका एक अच्छा सलाहकार चला गया। कलकत्ता और प्रयाग विश्वविद्यालय का एक सर्वोत्तम सेनेटर जाता रहा और संयुक्त प्रान्त की राजकीय-सभा का एक उत्तम मौतक पण्डित स्वर्गधाम सिधार गया !!

पण्डित जी के मरने पर प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस चेंसलर साहब ने कनवोकेशन के समय जो व्याख्यान दिया उसमें पण्डित जी की बाबत उन्होंने यह कहा था कि "वे अपनी इस सभा में हमेशा हाज़िर रहते थे। उनका शिक्षा सम्बन्धी बातों पर अधिक ध्यान था; इतना ही नहीं, वरन् उनका ज्ञान और विचार इस बाबत बहुत ही बढ़ा चढ़ा था। उन में अलौकिक बुद्धि का प्रकाश था और उनके गुण बखान करने योग्य हैं।" इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज श्रीमान् जस्टिस नाक्स ने पंडित जी की शव पर डालने के लिए फूलों का हार भेजा था। हाईकोर्ट की भरी कचहरी के सम्मुख चीफ़ जस्टिस साहब ने पण्डित जी की बाबत यह कहा था कि "पंडित अयोध्यानाथ के कथन को हम हमेशा ध्यान से सुनते थे; और उनके कथन से हमको क़ानून का बहुत सा ज्ञान प्राप्त होता था।" चीफ़ जस्टिस साहब इस कथन से पंडित जी की योग्यता और सरकारी मान का बहुत कुछ परिचय मिलता है।

पंडित जी के मरने पर एक कविने बहुत ही ठीक कहा था :—

"तुम तो सिधारे परलोकहिं अयोध्यानाथ
भारत प्रजा को प्रतिपाल कौन करि है ?"

—:○:#इति#:○:—

को सिधार गए ॥ उनके मरने परदेश में चारों ओर हाहाकार फैल गया। भारत की राष्ट्रीय-सभा का स्तम्भ, आधार, भारत का उज्ज्वलतारा, देश का मित्र, देशाभिमान की एक मात्र मूर्ति और साहस, उद्योग इत्यादि गुणों की खानि, पण्डित अयोध्यानाथ इस असार संसार से उठ गए। भारत ने अपना एक अमूल्य रत्न खो दिया। भारतसरकार के हाथ से उसका एक अच्छा सलाहकार चला गया। कलकत्ता और प्रयाग विश्वविद्यालय का एक सर्वोत्तम सेनेटर जाता रहा और संयुक्त प्रान्त की राजकीय-सभा का एक उत्तम मेम्बर पण्डित स्वर्गधाम सिधार गया॥

पण्डित जी के मरने पर प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस चैंसलर साहब ने कनवोकेशन के समय जो व्याख्यान दिया उसमें पण्डित जी की बाबत उन्होंने यह कहा था कि "वे अपनी इस सभा में हमेशा हाज़िर रहते थे। उनका शिक्षा सम्बन्धी बातों पर अधिक ध्यान था; इतना ही नहीं, वरन् उनका ज्ञान और विचार इस बाबत बहुत ही बढ़ा चढ़ा था। उन में अलौकिक बुद्धि का प्रकाश था और उनके गुण बखान करने योग्य हैं।" इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज श्रीमान् जस्टिस नाक्स ने पंडित जी की शव पर डालने के लिए फूलों का हार भेजा था। हाईकोर्ट की भरी कचहरी के सम्मुख चीफ़ जस्टिस साहब ने पण्डित जी की बाबत यह कहा था कि "पंडित अयोध्यानाथ के कथन को हम हमेशा ध्यान से सुनते थे; और उनके कथन से हमको क़ानून का बहुत सा ज्ञान प्राप्त होता था।" सब चीफ़ जस्टिस साहब इस कथन से पंडित जी की योग्यता और सरकारी मान का बहुत कुछ परिचय मिलता है।

पंडित जी के मरने पर एक कविने बहुत ही ठीक कहा था :—

"तुम तो सिधारे परलोकहिं अयोध्यानाथ
भारत प्रजा को प्रतिपाल कौन करि है?"

—:○:*इति*:○:—

पण्डित जी ने किस प्रकार उत्तम रीति से किया इस बात को कांग्रेस के नेता लोग भली भांति जानते हैं। सब लोगों को इस बात का निश्चय हो गया कि ह्यूम साहब के बाद पण्डित जी जनरल सेक्रेटरी का काम बहुत ही उत्तम रीति से चला सकेंगे। परन्तु किसी को क्या मालूम था कि हमारे युवा पण्डित जी वृद्ध ह्यूम साहब से पहले ही परलोक का अक्षय सुख पाने के लिए हम लोगों से शीघ्र विदा हो जांयगे !!

पंडित अयोध्या नाथ ने जो अलौकिक देश सेवा की उसके बदले में उन्हें राष्ट्रीय-सभा का सभापति बनाया जावे इस बाबत चारों ओर से आवाज़ें सुनाई पड़ने लगीं। इसी के अनुसार यह निश्चय हुआ कि नागपुर में जो राष्ट्रीय-सभा हो उसके सभापति पंडित जी बनाये जावें। परन्तु बम्बई और बंगाल प्रदेश को दो तीन बार यह मान प्राप्त हो चुका था; मदरास प्रान्तवासी अब तक उस मान से वंचित थे। अतएव नागपुर में किसी मदरासी सज्जन को सभापति होने का सौभाग्य प्राप्त हो और उसके बाद संयुक्त प्रान्तवासी कोई सज्जन सभापति बनाया जाय यह प्रस्ताव प्रबंध कारिणी सभा ने पेश किया। इस प्रस्ताव का सब से पहले पंडित अयोध्यानाथ ने अनुमोदन किया जिसके कारण श्रीमान् आनन्द-चार्लू नागपुर की सभा के सभापति बनाए गए। चार्लू महाशय ने जो सभा में वक्तृता दी उसमें उन्होंने स्पष्ट कहा था कि "श्रीयुत पंडित अयोध्यानाथ मदरासी नहीं हैं परन्तु आज के दिन जो यह मान इन्हों ने मदरास को दिया यह बड़ी ही उदारता की बात है। यदि यह ऐसा न करते तो हम यह बात साफ़ साफ़ कह सकते हैं कि पंडित जी सरीखे साहसी, देशहितैषी और राष्ट्रिय-सभा के नेता के सामने हमारी एक भी न चलती और न हम उनके मुक़ाबले में ठहर सकते थे। आज यह मान उन्हीं को प्राप्त हुआ है इस में कुछ भी शंका नहीं है !"

नागपूर की राष्ट्रीय सभा का काम समाप्त हो जाने पर पंडित जी प्रयाग वापस आए। रास्ते में ही उन्हें ज्वर हो आया। प्रयाग में आकर उन्होंने बहुत दवा दारू की परन्तु किसी से आराम न हुआ। अन्त में ११ जनवरी सन् १८९२ ईसवी को, वे इस लोक को छोड़ परलोक

को सिधार गए ॥ उनके मरने परदेश में चारों ओर हाहाकार फैल गया। भारत की राष्ट्रीय-सभा का स्तम्भ, आधार, भारत का उज्ज्वलतारा, देश का मित्र, देशाभिमान की एक मात्र मूर्ति और साहस, उद्योग इत्यादि गुणों की खानि, पण्डित अयोध्यानाथ इस असार संसार से उठ गए। भारत ने अपना एक अमूल्य रत्न खो दिया। भारतसरकार के हाथ से उसका एक अच्छा सलाहकार चला गया। कलकत्ता और प्रयाग विश्वविद्यालय का एक सर्वोत्तम सेनेटर जाता रहा और संयुक्त प्रान्त की राजकीय-सभा का एक उत्तम नीतज्ञ पण्डित स्वर्गधाम सिधार गया॥

पण्डित जी के मरने पर प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस चैंसलर साहब ने कनवोकेशन के समय जो व्याख्यान दिया उसमें पण्डित जी की बाबत उन्होंने यह कहा था कि "वे अपनी इस सभा में हमेशा हाज़िर रहते थे। उनका शिक्षा सम्बन्धी बातों पर अधिक ध्यान था; इतना ही नहीं,वरन् उनका ज्ञान और विचार इस बाबत बहुत ही बढ़ा चढ़ा था। उन में अलौकिक बुद्धि का प्रकाश था और उनके गुण बखान करने योग्य हैं।" इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज श्रीमान् जस्टिस नाक्स ने पंडित,जी की शव पर डालने के लिए फूलों का हार भेजा था। हाईकोर्ट, की भरी कचहरी के सम्मुख चीफ़ जस्टिस साहब ने पण्डित जी की बाबत यह कहा था कि "पंडित अयोध्यानाथ के कथन को हम हमेशा ध्यान से सुनते थे; और उनके कथन से हमको क़ानून का बहुत सा ज्ञान प्राप्त होता था।" सब चीफ़ जस्टिस साहब इस कथन से पंडित जी की योग्यता और सरकारी मान का बहुत कुछ परिचय मिलता है।

पंडित जी के मरने पर एक कविने बहुत ही ठीक कहा था :—

"तुम तो सिधारे परलोकहिं अयोध्यानाथ
भारत प्रजा को प्रतिपाल कौन करि है ?"

—:○:*इति*:○:—